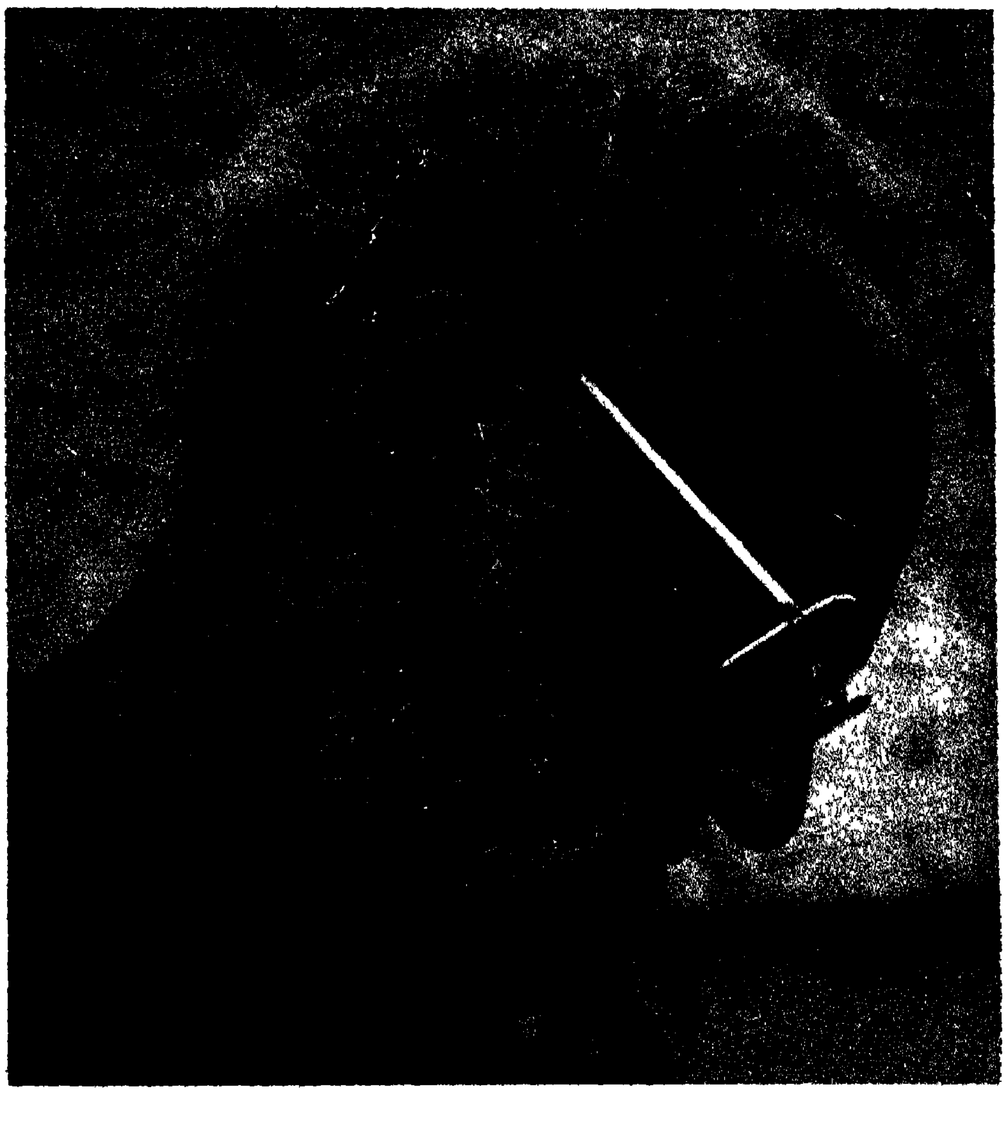
प्राणिमात्र को सन्मार्ग के प्रेरक

आचार्यश्री विद्यानन्दजी

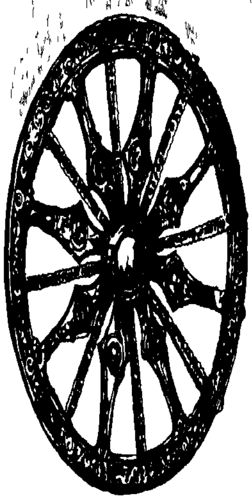
के तपस्वी जीवन की चित्रमय झांकी



प्राणिमात्र को सन्मार्ग के प्रेरक

आचार्य श्री विद्यानन्द जी

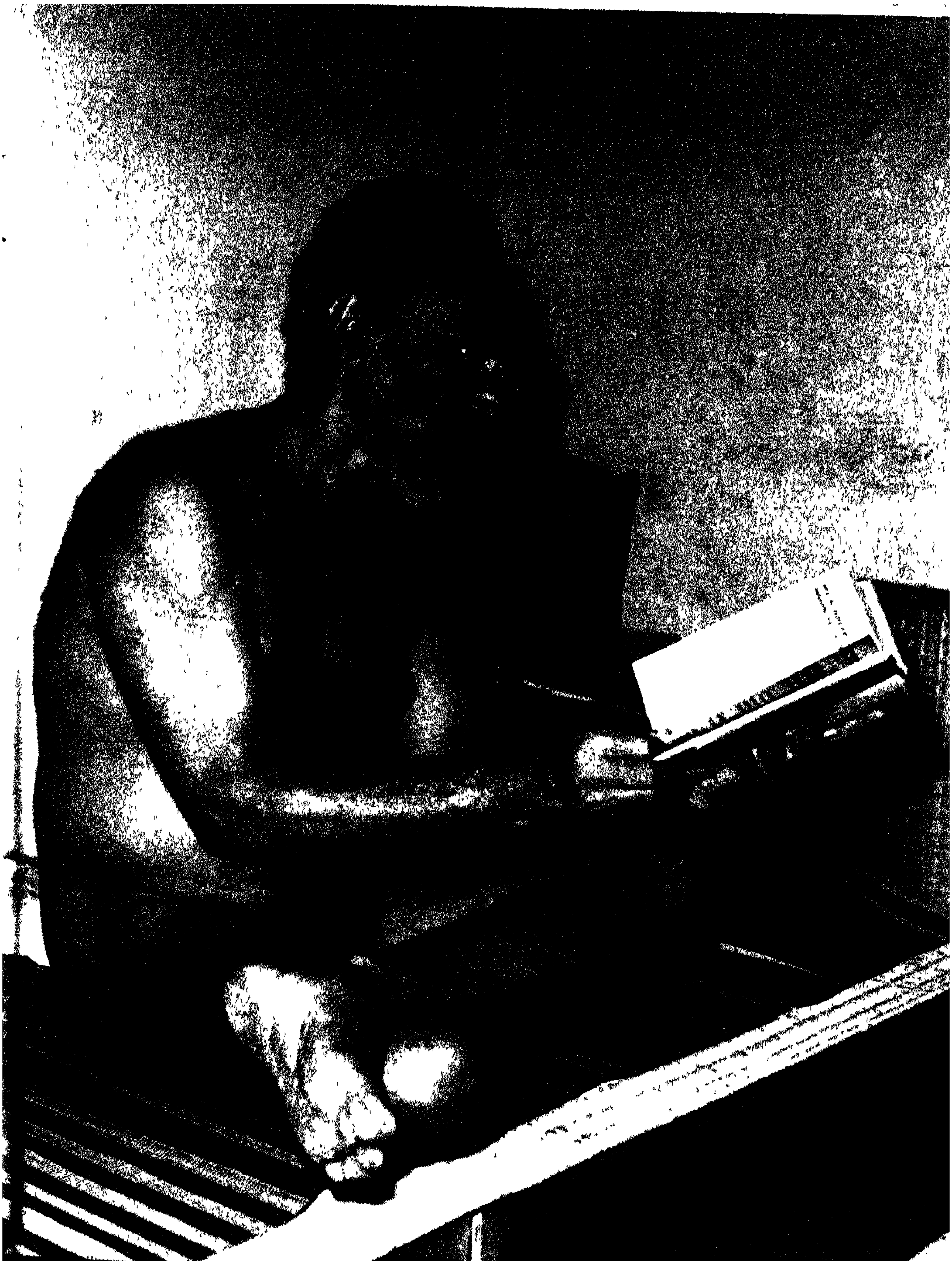
के तपस्वी जीवन की चित्रमय झांकी



प्राणिमात्र को सन्मार्ग के प्रेरक

के तपस्वी जीवन की चित्रमय झांकी

प्रकाशक :
पूज्य आचार्य श्री विद्यानन्द जी
वर्षा योग समिति,
7ए, राजपुर रोड, दिल्ली-110054



'अत्ताचेव अहिसा'

परम पुरुष की पावन धारा

आचार्यश्री विद्यानन्दजी से जैन समाज भली भांति परिचित है। जैन समाज ही क्यो, अन्य समाज भी उनके प्रति गहरी आत्मीयता रखते हैं। इसका कारण यह है कि वह उन महान सतो मे से है, जो किसी धर्म विशेष के होते हुए भी सभी धर्मों को आदर की दृष्टि से देखते है।

आचार्यश्री ने जैन धर्म, दर्शन, साहित्य, इतिहास आदि का गहन अध्ययन किया है, किन्तु उन्होने सकीर्ण साम्प्रदायिक मान्यताओं से अपने को ऊपर रखा है। उनके उपदेश सार्वजनीन होने हे। इसी से उनकी सभाओ मे केवल जैन समाज के भाई-बहन ही नहीं आते, अन्य धर्मावलम्बी भी बडी सख्या मे उपस्थित रहते है। आचार्यश्री जो कुछ कहते है, उसमे उन्हे अपने-अपने धर्मों का सारतत्व दिखाई देता है।

जैनाचार्य का जीवन बडा कठोर है, वे रात-दिन साधना मे लीन रहते हैं। आचार्यश्री की दिनचर्या देखकर रोमाच हो आता है। प्रात काल से लेकर रात्रि को सोने के समय तक वह बराबर आत्म-कल्याण के कार्यों मे सलग्न रहते है। प्रमाद को वह अपने पास फटकने भी नही देते।

जैन धर्म मे आचार्यश्री की अटूट आस्था है। वह नित्य उत्तमोत्तम ग्रन्थो के स्वाध्याय मे सलग्न रहते है और उनमे जो भी सार उनको प्राप्त होता है, उसे मुक्तभाव से सब के कल्याण के लिए वितरित करते रहते है।

आज ससार मे जो विकृतिया फैली हुई है, उनकी मान्यता है कि जैन धर्म में उन्हें दूर करने की क्षमता है। वह तो यहा तक कहते है कि जैन धर्म ही सम्पूर्ण विश्व का धर्म हो सकता है। भगवान महावीर का 'जीओ और जीने दो' का सिद्धान्त, अनेकान्तवाद, अहिंसा, अपरिग्रह, आदि इतने महत्वपूर्ण है कि उनके द्वारा सारी राजनीतिक तथा अन्य समस्याओं को सुलझाया जा सकता है।

धर्म-पुरुष होते हुए भी आचार्यश्री सामाजिक तथा राष्ट्रीय प्रश्नो मे बडी अभिरुचि रखते है। वह अध-विश्वासों, सडे-गले रीति-रिवाजो तथा पारस्परिक द्वेष-विद्वेष से समाज को मुक्त रखने के अभिलाषी हैं। दहेज को वह एक बडी सामाजिक बुराई मानते हैं। अनेक अवसरो पर उन्होंने अपनी आवाज उसके विरुद्ध ऊंची की है। समाज में सत्याचरण की स्थापना हो, सब एक-दूसरे के दु ख-दर्द मे काम आवे और 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के सिद्धान्त पर आस्था रखकर एक विशाल परिवार की रचना करे, यह उनकी आतरिक भावना है।

आचार्यश्री के विचारो मे किसी प्रकार की उलझन नही है। अत जब वह प्रवचन करते है तब शब्दो का जाल नहीं फैलाते। धर्म-अध्यात्म की ऐसी धारा प्रवाहित करते है, जिसमे अवगाहन करके आबाल-वृद्ध, नर-नारी बडी शीतलता अनुभव करते है।

आचार्यश्री ने अपने मन, वचन और कर्म से भारतीय लोकजीवन को परिष्कृत तथा समृद्ध करने का अनर्निश प्रयास किया है। आज भी कर रहे है। वह मुख्य रूप से तीन बातो पर जोर देते है। उनमे पहली है अहिसा। भगवान महावीर ने कहा था, 'अहिसा परमोधर्म ,' (अहिसा परम धर्म है।) उन्होने यह भी कहा था, 'अहिसा वीरस्य भूषणम्,' अहिसा वीरो का भूषण है।

वर्तमान युग मे गाधीजी ने अहिसा की तेजस्विता को प्रकट किया और उसका परिणाम हमने देखा। आज उसी अहिसा को बलवती करने की आवश्यकता है।

भौतिकवादी समाज-व्यवस्था ने पारस्परिक ईर्ष्या-द्वेष, लडाई-झगडे आदि को जन्म और बढावा दिया है। प्रत्येक व्यक्ति को सम्मानपूर्वक जीने का अधिकार है। उसके लिए उसे पर्याप्त साधन और सुविधाए मिलनी ही चाहिए। यह तभी सम्भव होगा जब कि लोगो के हृदयो मे एक-दूसरे के प्रति वात्सल्य उत्पन्न होगा, करुणा जाग्रत होगी। आचार्यश्री निरतर प्रमोद और करुणा पर बल देते है। शास्त्रों से दृष्टात और महापुरुषो के जीवन-प्रसग देकर समझाते है कि लोगो के दिलो मे जितना प्रेम और करुणा होगी उतने ही वे सुखी होगे, समाज सुखी होगा, ससार सुखी होगा।

स्याद्वाद और अनेकान्तवाद के सबध मे आचार्यश्री का मानना है कि वर्तमान काल मे सघर्ष का मुख्य कारण माताग्रह है। हम मानते है कि हम जो कहते है, वही सत्य है। दूसरा कहता है कि वह जो कहता है, वही सत्य है। इस प्रकार आपस मे टकराहट होती है। अनेकान्तवाद इस टकराहट को दूर करने का रास्ता सुझाता है। वह बताता है कि प्रत्येक वस्तु के विभिन्न पहलू होते हैं। हम जो कहते है, वह एक पहलू की दृष्टि से सही होता है। दूसरा दूसरे पहलू से जो कहता है, वह भी सही होता है। यदि हम इस प्रकार की दृष्टि रखकर दूसरे के मत को भी आदर दे तो लडाई-झगडे हो ही नही।

इस प्रकार आचार्यश्री की भावना रहती है

'सर्वेऽत्र सुखिन संतु सर्वे संतु निरामया ।' (ससार के सारे प्राणी सुखी हो, नीरोग हो)।

बहुत समय से इस कमी का अनुभव किया जा रहा था कि एक ऐसी चित्रावली का प्रकाशन किया जाय, जिसके द्वारा लोक-कल्याण की भावना से प्रेरित होकर कठोर साधना मे लीन आचार्यश्री विद्यानन्दजी के यशस्वी जीवन और महान कृतित्व का परिचय प्रभावशाली रूप मे लोगों को, विशेषकर जन-सामान्य को, हो जाय। इसी बात को ध्यान में रख कर 'आचार्यश्री

विद्यानन्दजी वर्षायोग समिति' ने निश्चय किया कि इस लोकोपयोगी कार्य को हाथ में लिया जाय और इसमे आचार्यश्री के बालकाल से लेकर अबतक की जीवन-झांकी चित्रों में प्रस्तुत की जाय, साथ ही उनके समस्त वर्षायोगों का विवरण और उनके चुने हुए विचार दिये जायं।

यह कार्य उतना आसान नहीं था। पहली बात तो यह कि इसमें आचार्यश्री की न तो कोई रुचि थी और न उनका तनिक भी सहयोग था। दूसरी बात यह थी कि आचार्यश्री का क्षेत्र सम्पूर्ण देश रहा है। वह सतत् घूमते रहते है। अत स्थान-स्थान पर बिखरी सामग्री का सग्रह करना बडा कठिन कार्य था।

फिर भी यह एक लघु प्रयास किया गया है। हमे प्रसन्नता है कि इतने कम समय मे इतने अधिक चित्र और अनमोल बोल इक्ट्ठे दे पा रहे है।

आचार्यश्री के बारे में समय-समय पर बराबर कुछ-न-कुछ छपता रहता है, उनके प्रवचनो तथा लेखो के भी संग्रह प्रकाशित हुए है। लेकिन बिना अतिशयोक्ति के कहा जा सकता है कि इस प्रकार का विधिवत् और व्यवस्थित प्रकाशन पहले कभी नहीं हुआ। इसमे पाठको को आचार्यश्री के बचपन से लेकर अबतक के तीन सौ चित्र देखने को मिलेगे ९ गुणा ११ इची साइज की ढाई सौ पृष्ठो की कलात्मक रूप मे आर्ट पेपर पर छपी, कपडे की पूरी पक्की जिल्द रखी हे, जिससे इस प्रकाशन को ऐतिहासिकता के साथ स्थायी रूप मिल सके।

इस चित्रावली को देखकर पता चलता है कि आचार्यश्री ने अपने जीवन मे कितनी दुर्द्धर्ष साधना की है। विभिन्न अवसरो के इन चित्रो मे एक ऐसे तपस्वी जीवन की झाकी मिलती है, जिसका प्रत्येक श्वास लोक-मगल के लिए समर्पित रहा है। वर्तमान युग मे व्यक्तियो का जीवन इतना व्यस्त है कि उनके पास मोटे-मोटे ग्रथ पढने का न तो समय है और न वृत्ति ही। इससे चित्रो का महत्व विशेष रूप से बढ गया है। साथ ही उनका प्रभाव भी अपेक्षाकृत अधिक पडता है।

इस चित्रावली को इतना व्यापक इसलिए भी बनाया गया है कि सभी छोटे-बडे, शिक्षित-अशिक्षित इन चित्रो को देखे और इनसे प्रेरणा प्राप्त करे।

त्यागी, तपस्वी पुरुषो का जीवन तीर्थों के समान होता है। उनके दर्शन से तीर्थ-दर्शन का लाभ मिलता है। आचार्यश्री के चित्रों के इस सग्रह के अधिकाश चित्र इस बात का स्मरण दिलाते है कि मानव-जीवन का एक ऊँचा आदर्श है और उस आदर्श की ओर निष्ठा के साथ तथा दृढता-पूर्वक बढने से जीवन धन्य और कृतार्थ बनता है।

यह चित्रावली अपूर्ण रह जाती, यदि इसके साथ आचार्यश्री के विचारो का समावेश न किया होता। अत हमने आचार्यश्री के विचारो के अनत सागर मे से कुछ मणिया इस सग्रह के लिए चुनी। आचार्यश्री ने अनेक आध्यात्मिक विषयो पर सारगर्भित लेख लिखे है। मनुष्य को कर्त्तव्यनिष्ठा का बोध कराने, मानव-जीवन का ध्येय स्पष्ट करने और आत्मा पर से कषायो का मैल हटाने के लिए वह अपनी सशक्त लेखनी का प्रयोग बराबर करते रहते हैं।

इस चित्रावली के साथ-साथ आचार्यश्री के विहार-स्थलो की तालिका और प्रवचनो ने 'सोने मे सुहागा' की कहावत को चरितार्थ किया है। इन प्रवचनो-चित्रों से विविध रगो के पुष्पो का एक ऐसा गुलदस्ता बन गया है, जिसकी महक दूर-दूर तक फैलेगी और सभी वर्गों के बाल-वृद्ध और नर-नारियो को न केवल आनदित करेगी, अपितु उन्हे सात्विक जीवन का मार्ग भी दिखावेगी।

संक्षेप मे, हम कह सकते है कि यह चित्रावली आचार्यश्री के कठोर तथा प्रेरणादायक जीवन के साथ-साथ भारत के अनेक दुर्गम स्थानो की झाकी प्रस्तुत करती है। इसके अतिरिक्त यह ज्ञान-गंगा की शीतलधारा मे अवगाहन करने का भी सौभाग्य प्रदान करती है।

कहने की आवश्यकता नही कि आचार्यश्री के विचार अत्यन्त व्यापक है और उनका धर्म किसी भी सम्प्रदाय की संकीर्ण परिधि मे आबद्ध नहीं है। वह युग-पुरुष है। जीवन भर वह समाज को भर-भर हाथों देते ही रहे है। उनके उपकार से उऋण नही हुआ जा सकता। यह प्रकाशन कृतज्ञता-ज्ञापन का एक अत्यल्प तथा विनम्र प्रयास है।

इस सग्रह की तैयारी मे जिन्होने हमे सहयोग प्रदान किया है, उनका शब्दो मे आभार मानना धृष्टता होगी। यह एक ऐसा महान अनुष्ठान है, जिसमें सबको हाथ बटाना ही चाहिए था। वस्तुत सबके सहयोग के बिना यह कार्य कदापि सम्भव नही हो सकता था।

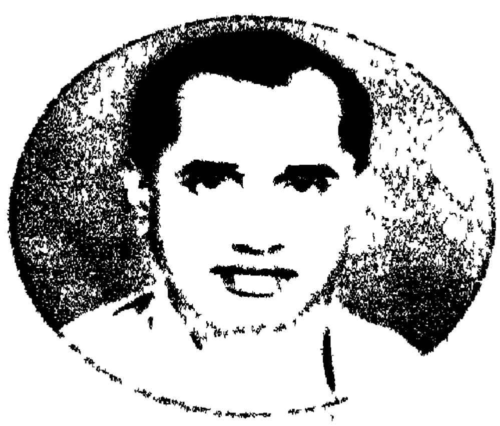
हमे पूरा विश्वास है कि समाज का प्रत्येक वर्ग इससे भरपूर प्रेरणा प्राप्त करेगा। यदि समाज इस स्थायी तथा ऐतिहासिक सग्रह का मनोयोगपूर्वक अध्ययन करके इससे शिक्षा ग्रहण कर सका तो हम अपने प्रयास को सफल समझेगे।



साधना पथ
अमृत वचन



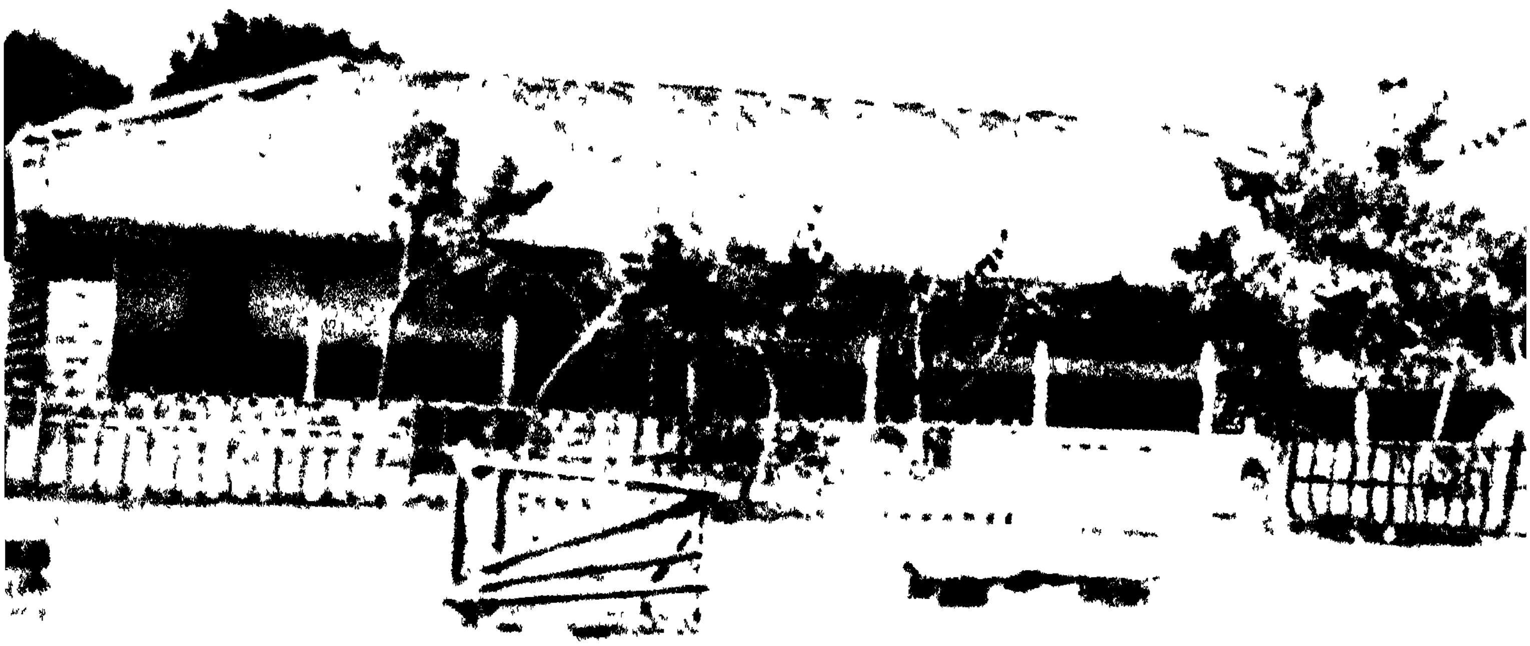
1

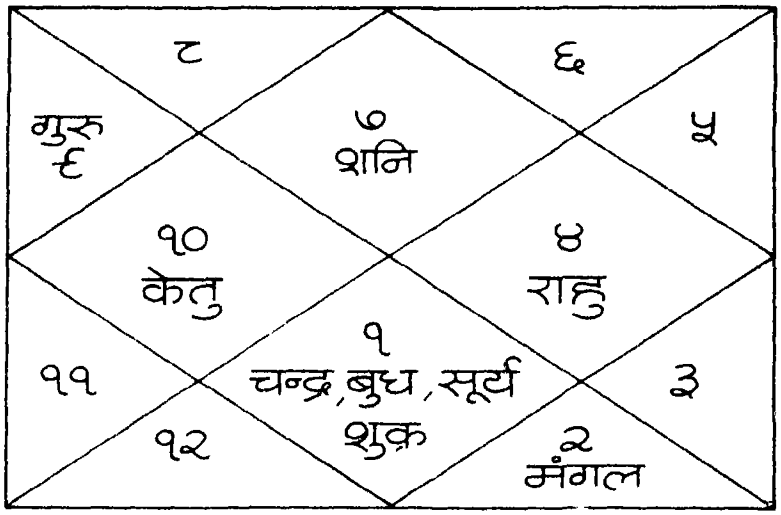




3

4




८
६
गुरु
९
७
शनि
५
१०
केतु
४
राहु
१
११
चन्द्र, बुध, सूर्य
३
१२
शुक्र
२
मंगल







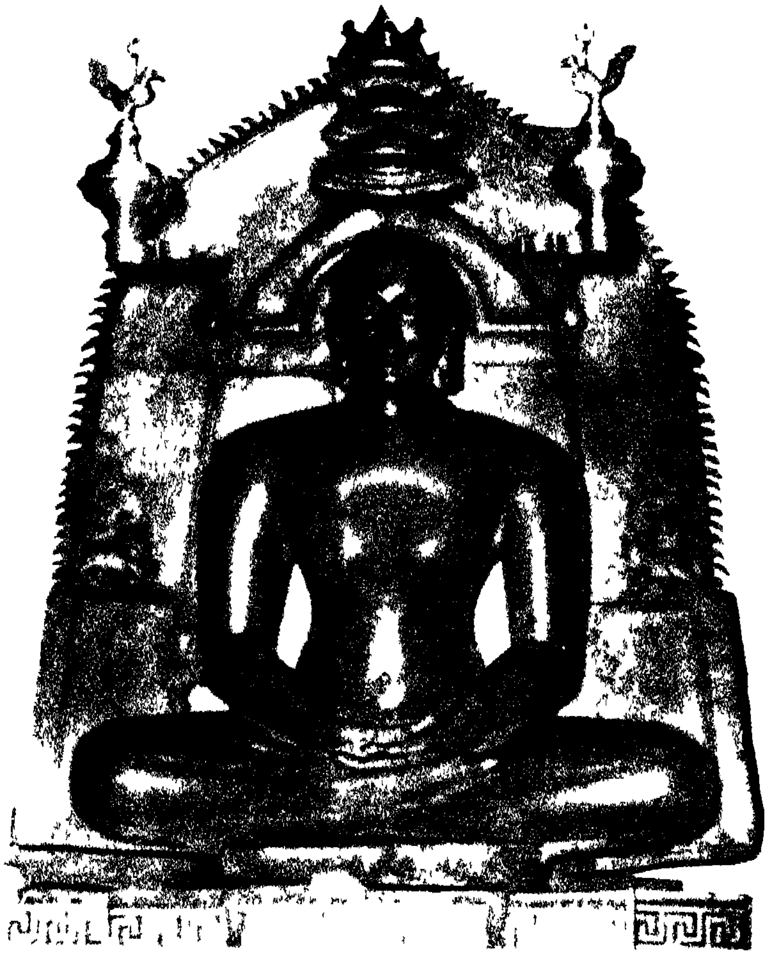
७ग

७घ





७मी



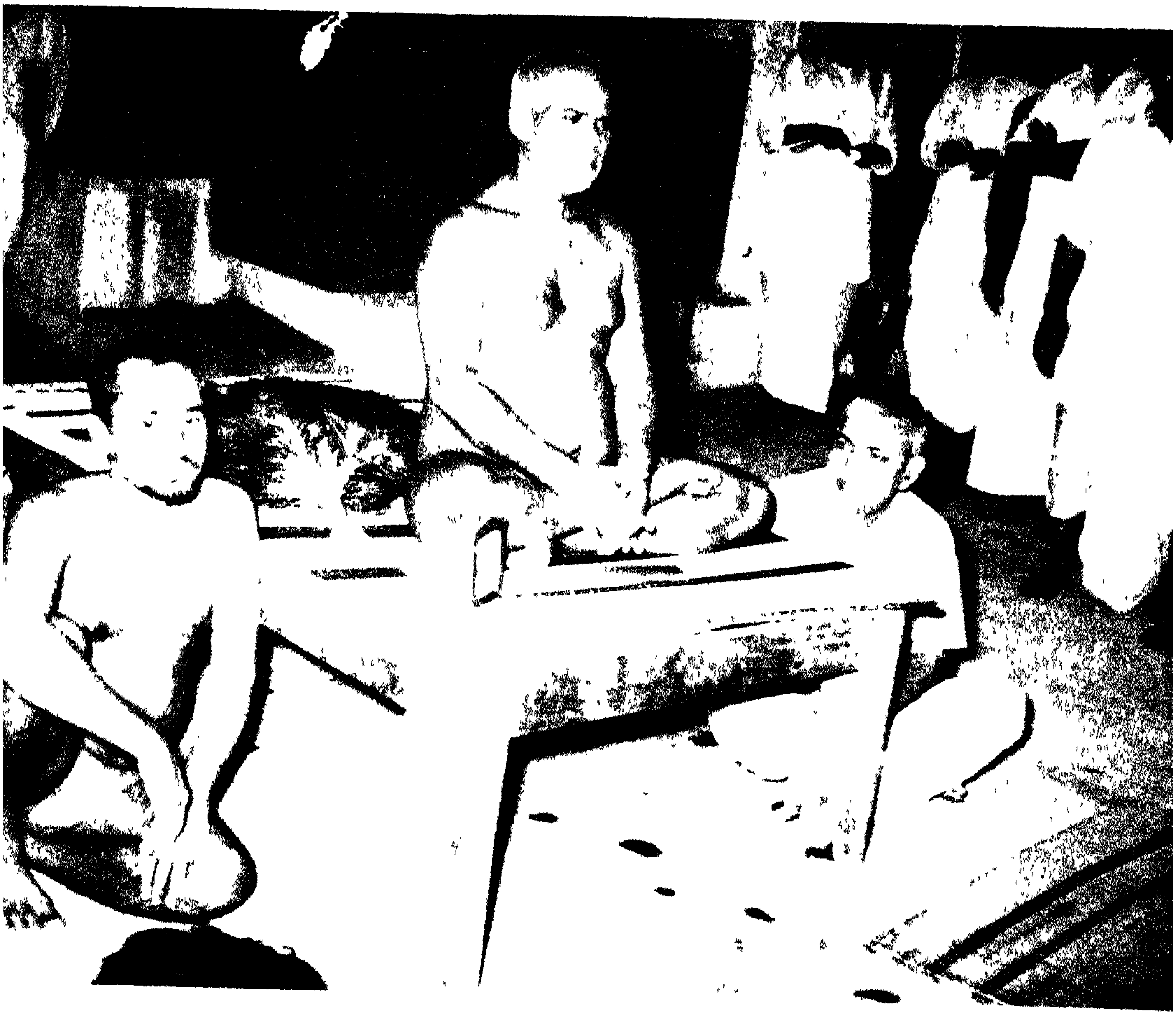


9





11


12



13







16

17

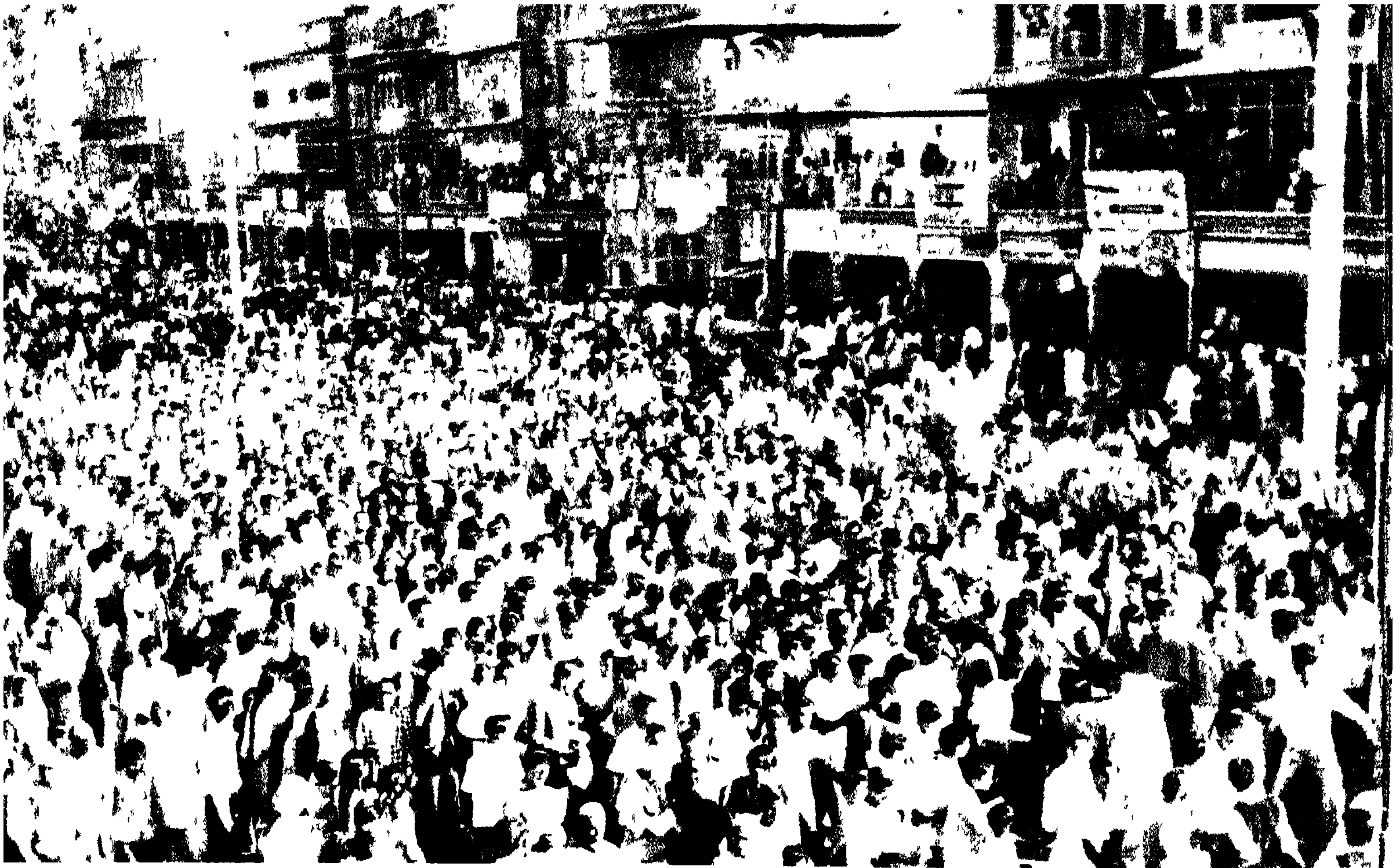




18

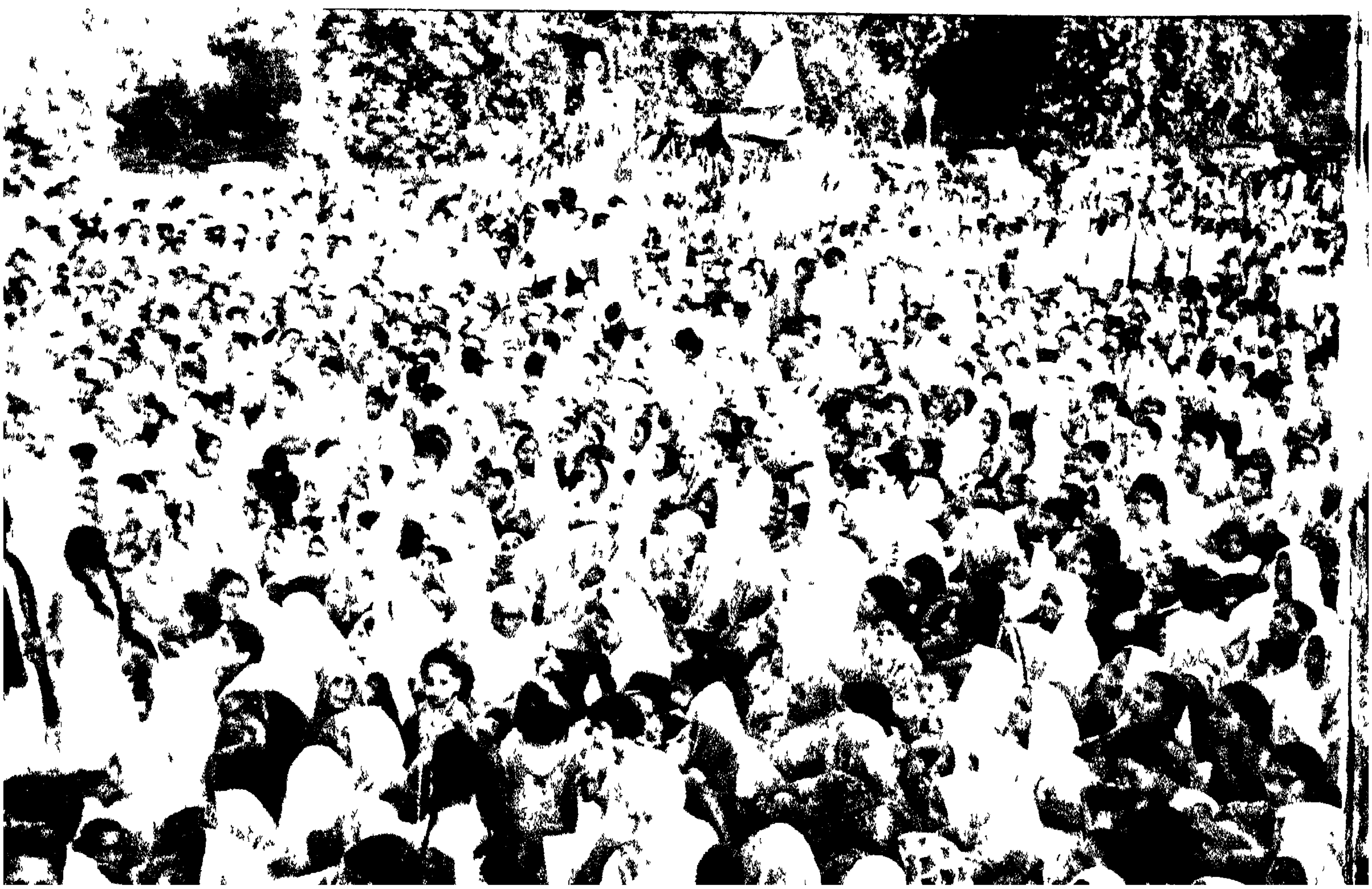
19





20

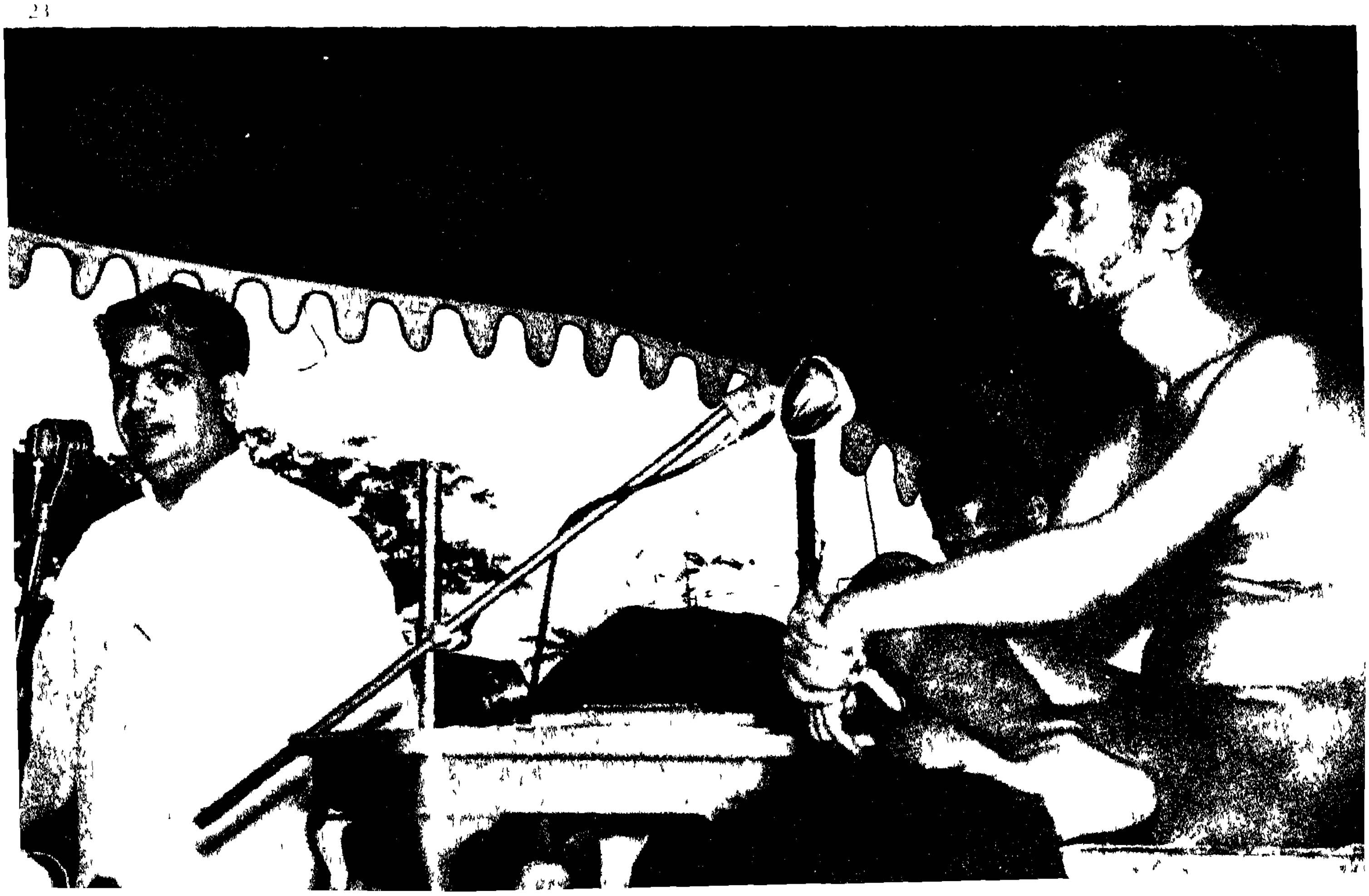
21

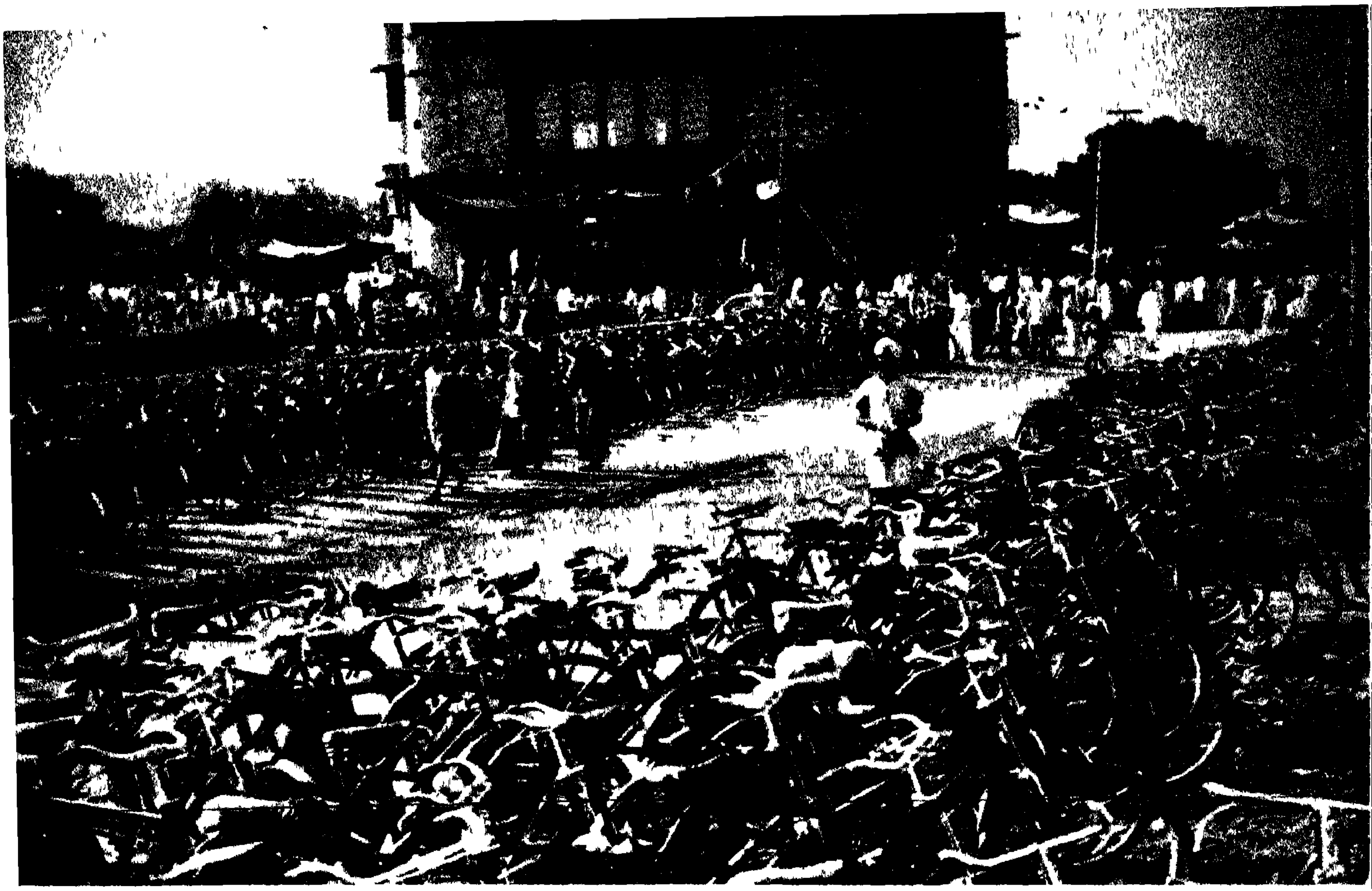




22

23

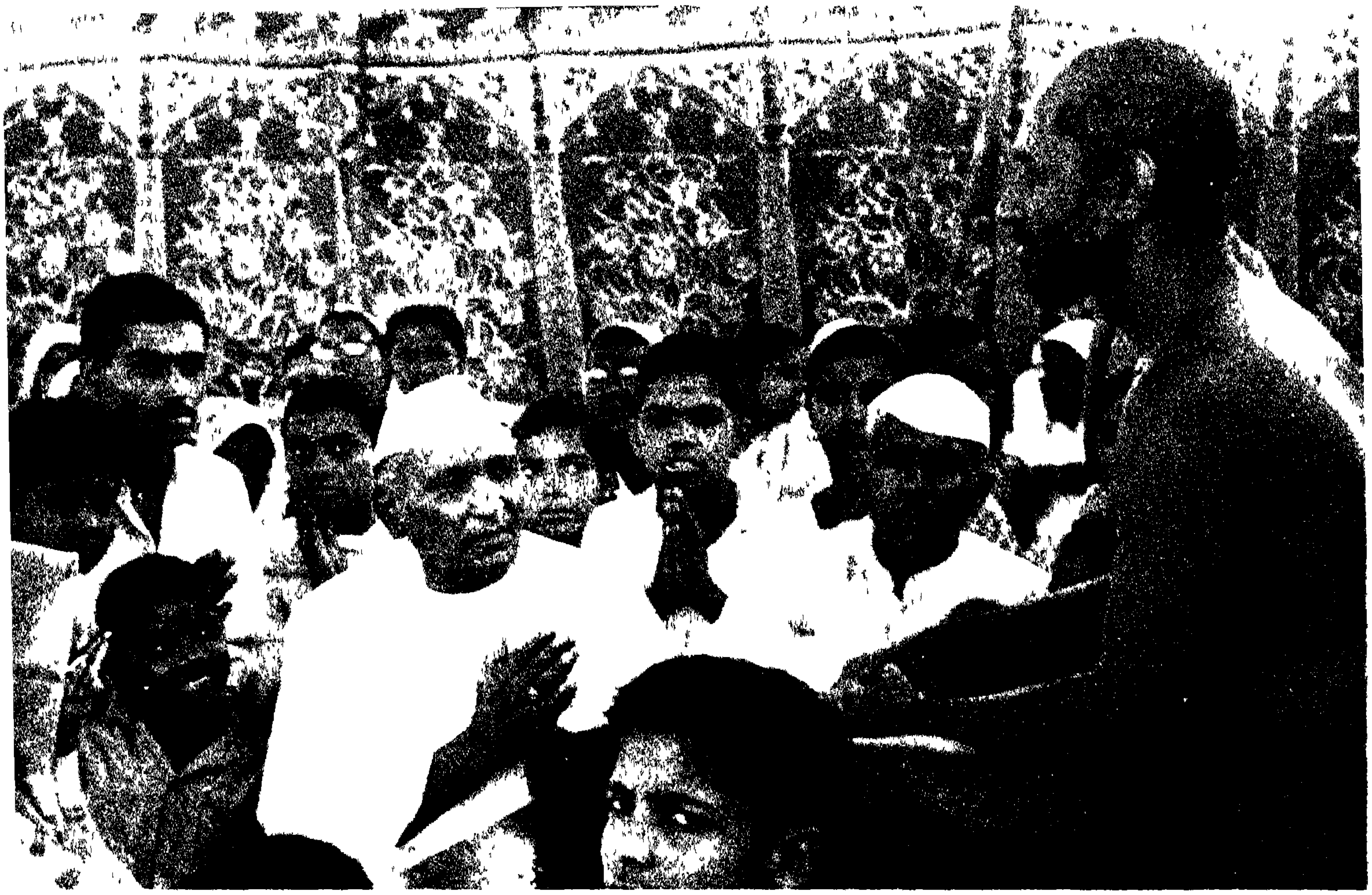




24

25



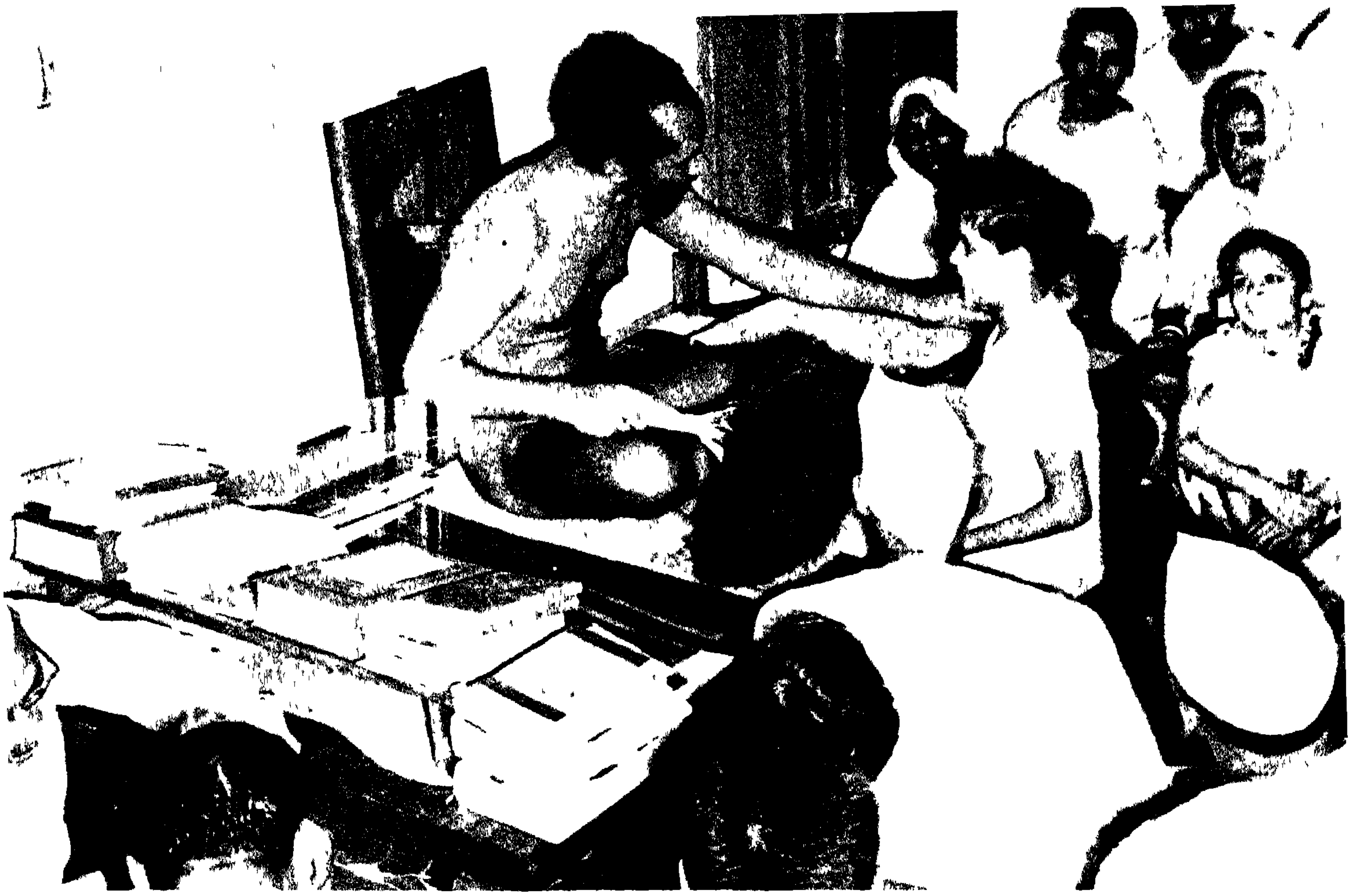


26





28

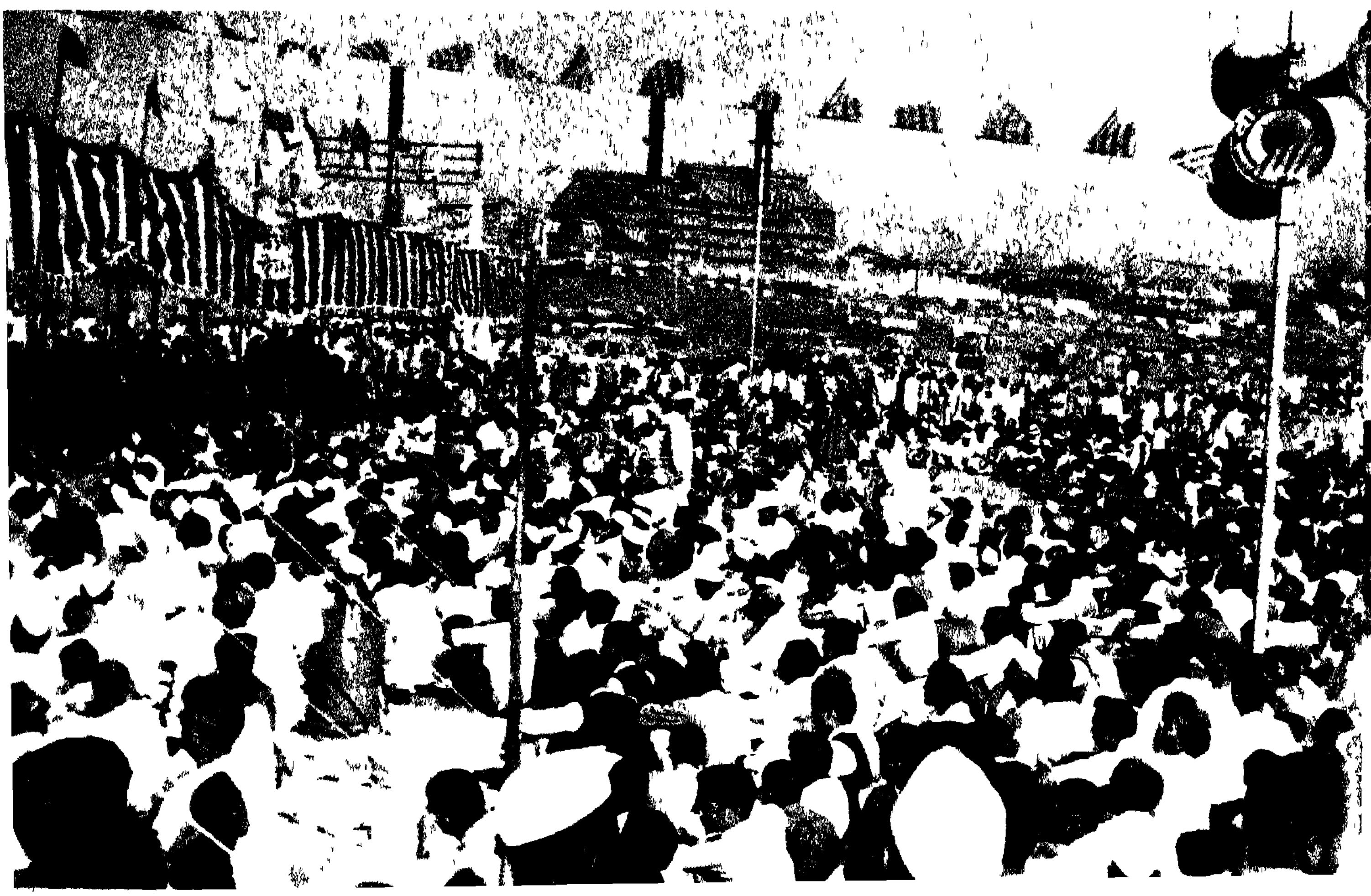


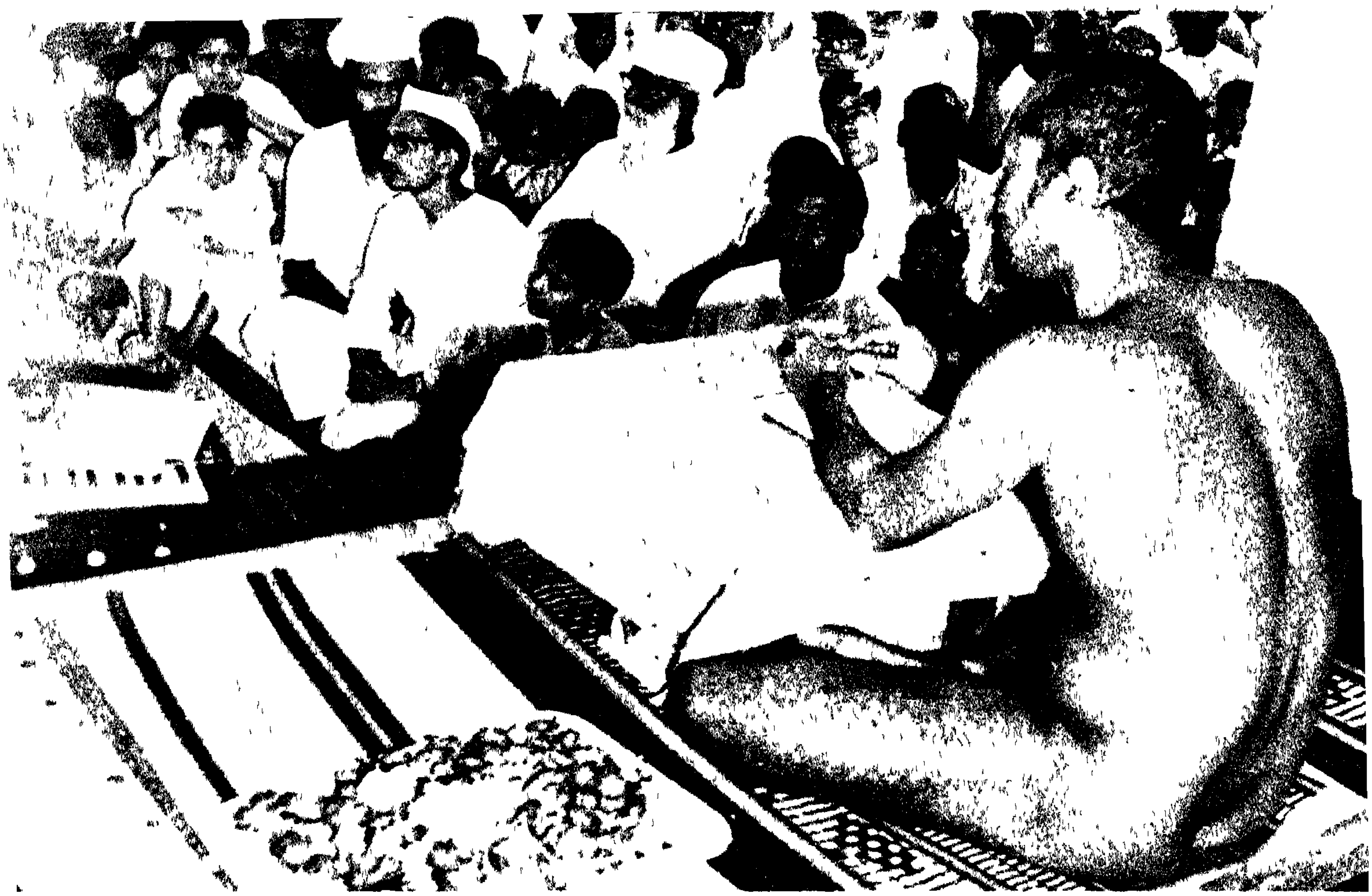




31

32

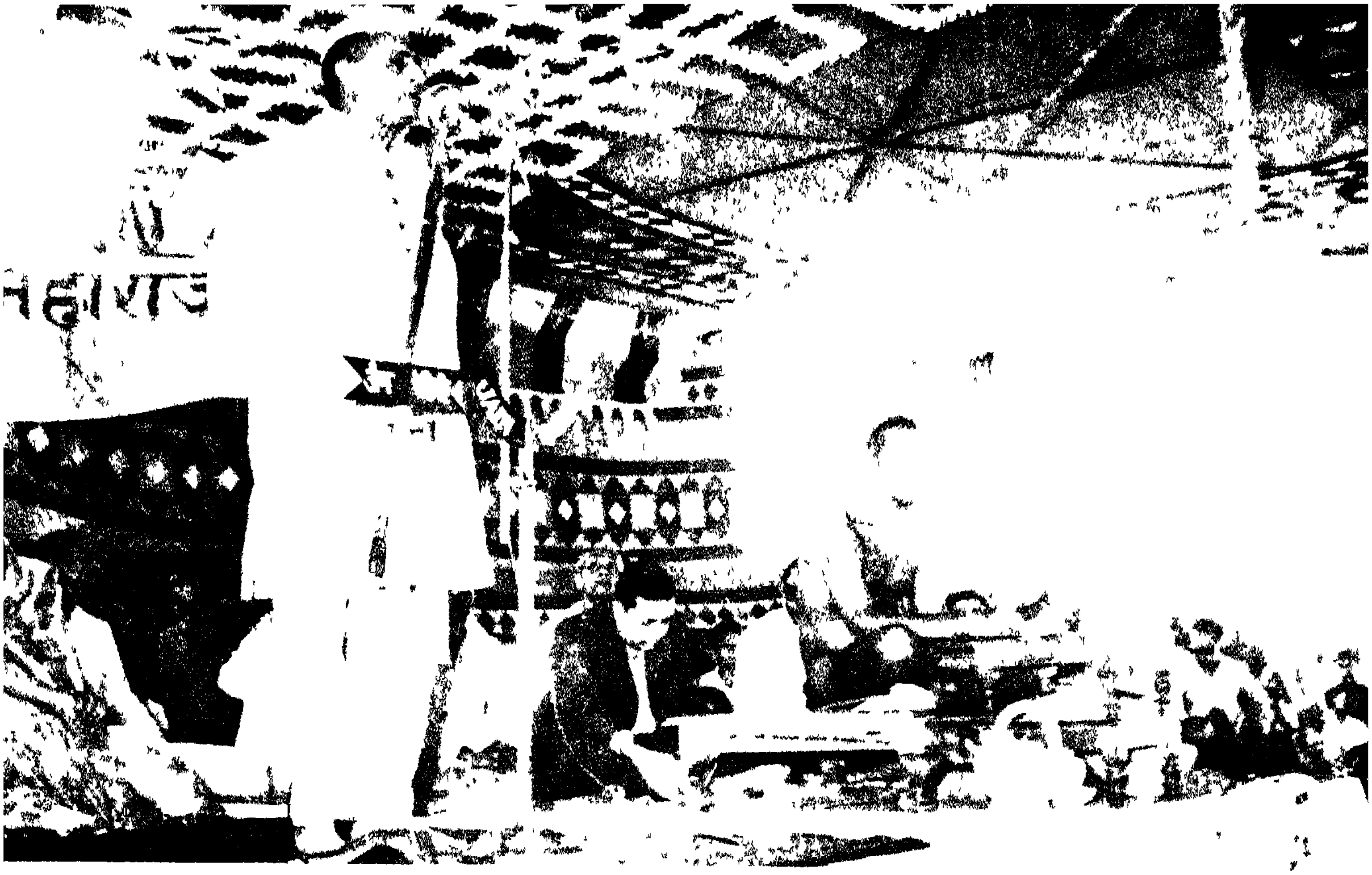


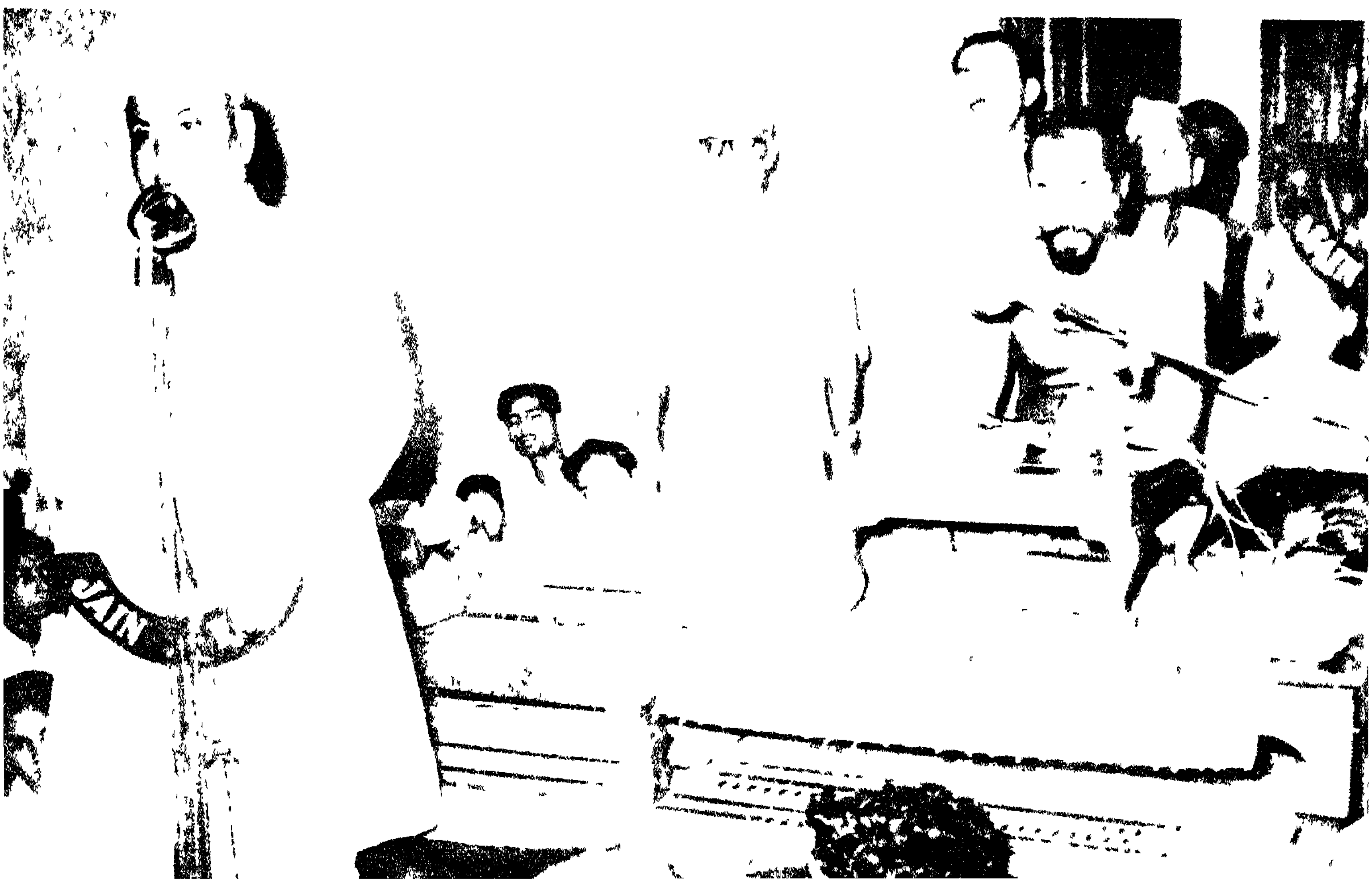


33

34




महाराज


JAIN







39

40



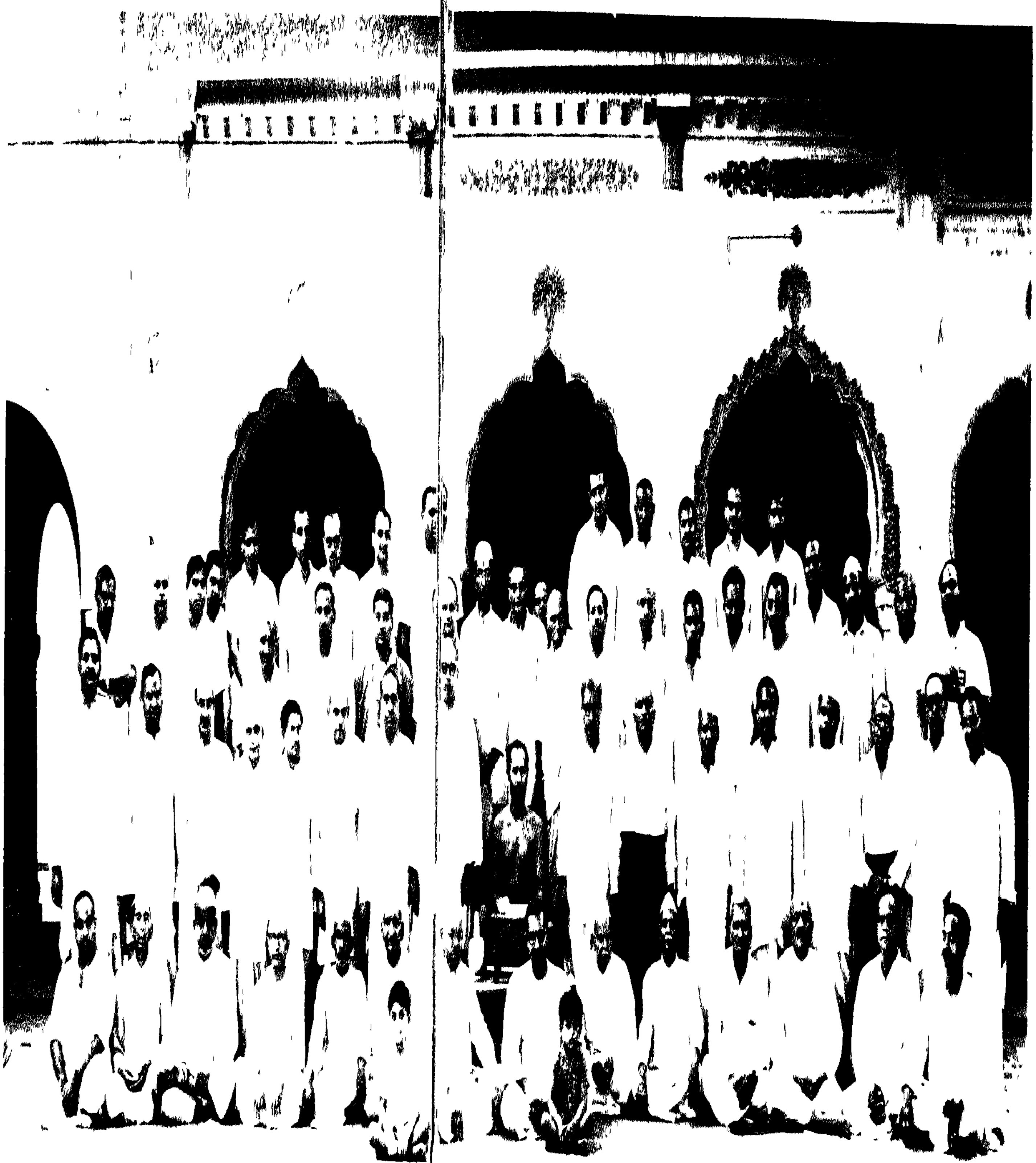





श्री मुनि १०८ विद्यानन्द जी महाराज
के प्रवचन १९६६







46



17



49

48





50

51

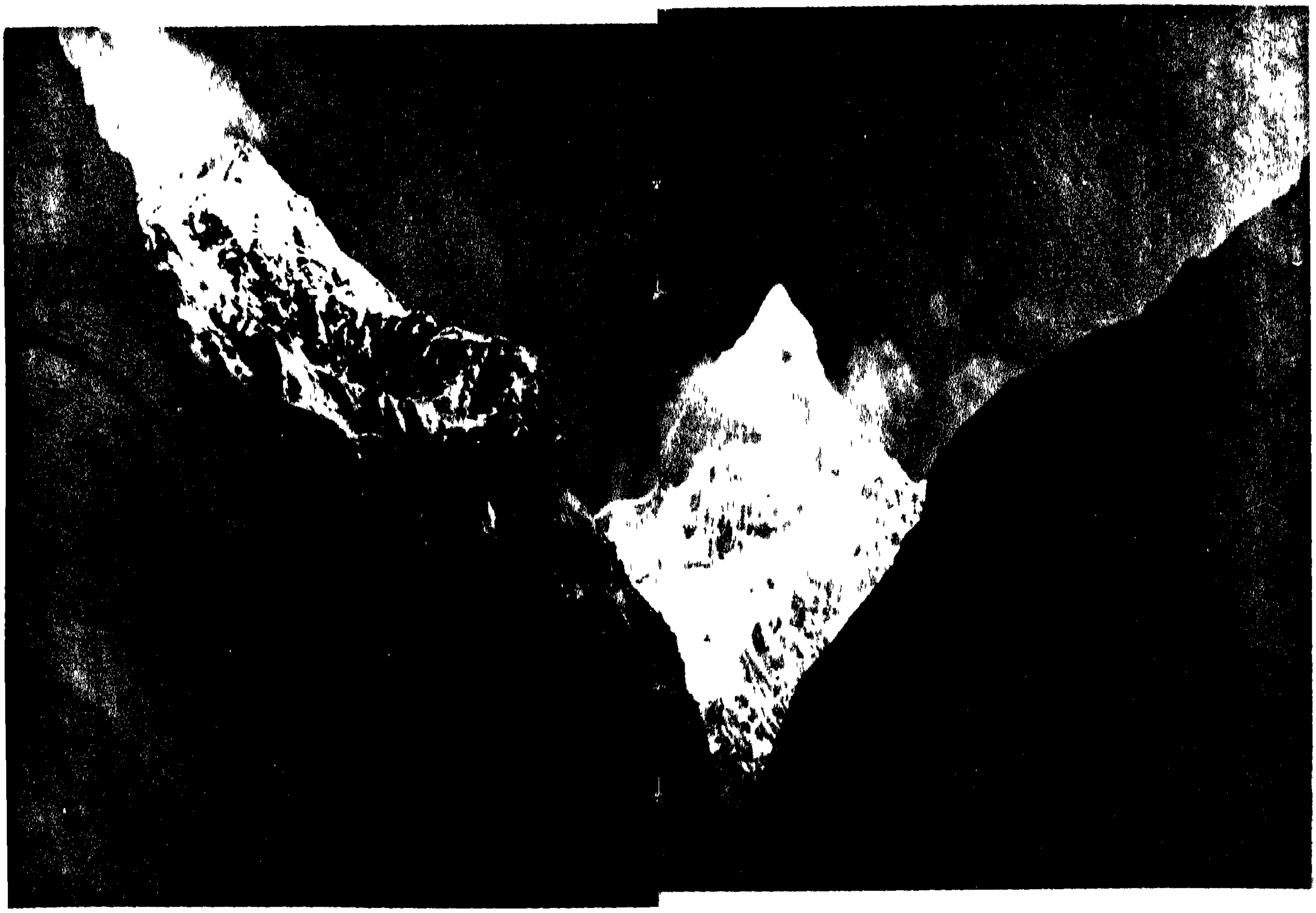




52

53









56

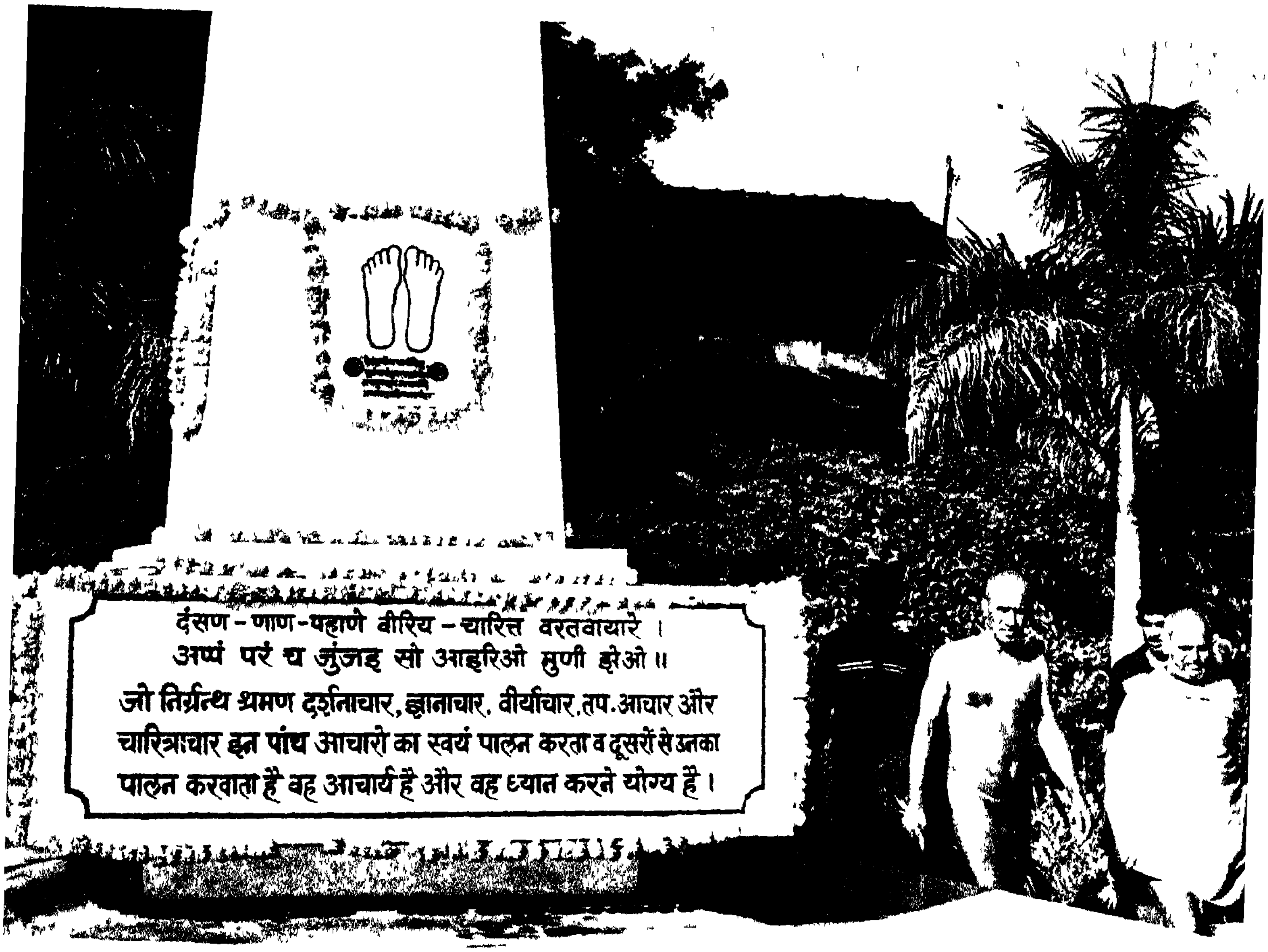




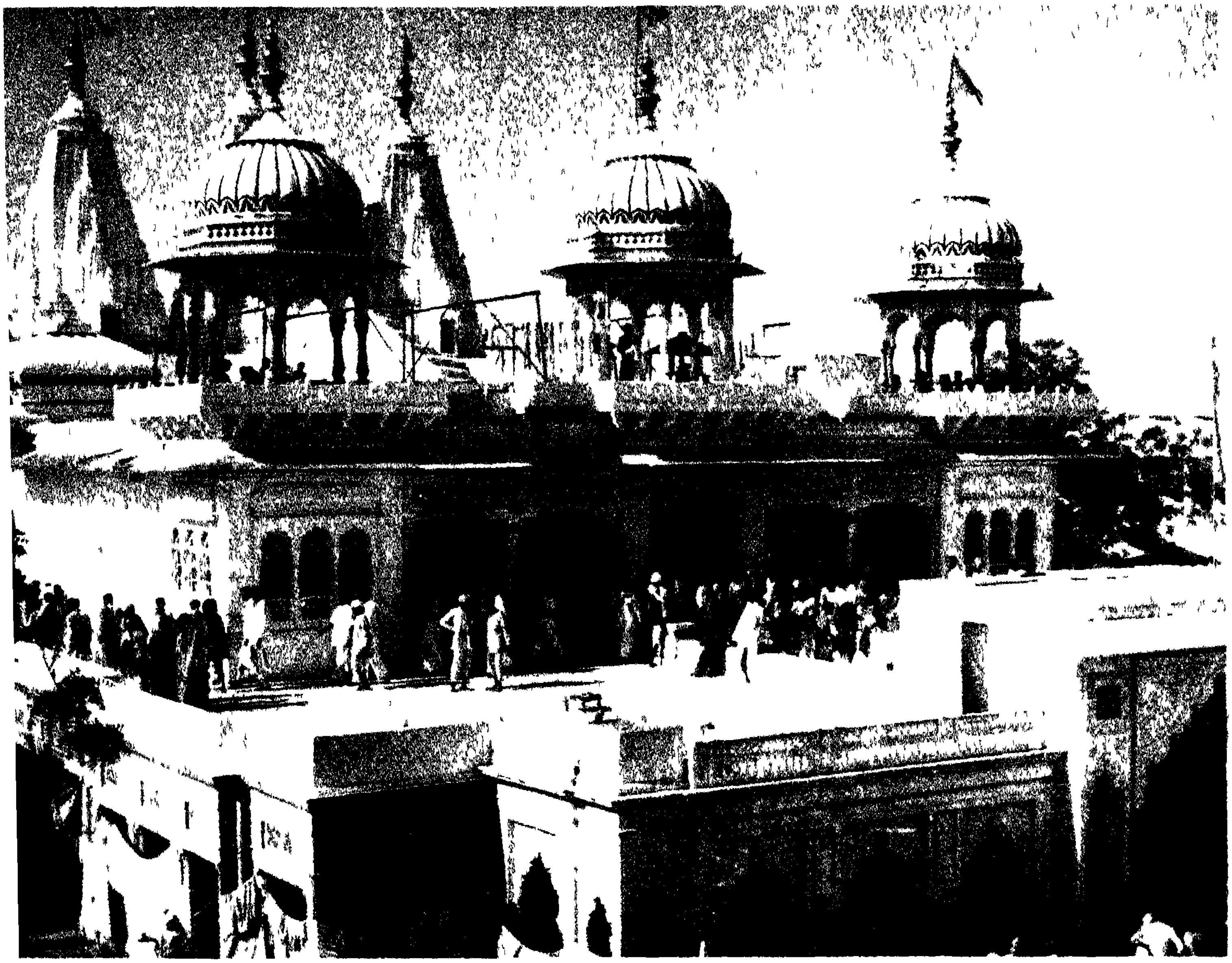
8

9




दंसण - णाण-पहाणे वीरिय - चारित्त वरतवायारे ।
अप्पं परं च जुंजइ सो आइरिओ मुणी झेओ ॥
जो निर्ग्रन्थ श्रमण दर्शनाचार, ज्ञानाचार, वीर्याचार, तप-आचार और
चारित्राचार इन पांच आचारों का स्वयं पालन करता व दूसरों से उनका
पालन करवाता है वह आचार्य है और वह ध्यान करने योग्य है।

60



61



62

63



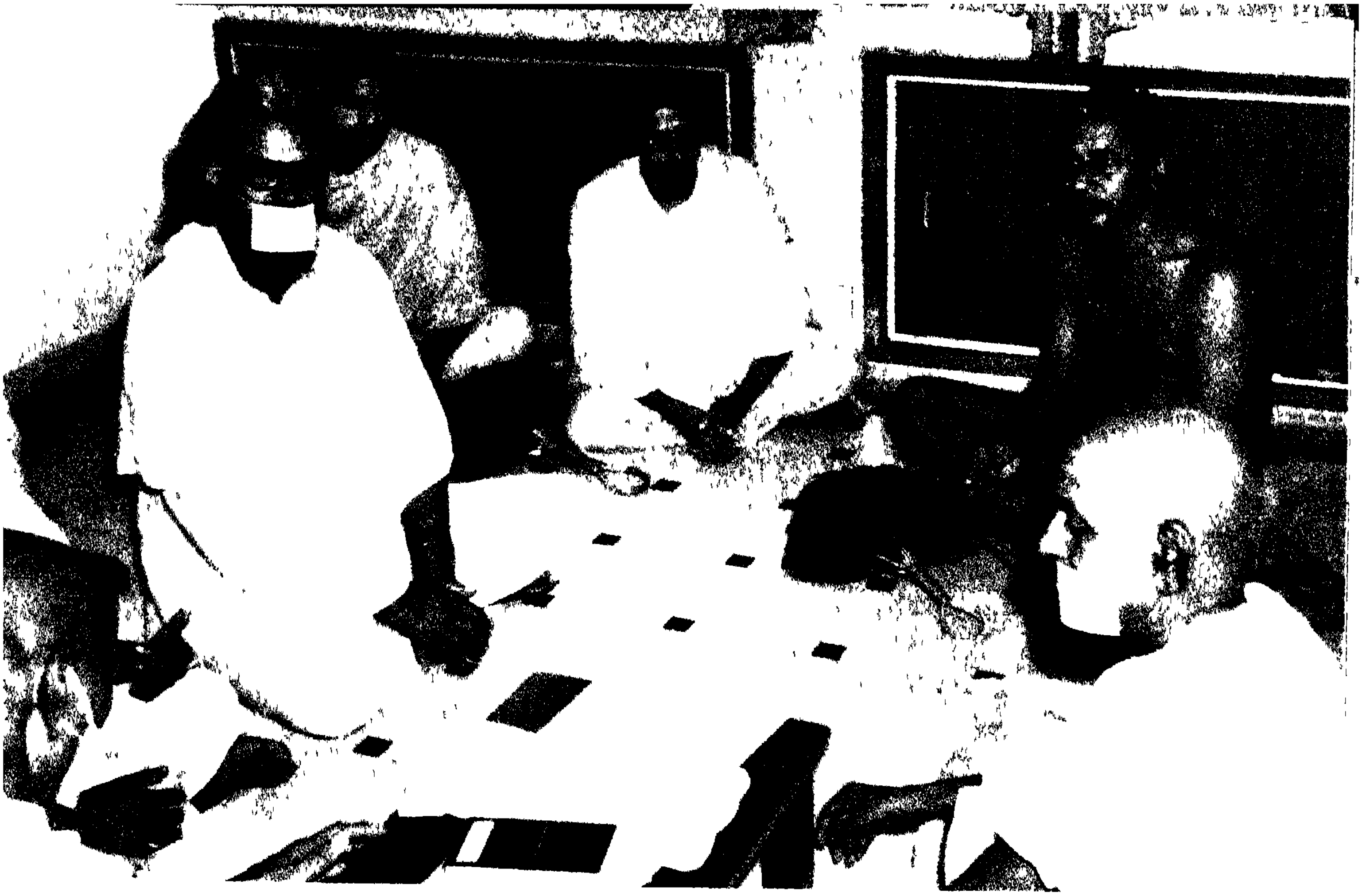






66





68

69





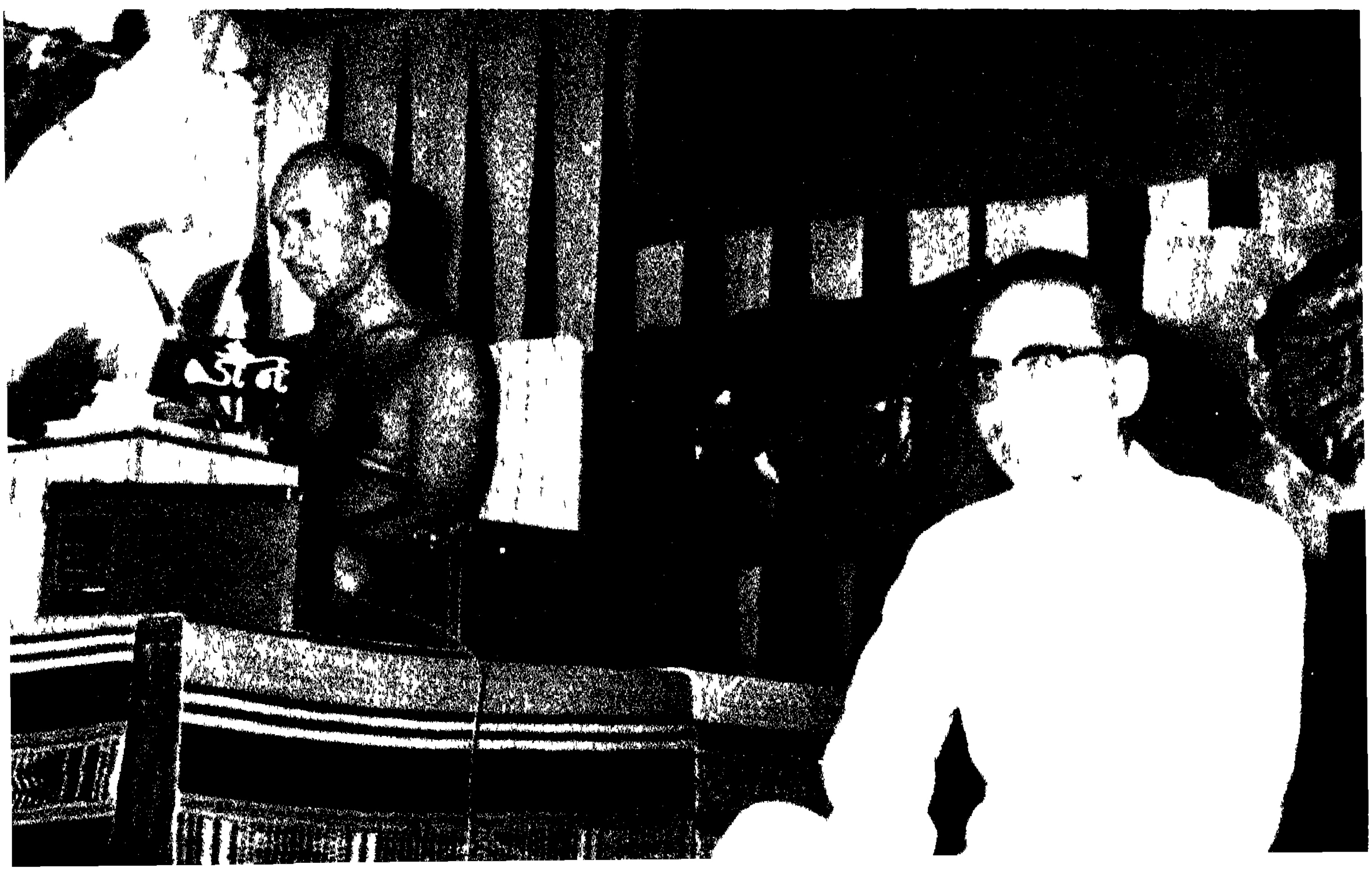
70

71





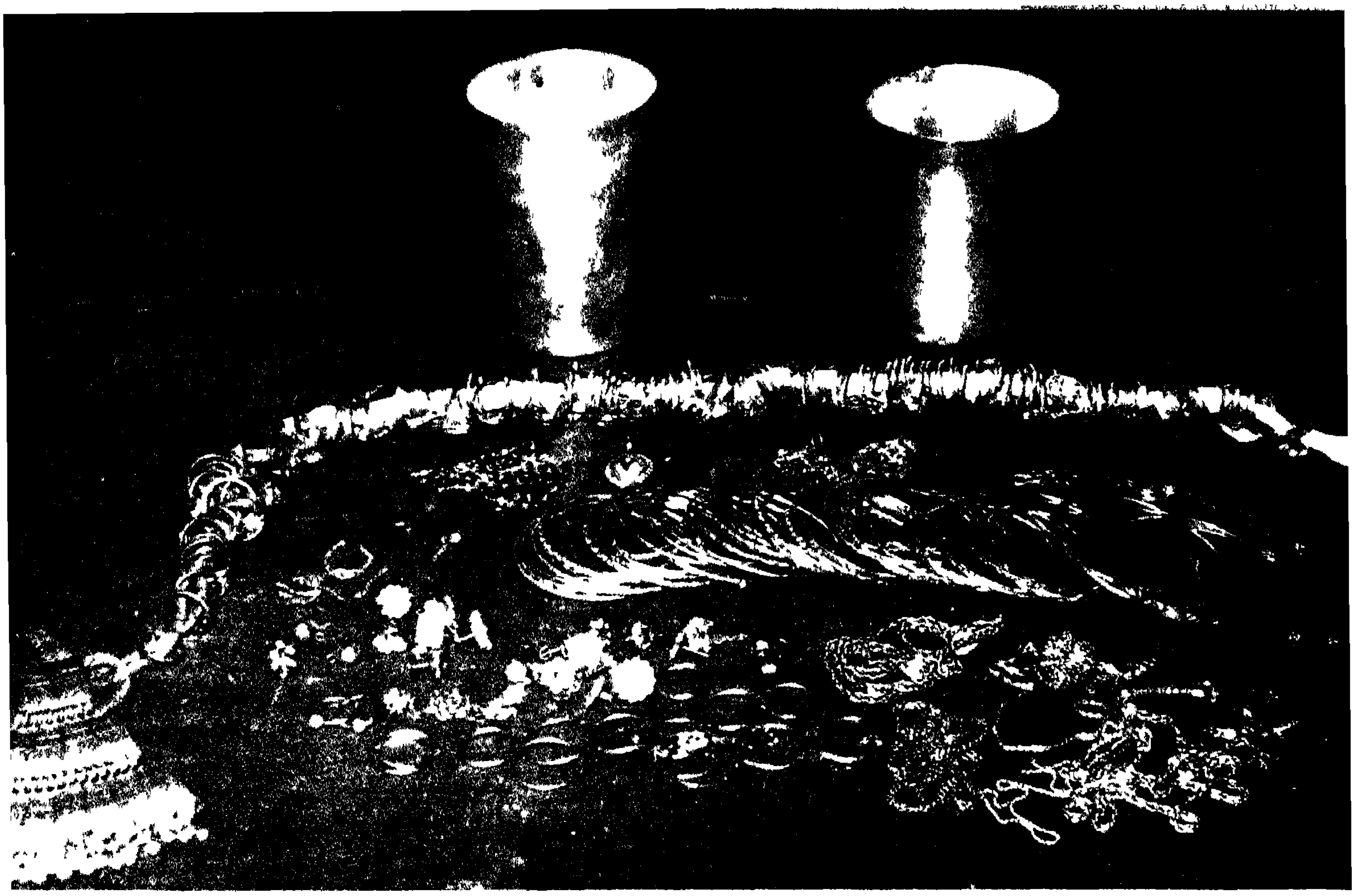
2







श्री कुन्दकुन्द [illegible]



76





78

79





81



80



४१

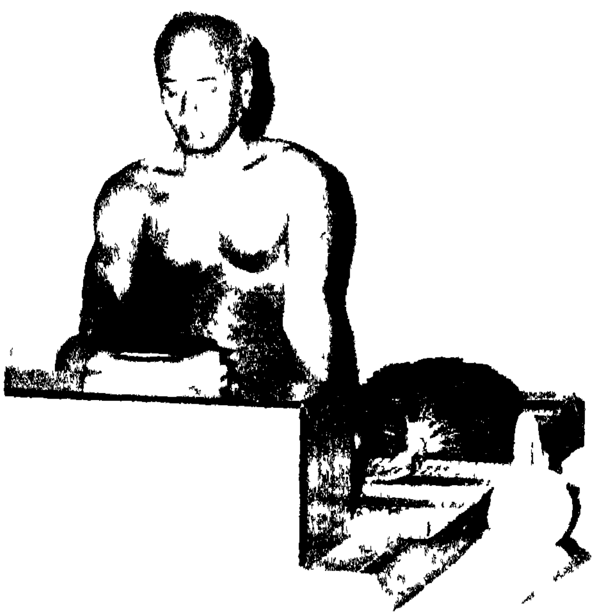


83



84

85







86





88



89

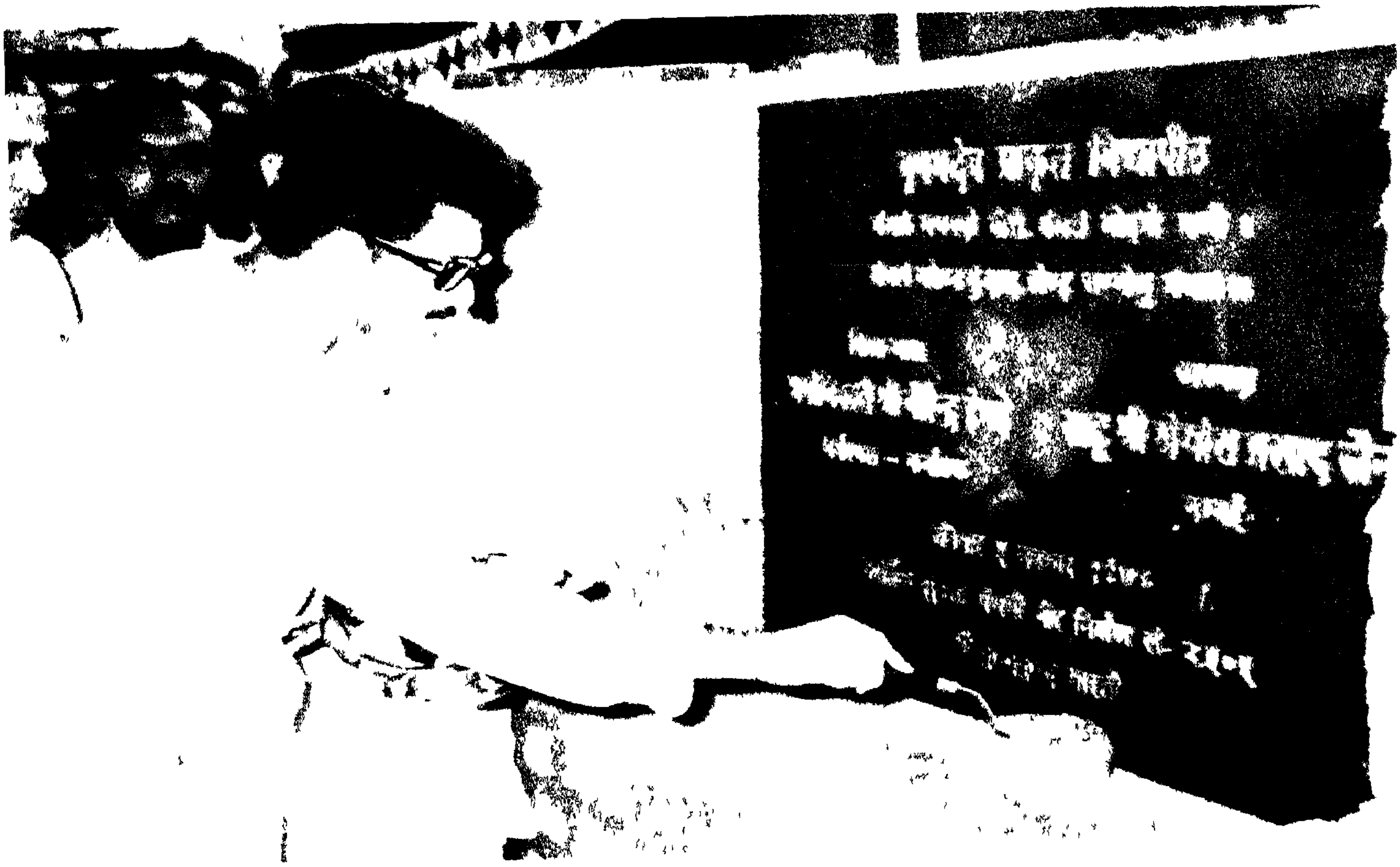
90





91





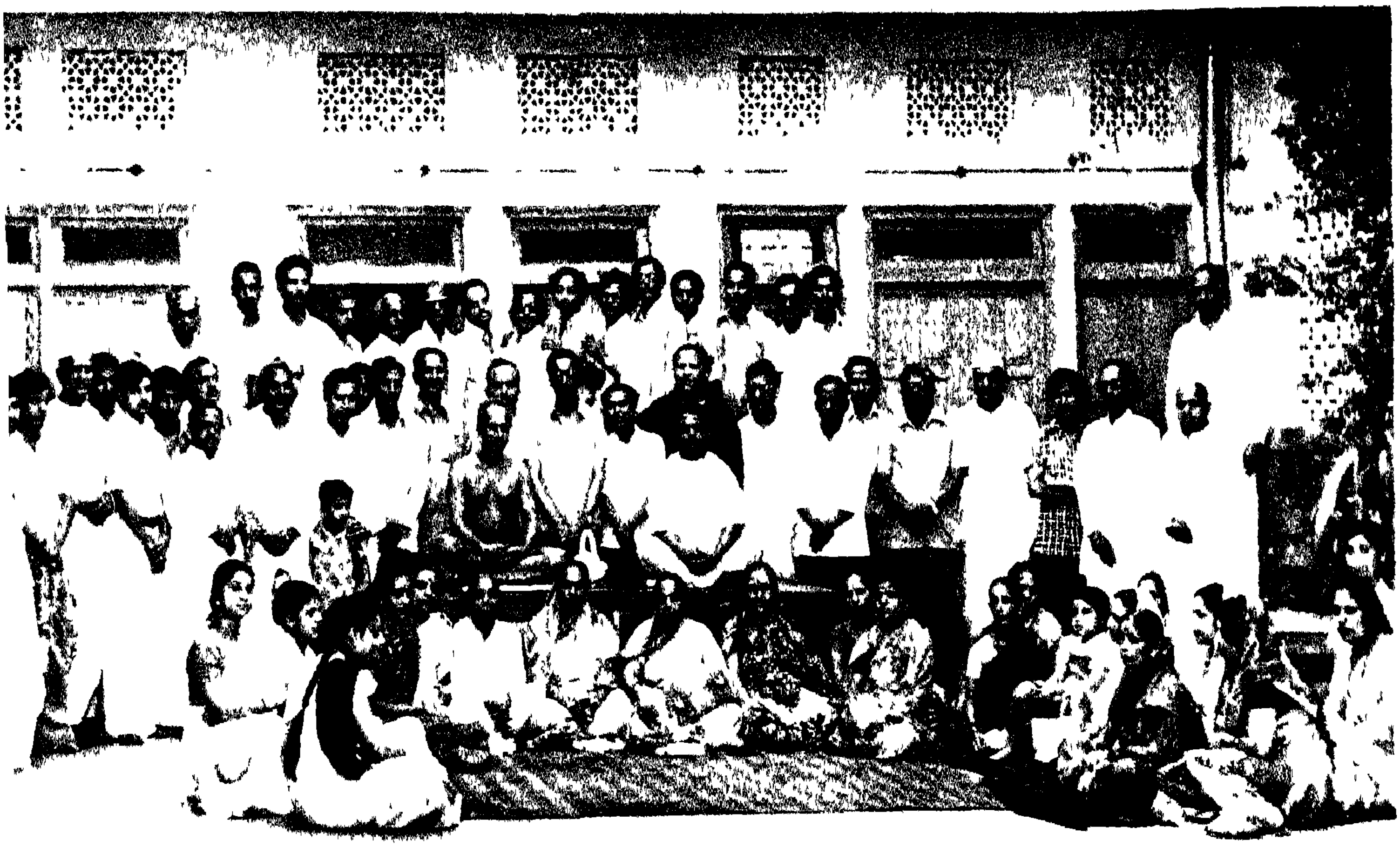
94







96





५८



99

100





101

102





103

104





105





10

08



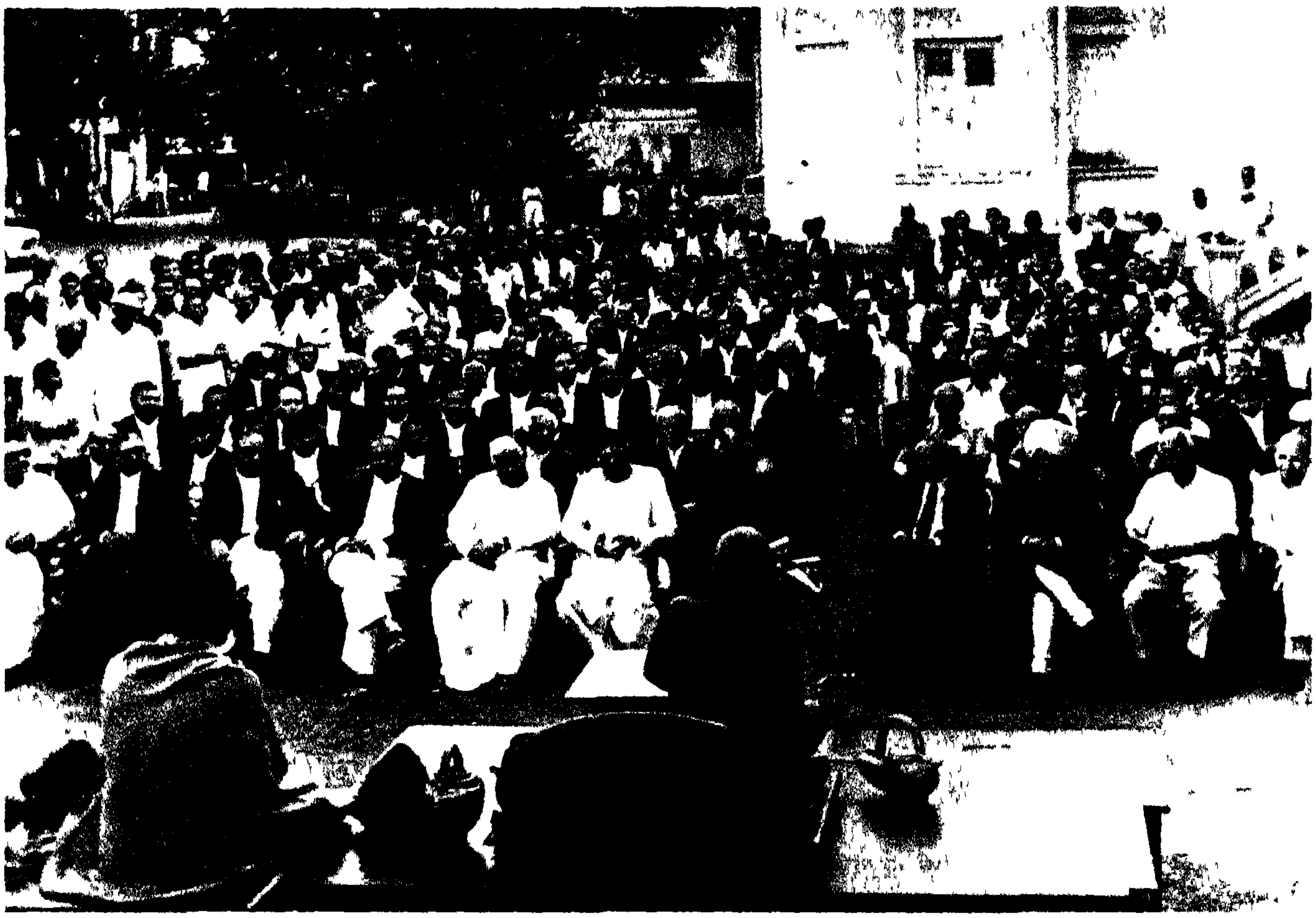


109





111



112





114



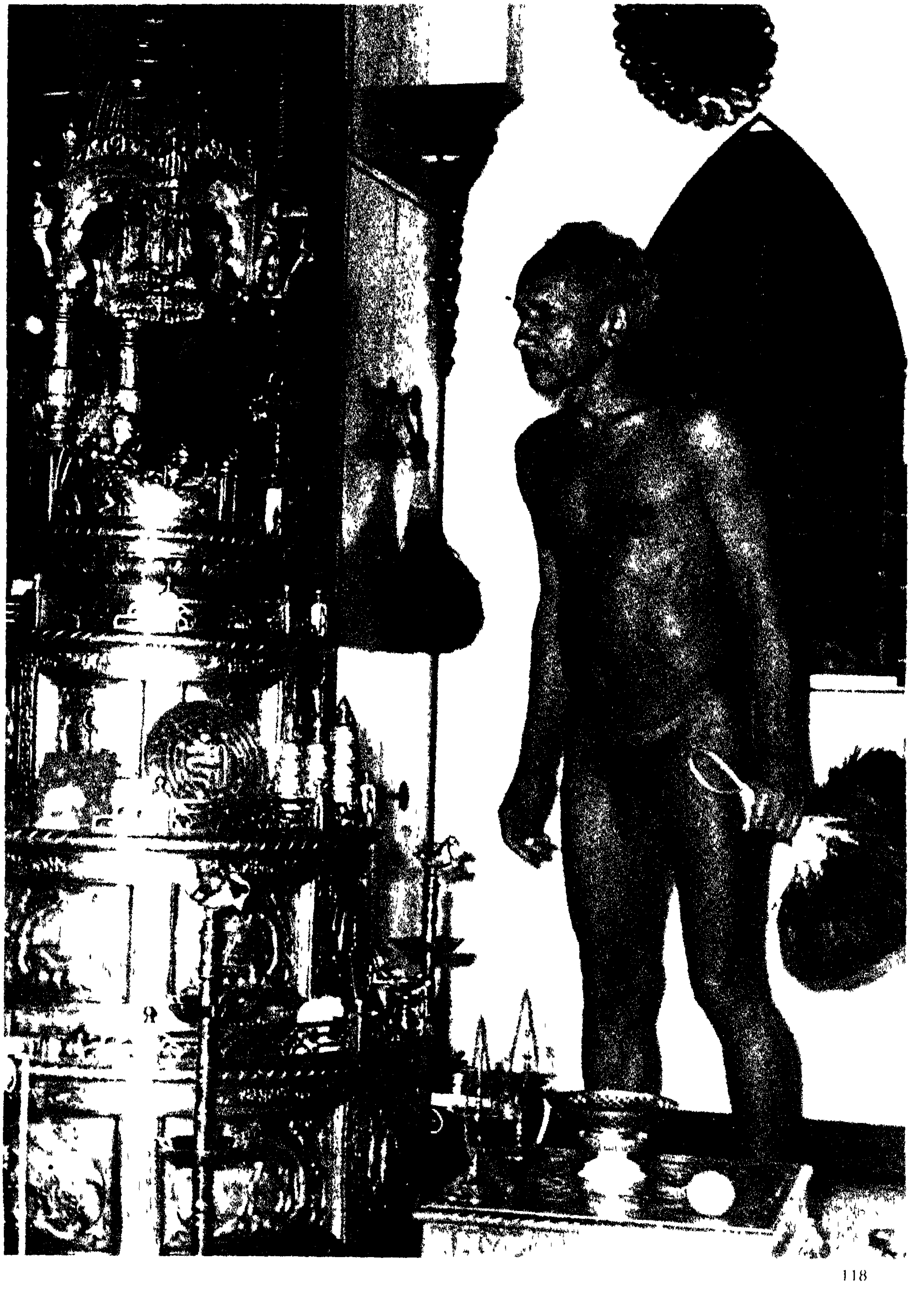
115

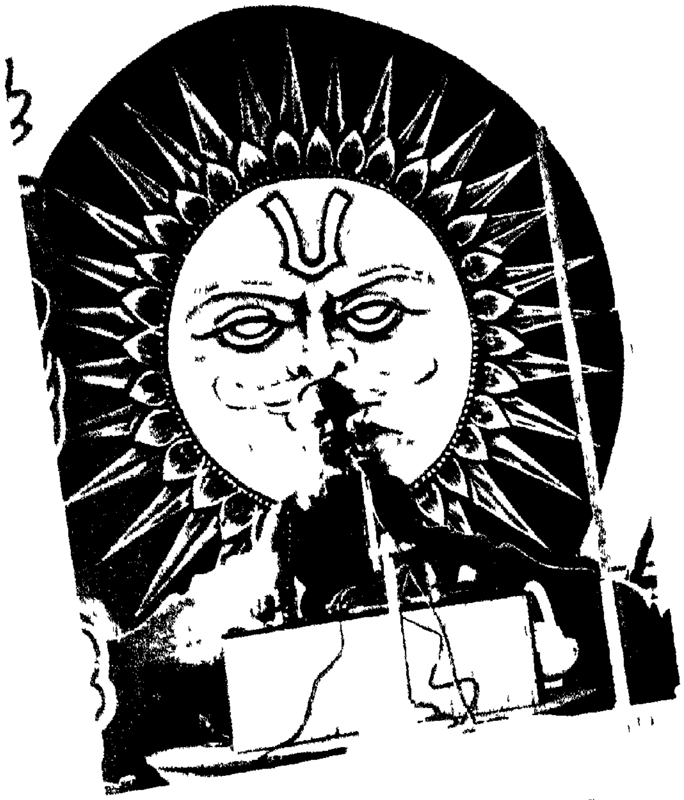


116

117



















174





126





128

129





130

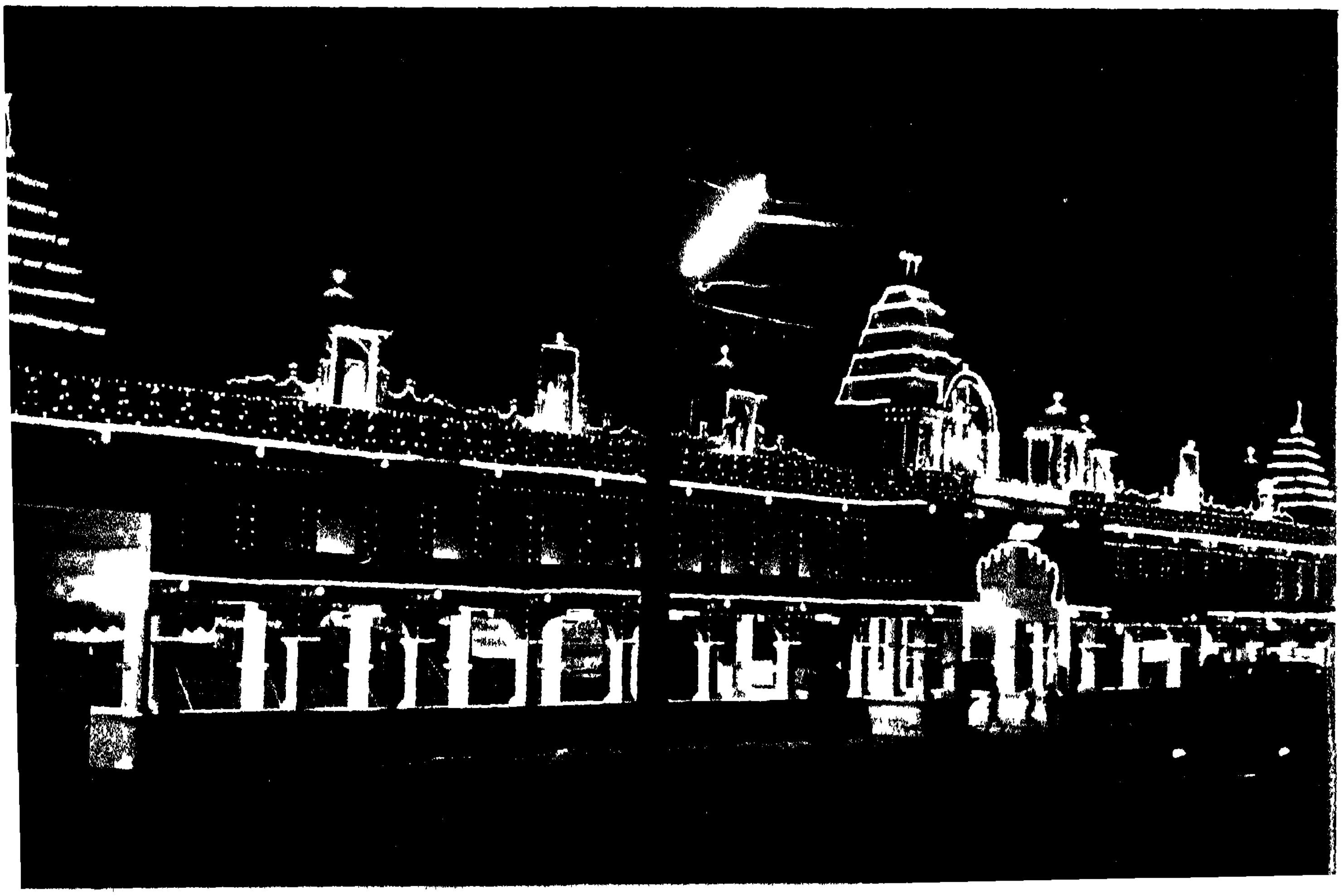
एलाचार्य नगर ಏಲಾಚಾರ್ಯ ನಗರ

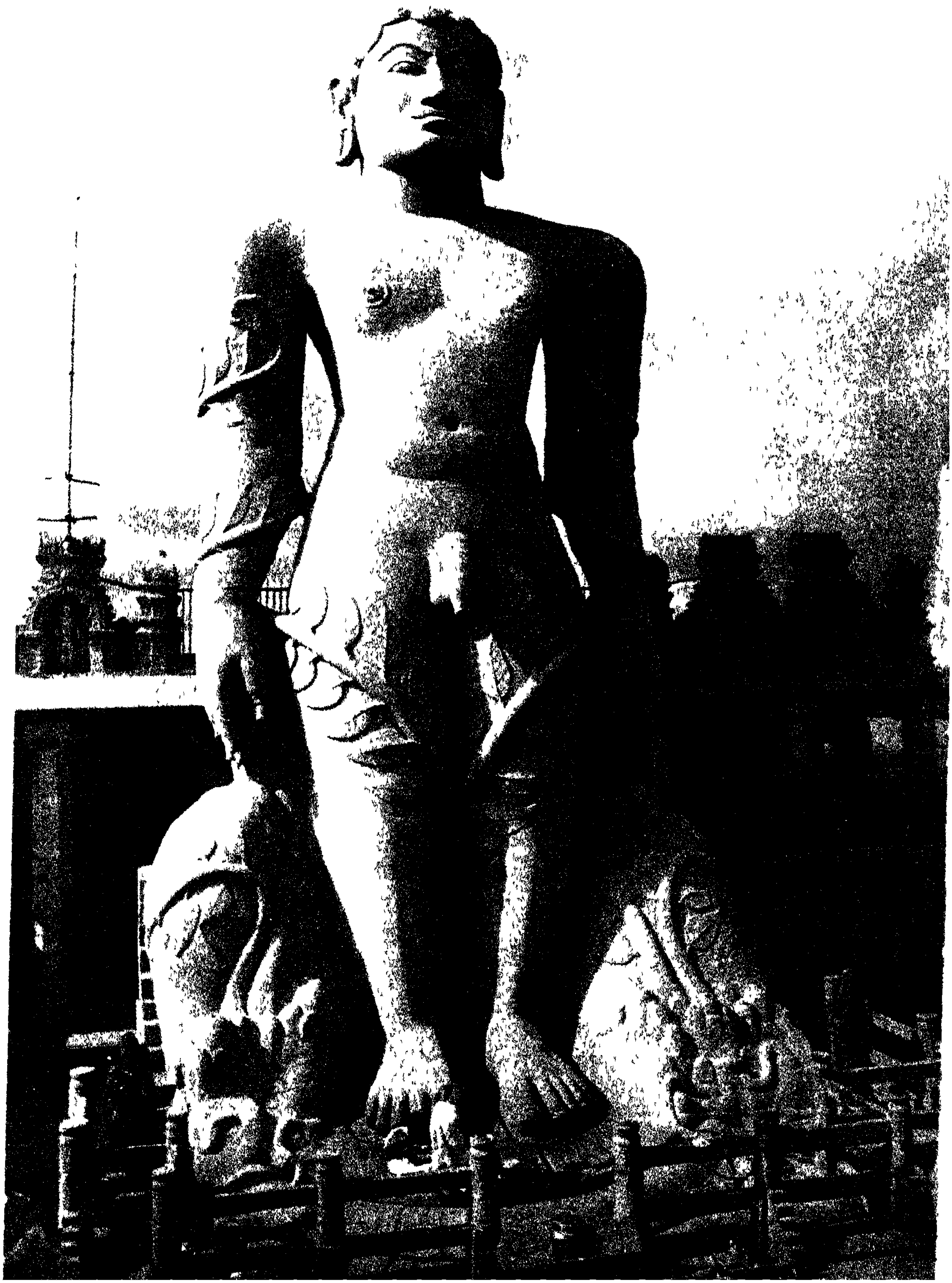




32

33











137



138



139

140







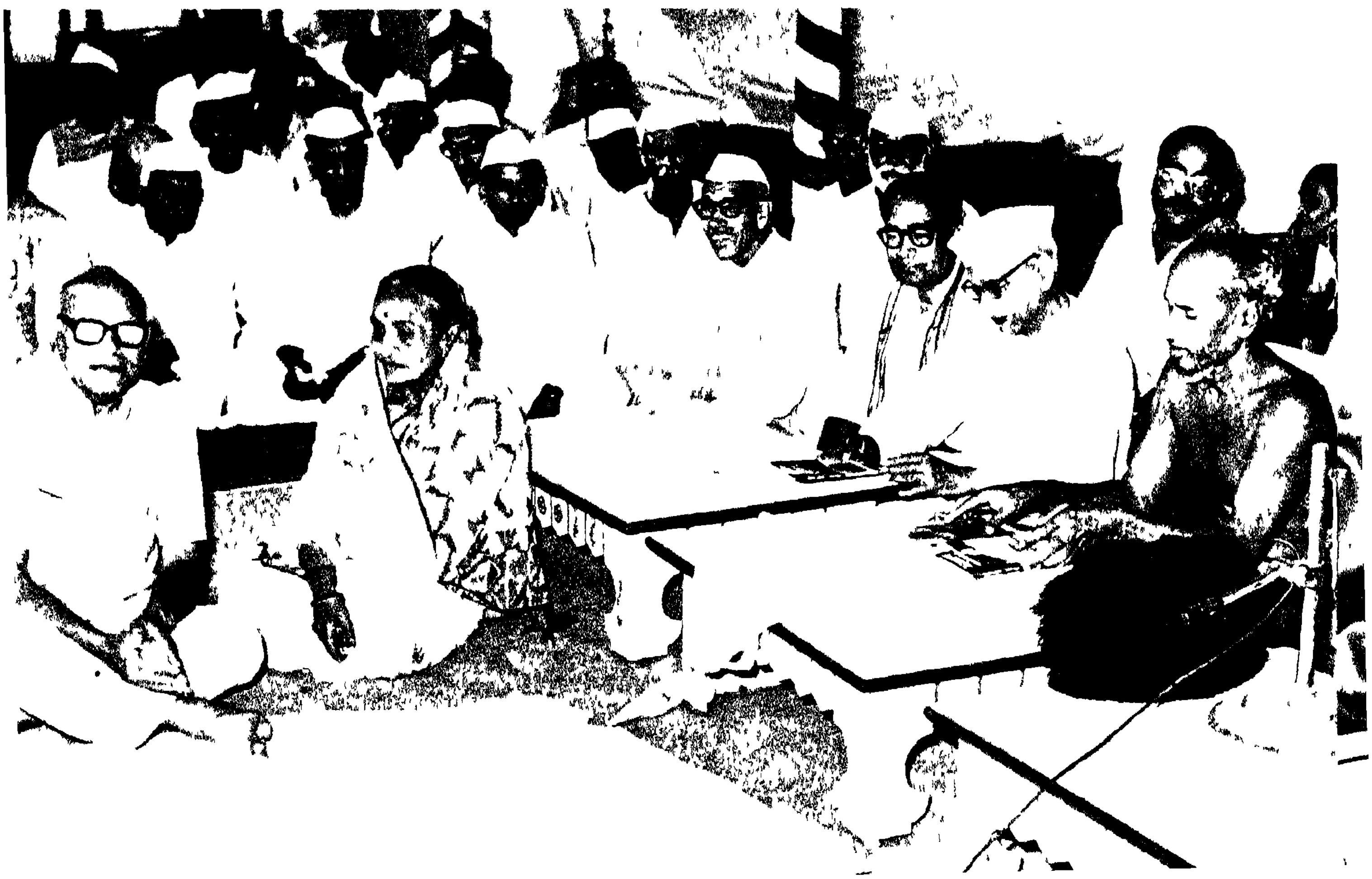
142

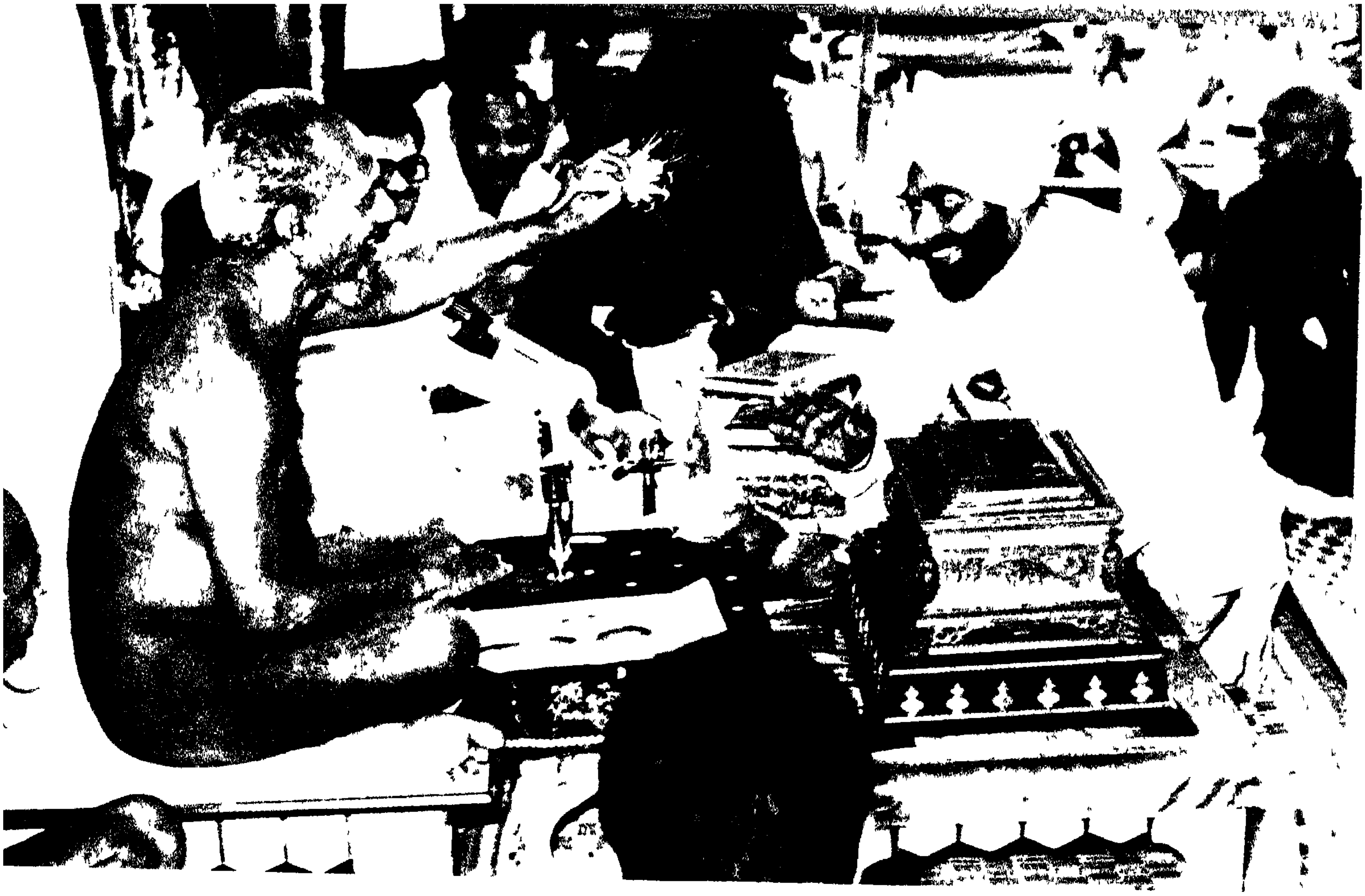




144

145









148





49

150





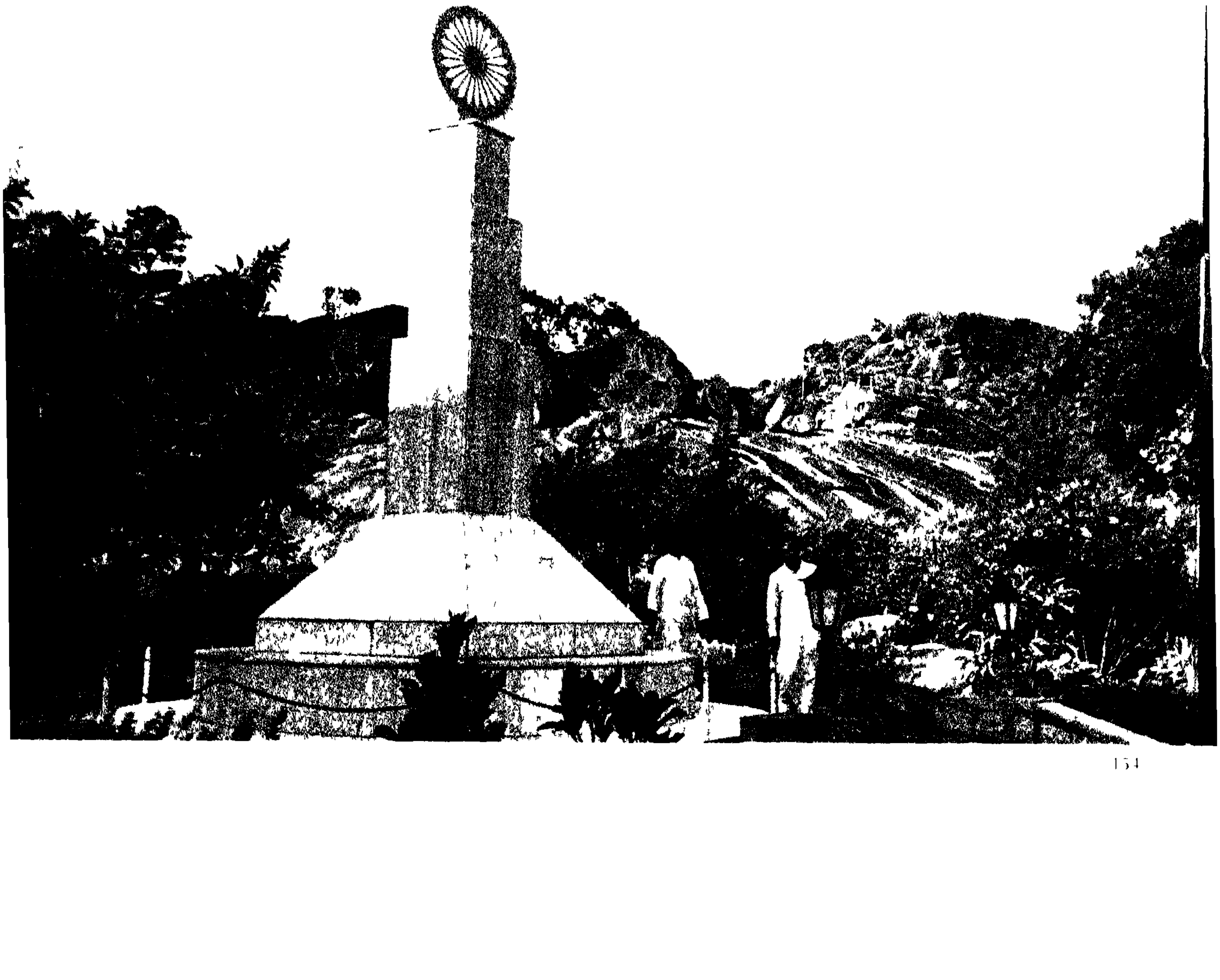
151



152



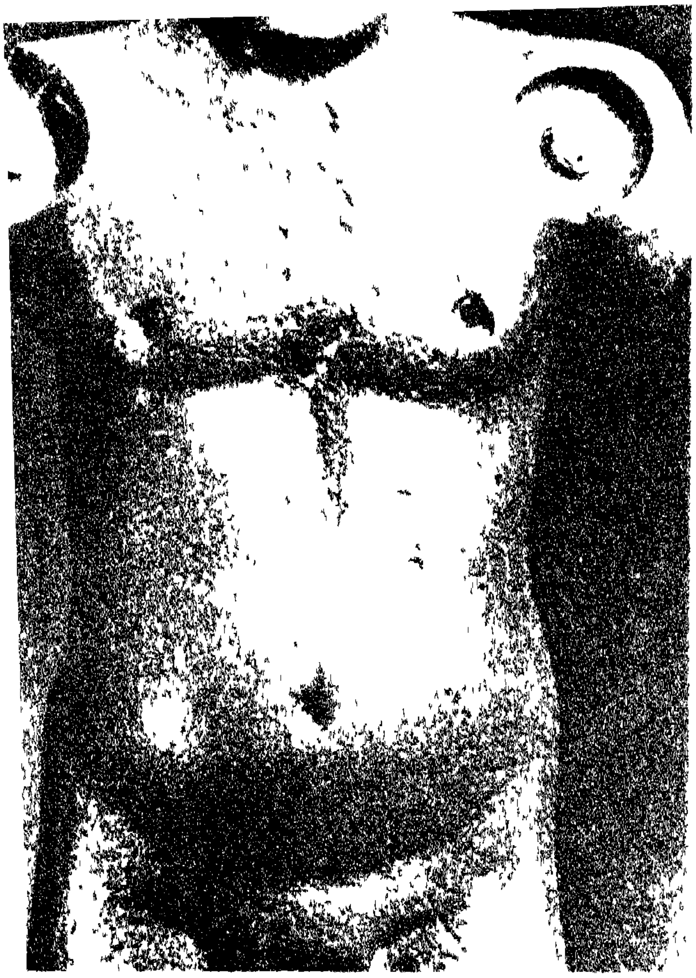
153



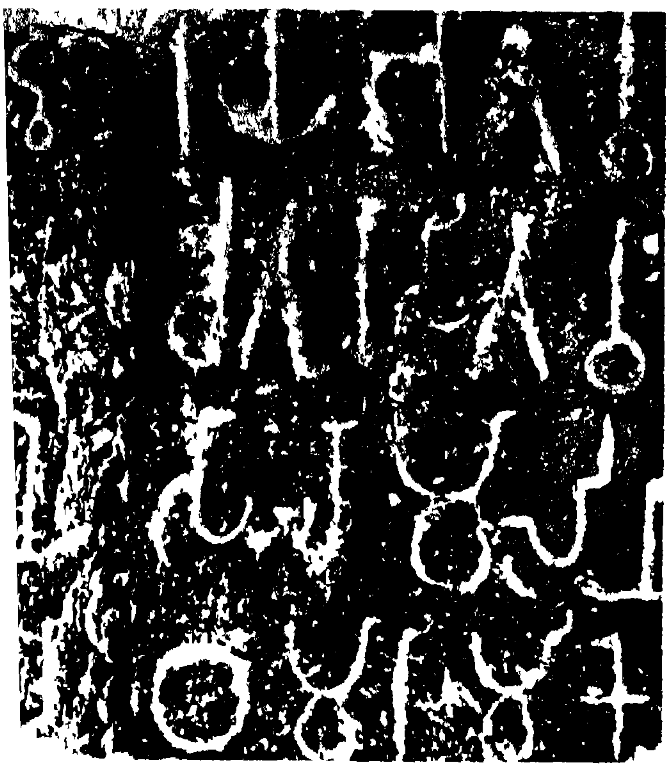
154



155


156


156 A


157


157 A

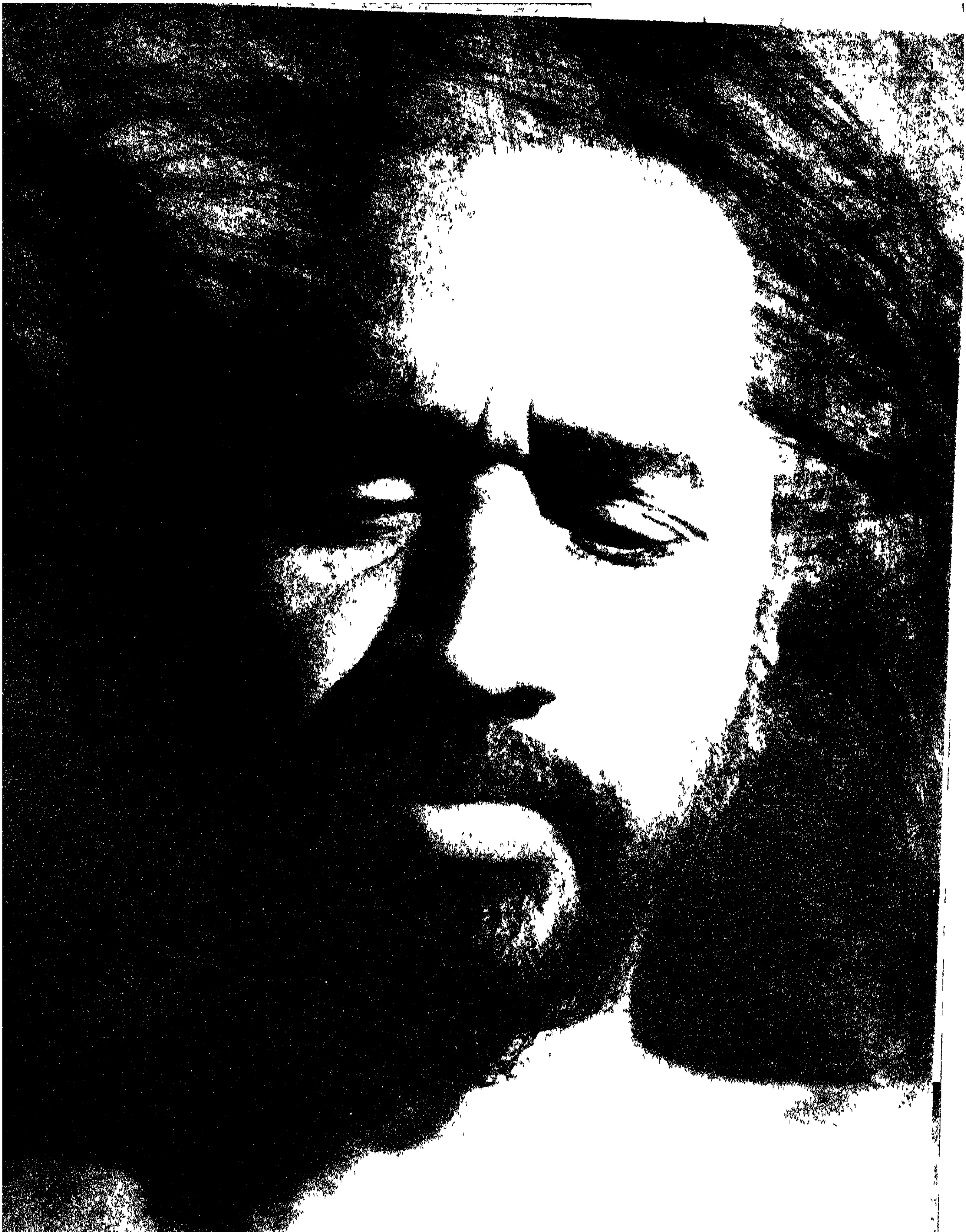


158

159

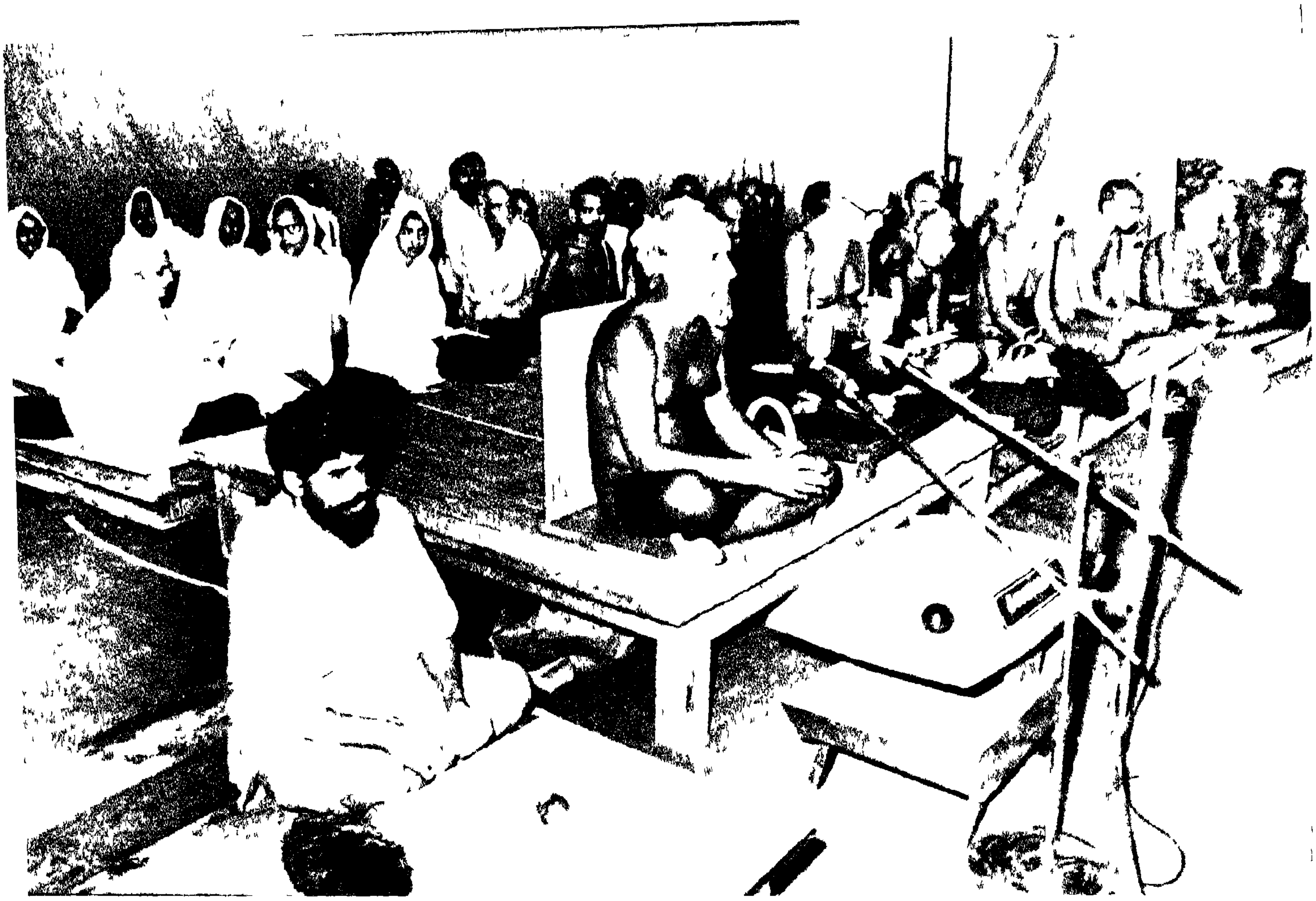






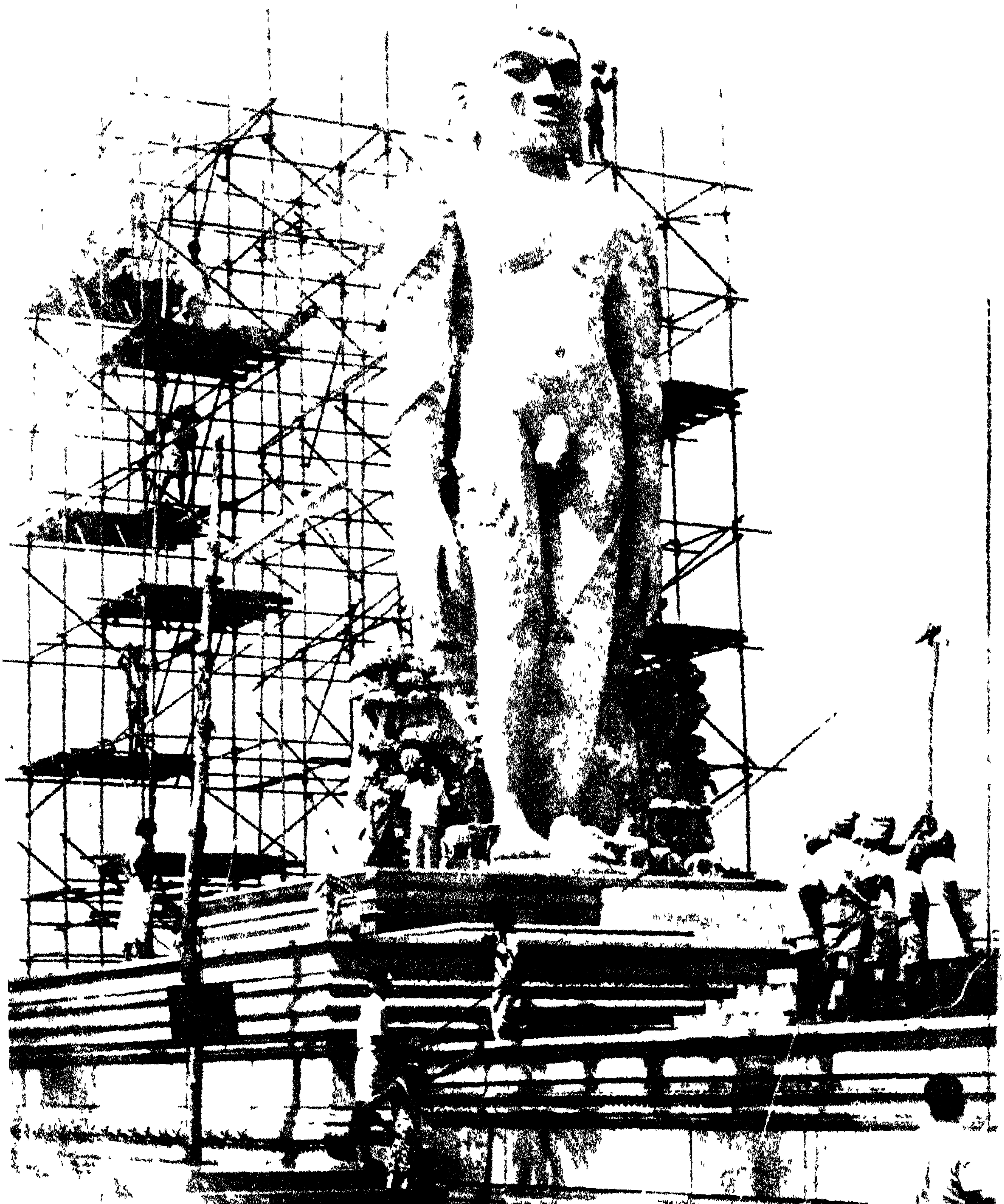






164



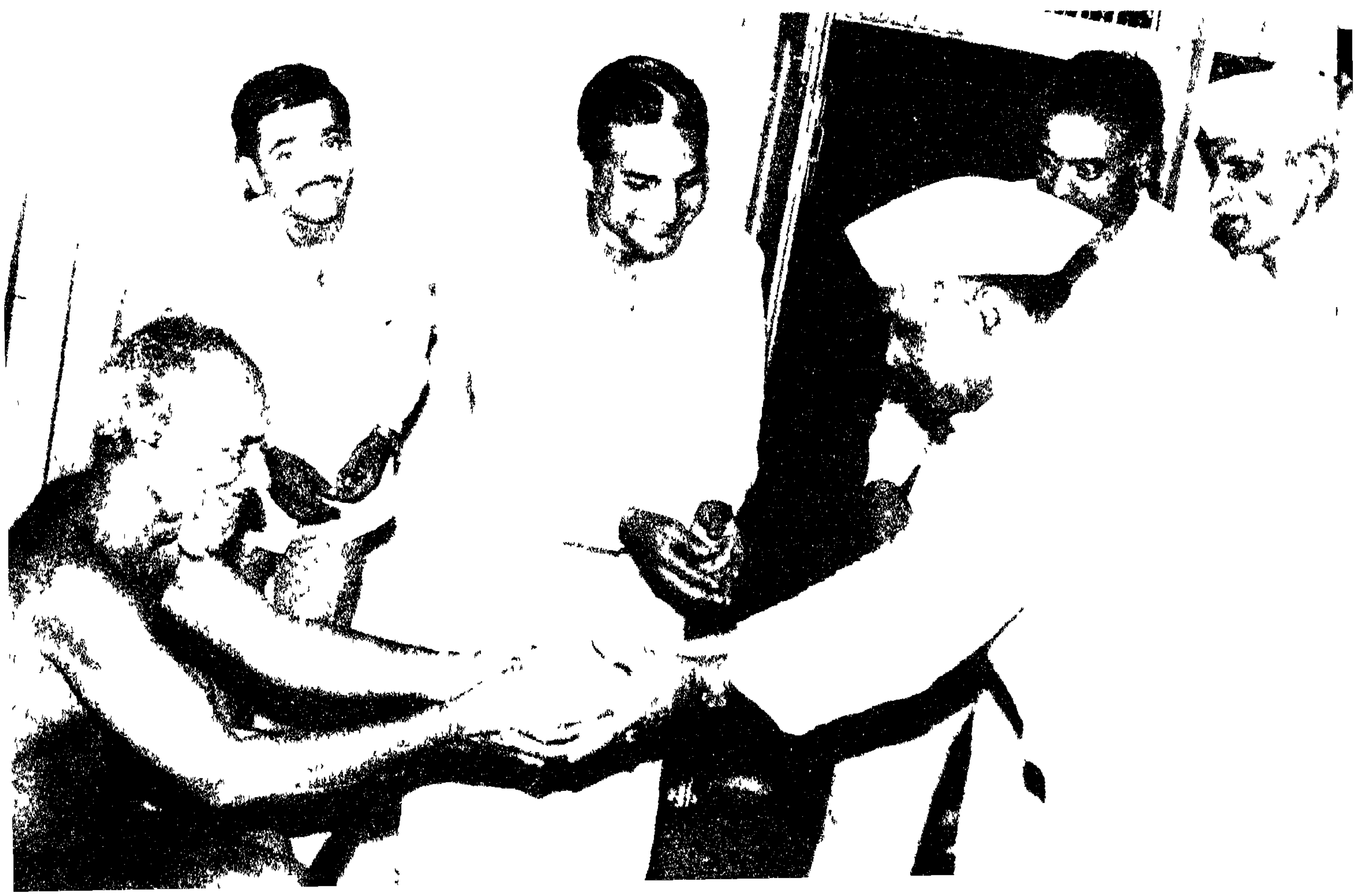





DIGAMBER JAIN MAHASAMITI







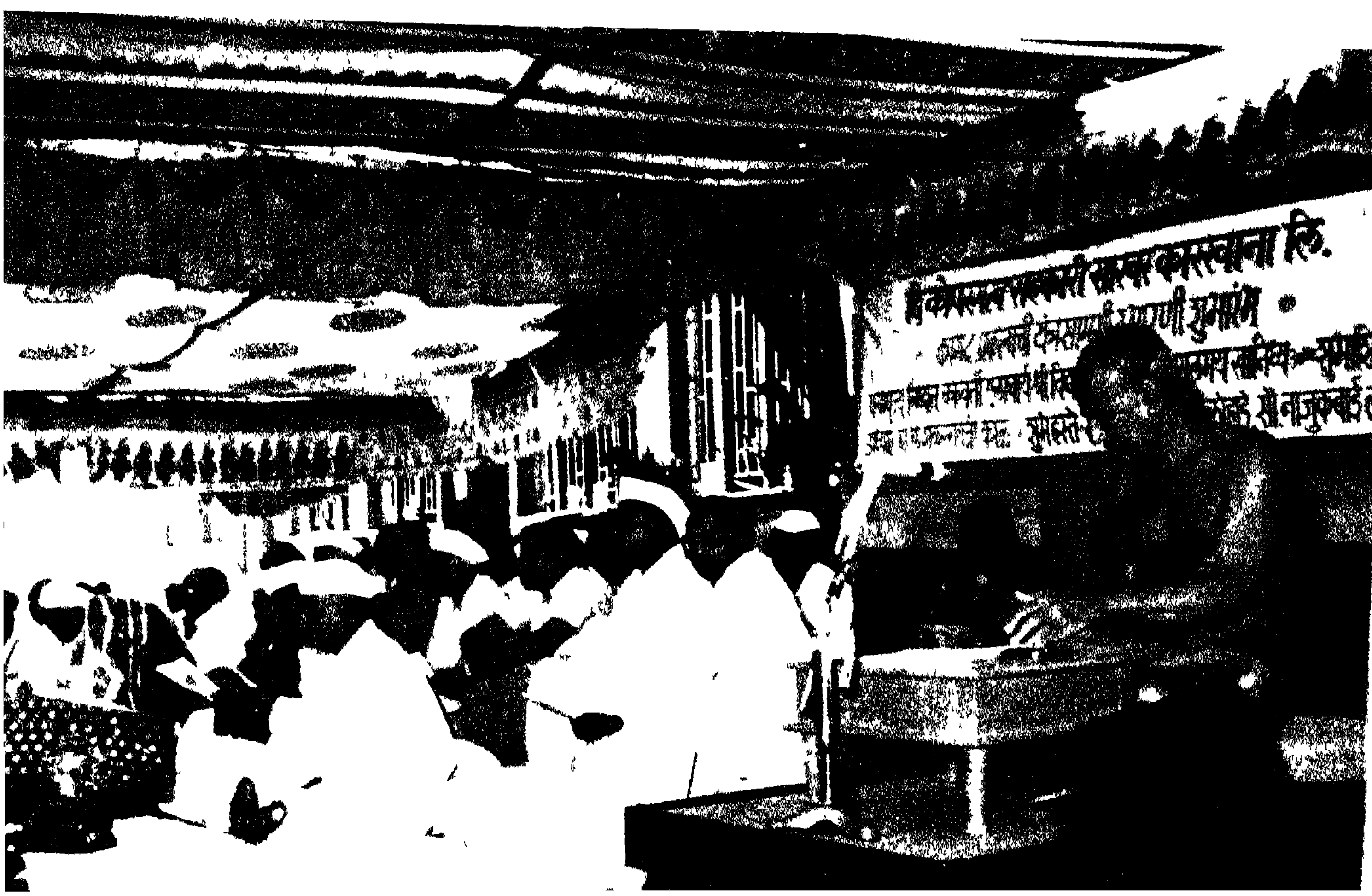


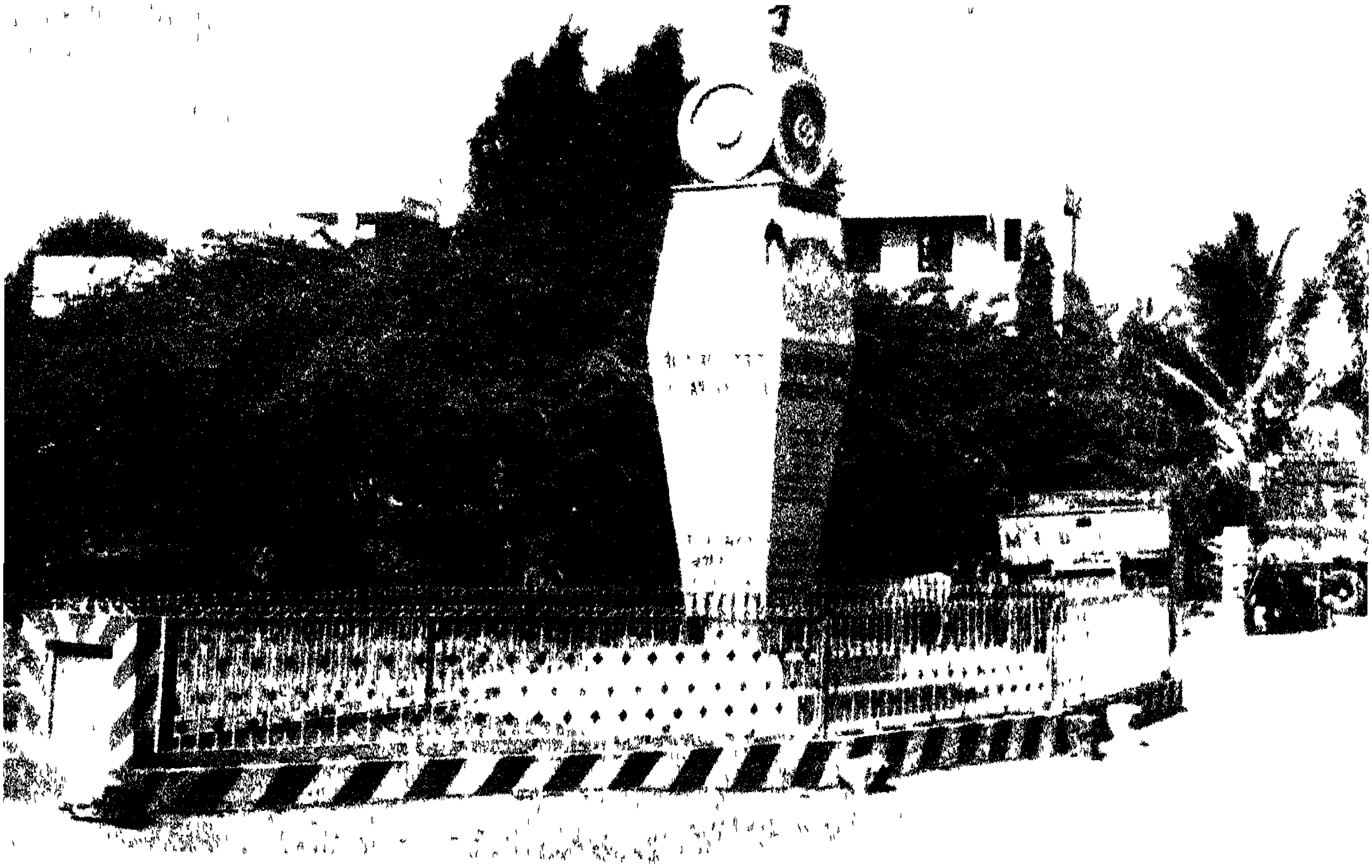









कारखाना लि.







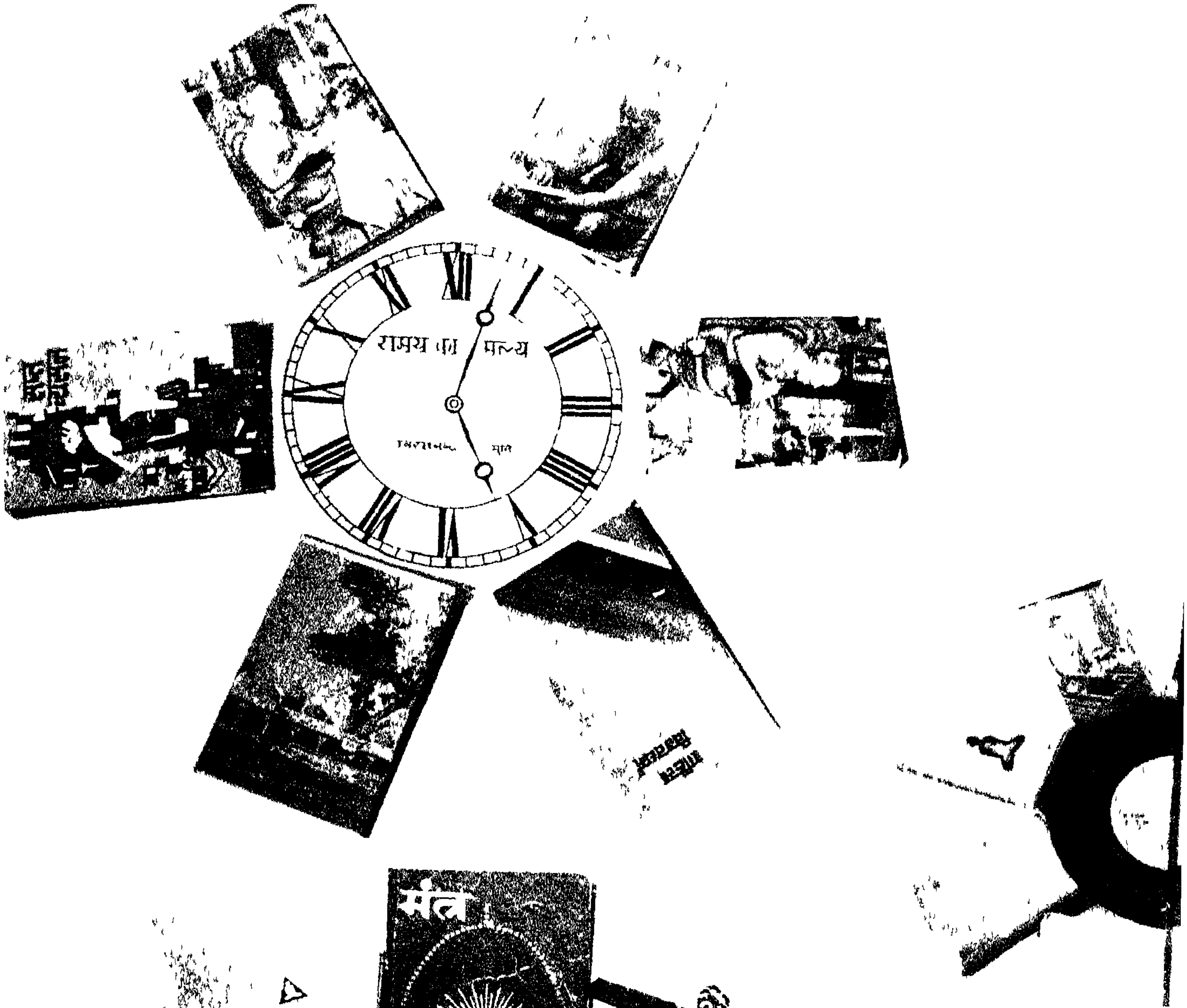






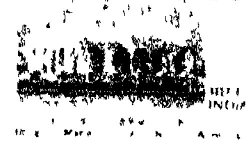



ॐ
गांधी नाथा रंगजी दिगंबर जैन बोर्डिंग स्कूल, सोलापूर
मृत महोत्सव समारंभ
रविवार दिनांक ६ मे १९८४

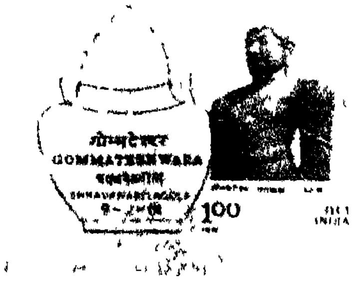

समय का मूल्य

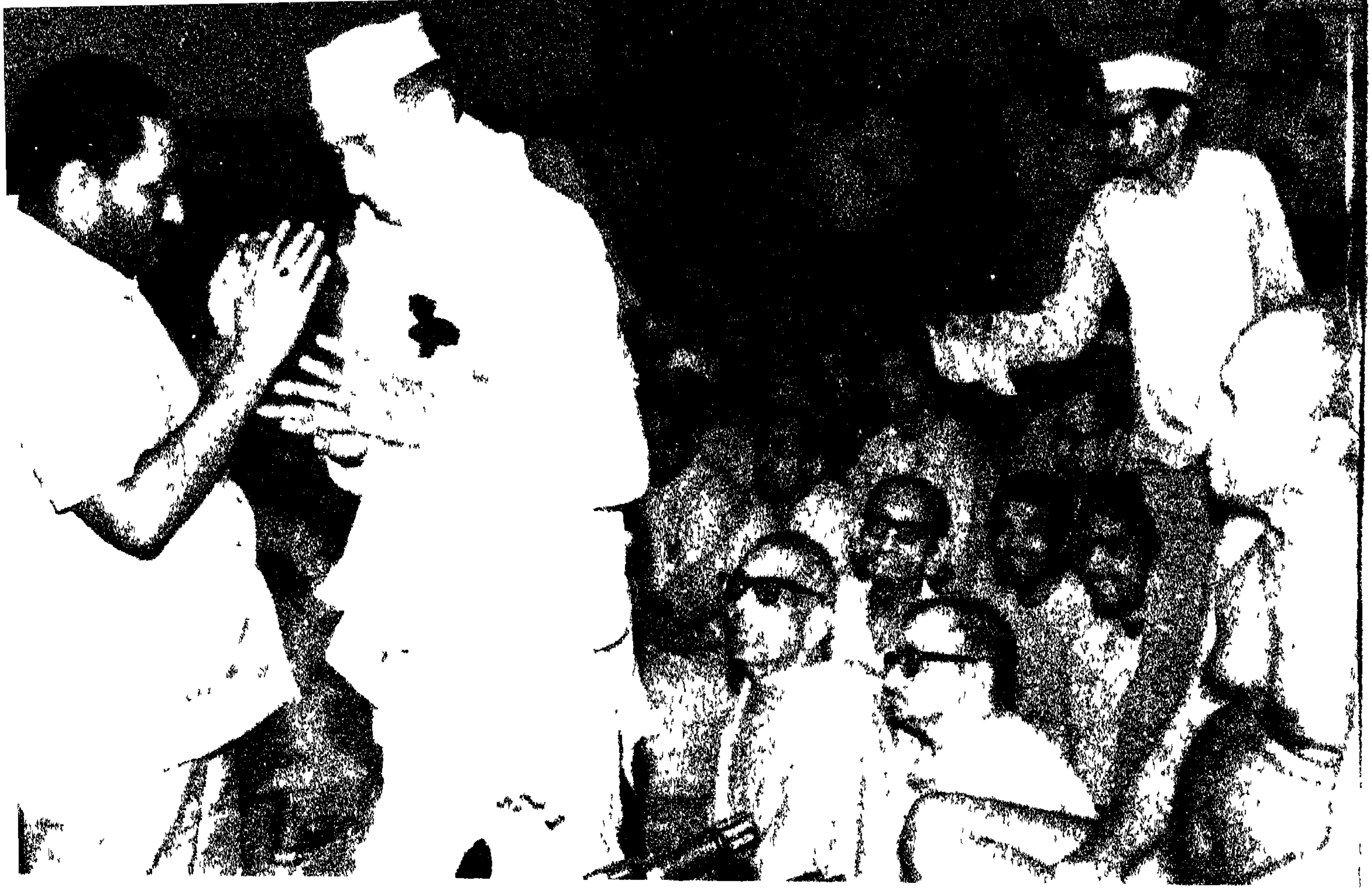

मंत्र
ज्ञानोपयो
तीर्थंकर वर्द्धमान
भक्ति रस
अगर

25









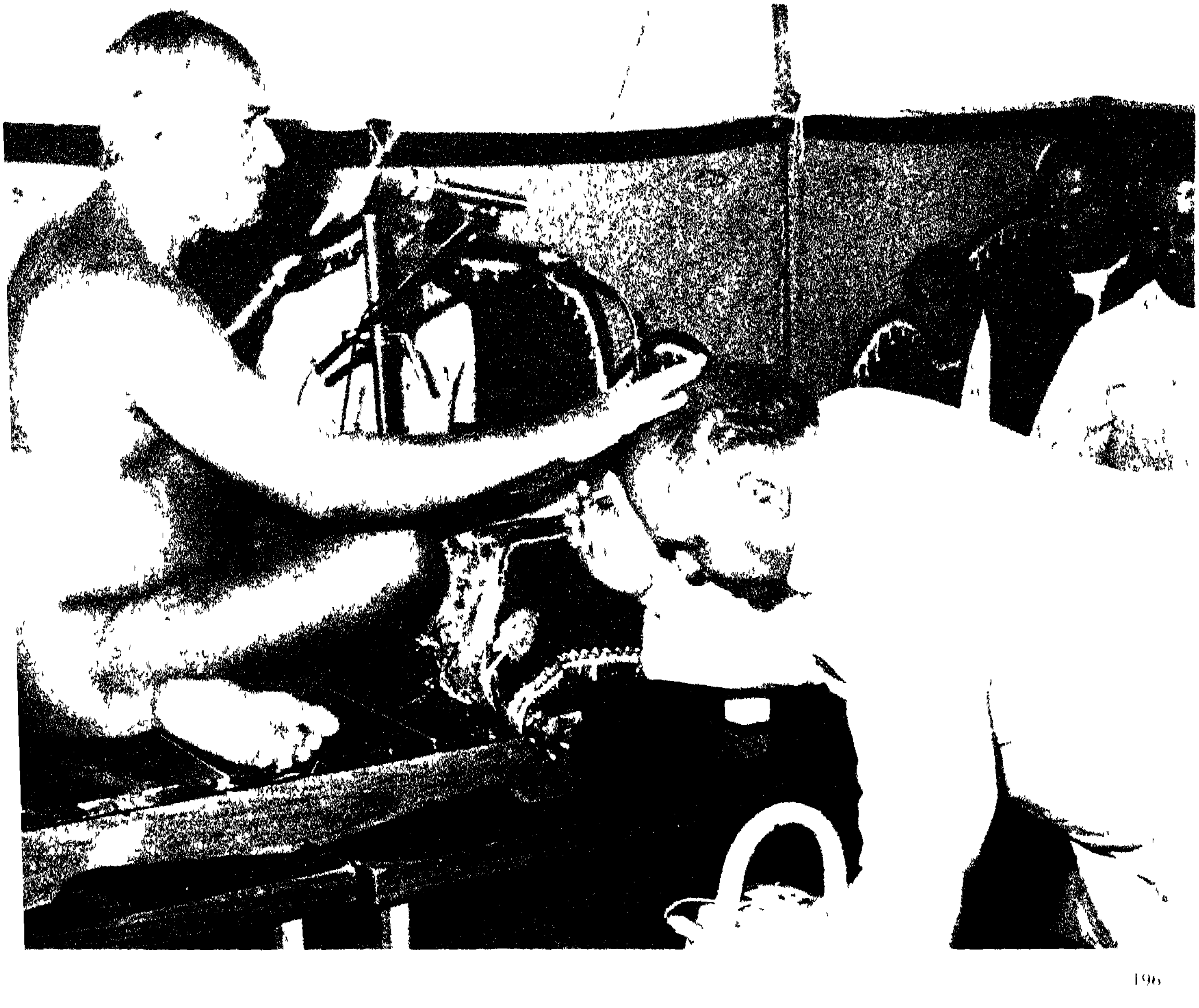








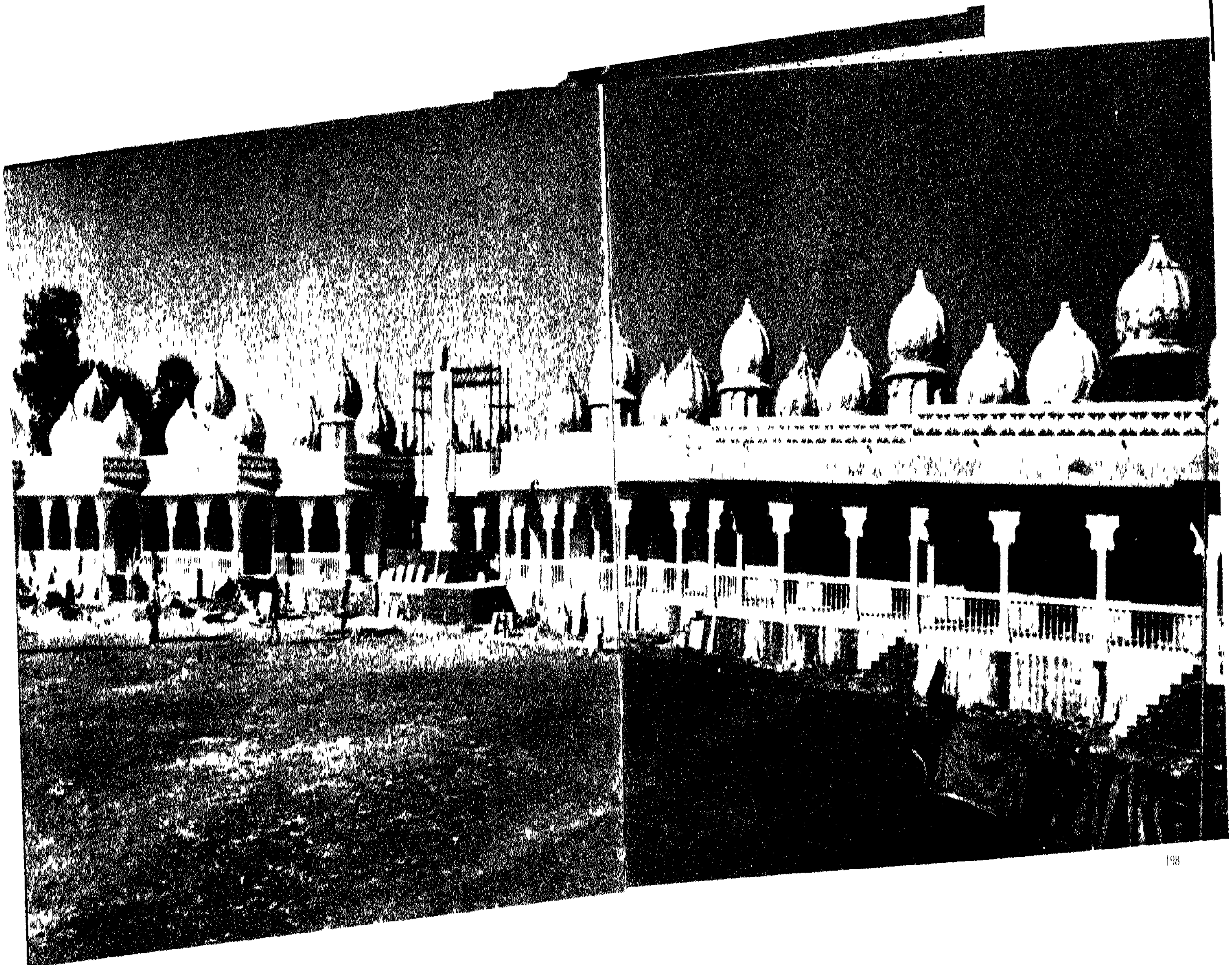
19)



196

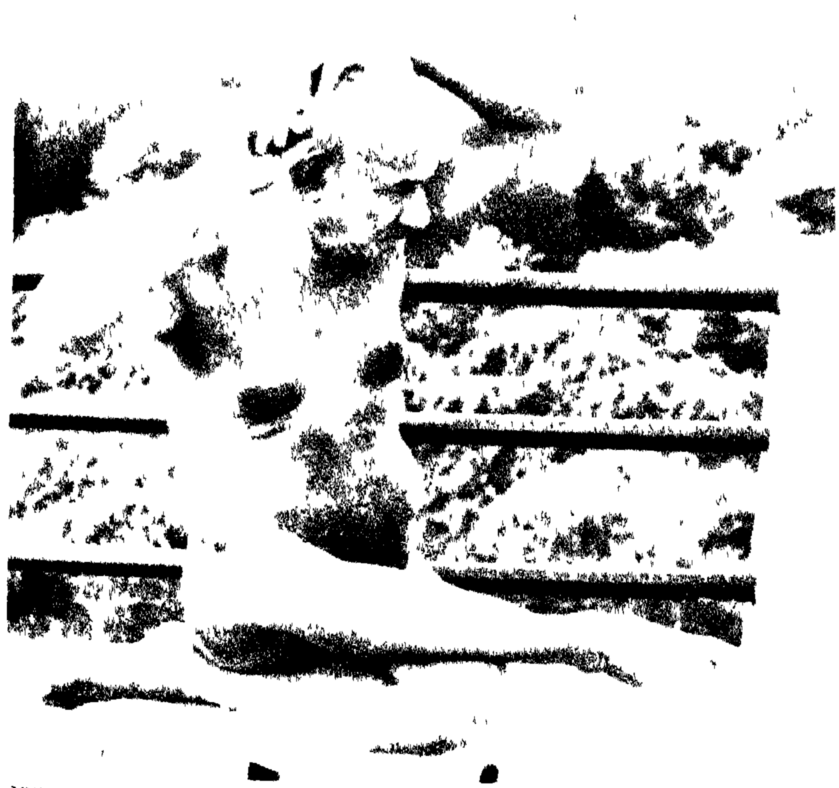








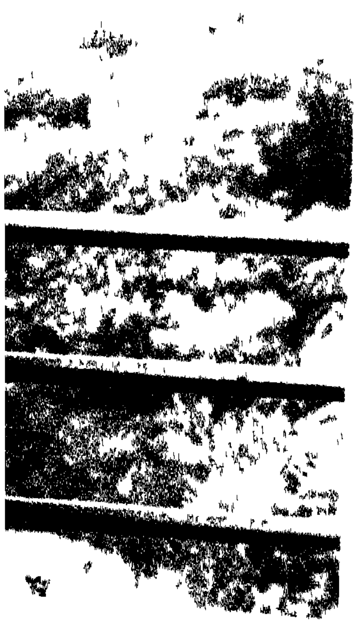
199



200



201

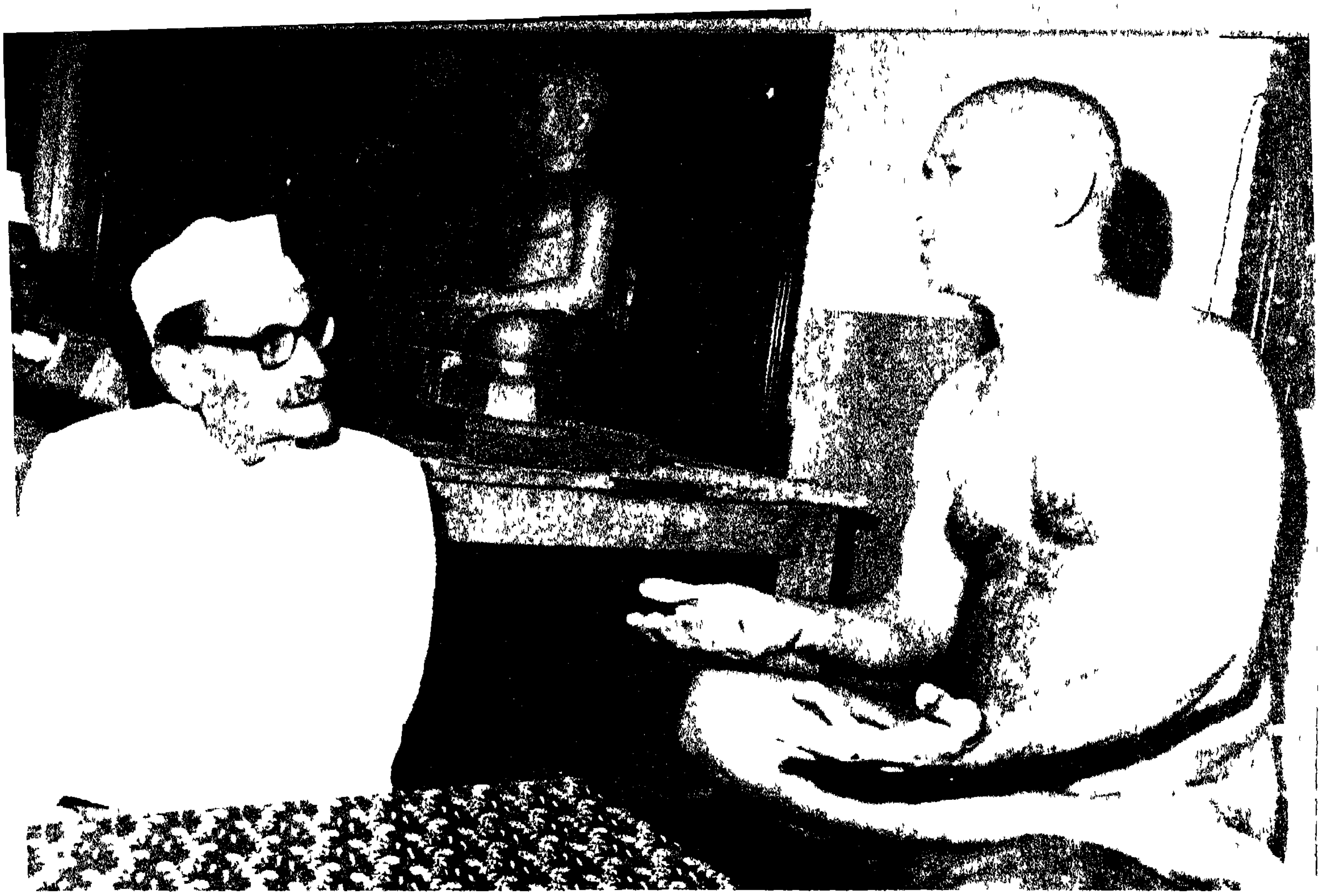




203

202









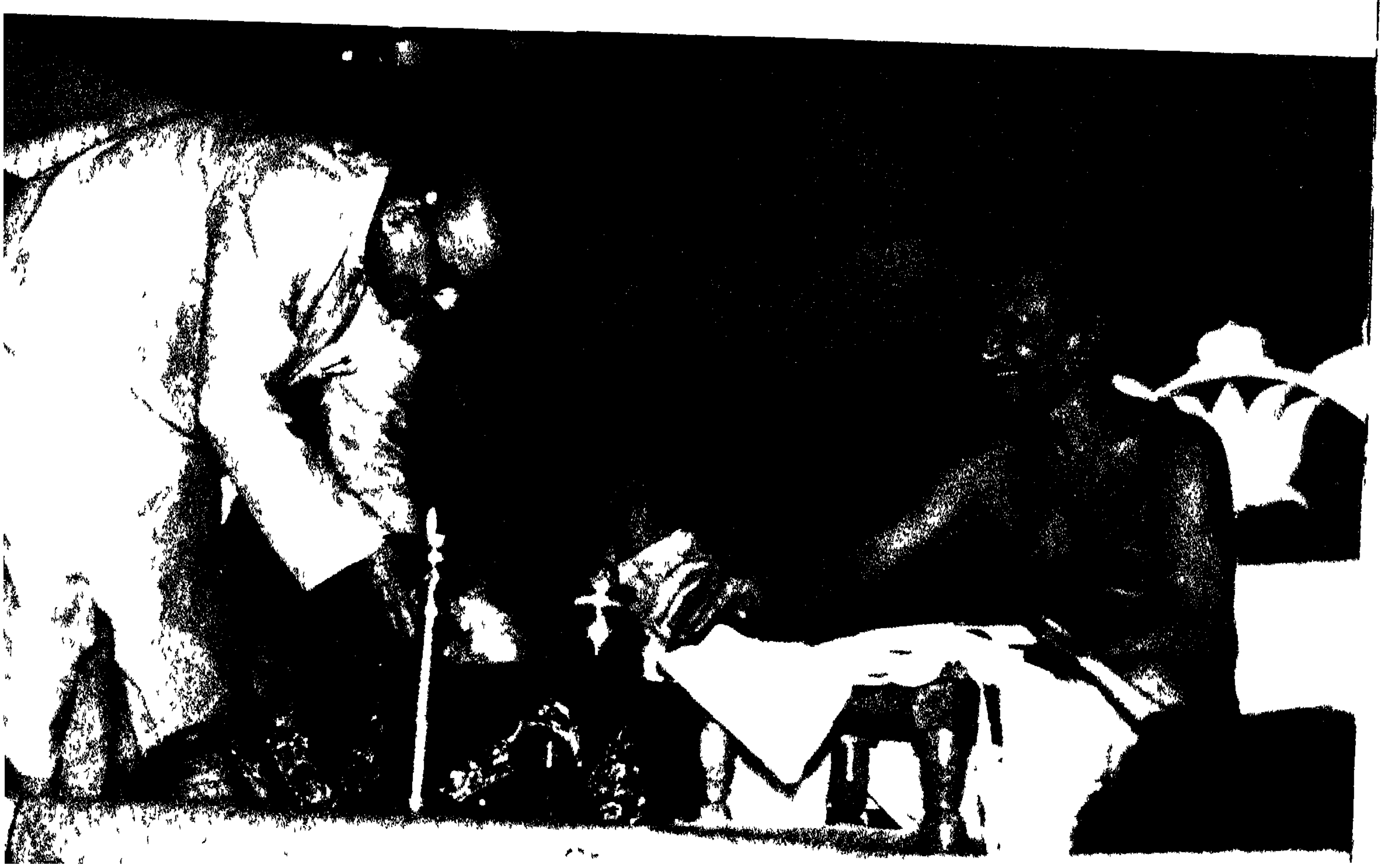
206

207





208





210



211


करता


मेरा धर्म किसी मन्दिर, मस्जिद या गुरूद्वारे तक ही
महात्मा, मठाधीश, या मुनि महाराज का धर्म नहीं है
आत्माओं का धर्म है। मेरा धर्म
जाति- विशेष,
विशेष या
-विशेष
नहीं है। यदि
"मानव-
हिंसा
नहीं माना




विश्व धर्म की



216



217



218





आचार्य रत्न श्री १०८ देश भुषण जी महागज

[illegible]

मुनि विद्यानंद

समाधिवृद्धिरस्तु सद्धर्ममंगल आशीर्वाद.

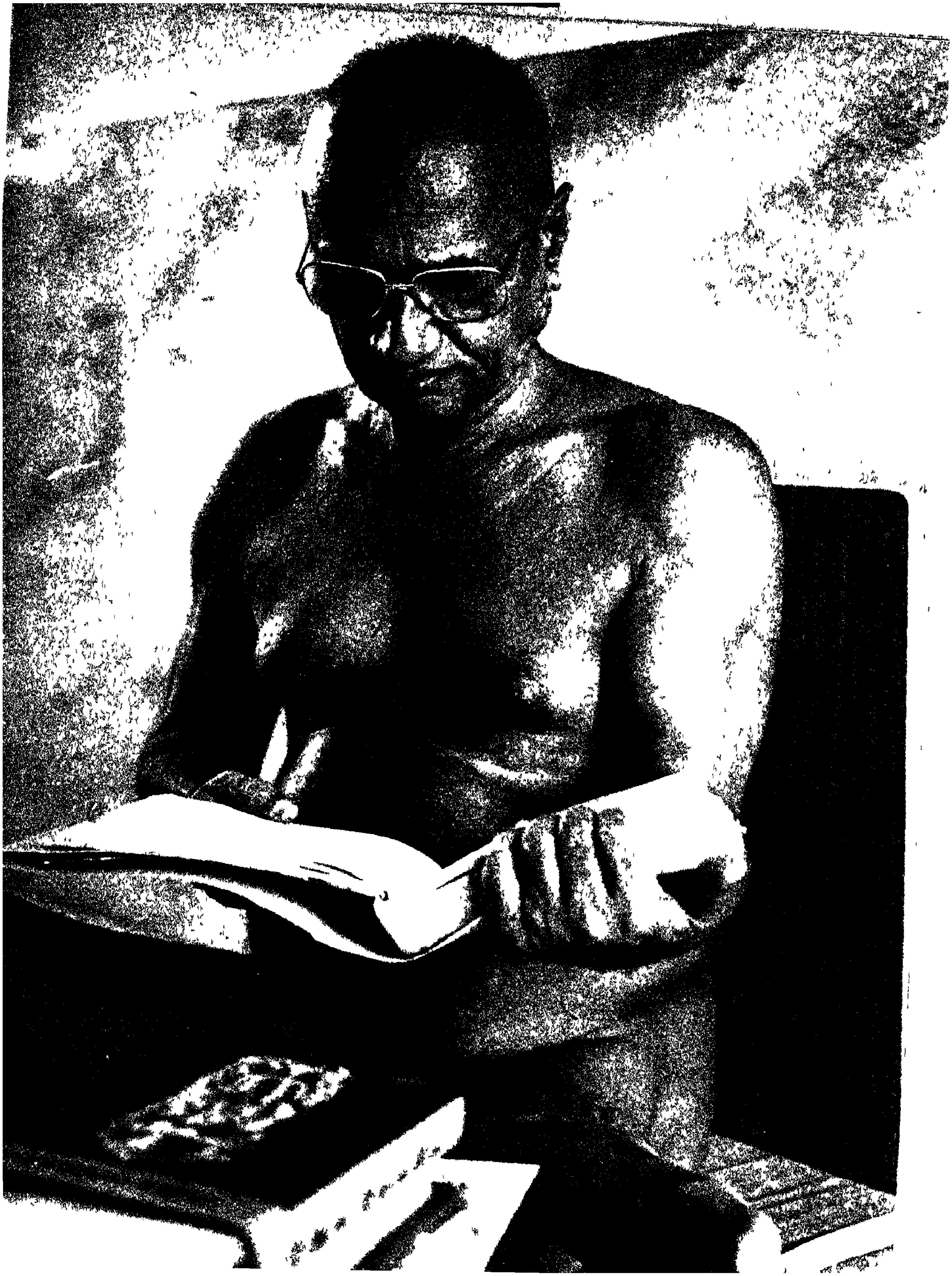
प्राचीन आचार्य परंपरा में श्रमणसंस्कृति संरक्षण एवं संवर्धन हेतु आचार्य पद का स्थान सर्वप्रथम है।

मेरे शरीर आयुकर्म के उदय से रत्नत्रय आराधना में सहयोग देने में शनैः शनैः कृश हो रहा है। अब मैं उचित समझता हूँ कि अपने परम शिष्य को नियुक्त करूँ, जो मेरे पश्चात् मेरे आसन पर पदासीन हो और धर्म प्रभावना प्रभावित करके श्री जिनशासन संवर्धन एवं श्रमणसंस्कृति का संरक्षण करें मैंने निर्णय लिया है कि मेरे पश्चात इस आचार्य पद को तुम धारण करोगे और इस पद की गरीमा को बना-कर ही नहीं रखोगे, अपितु समस्त समाज को ठीक दिशा निर्देश देकर और संघ को कुशलता पूर्वक संचालित कर अपना और मेरा नाम चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री १०८ शांतिसागरजी महाराज की परंपरा के अनुरूप ही बना-कर रखोगे।

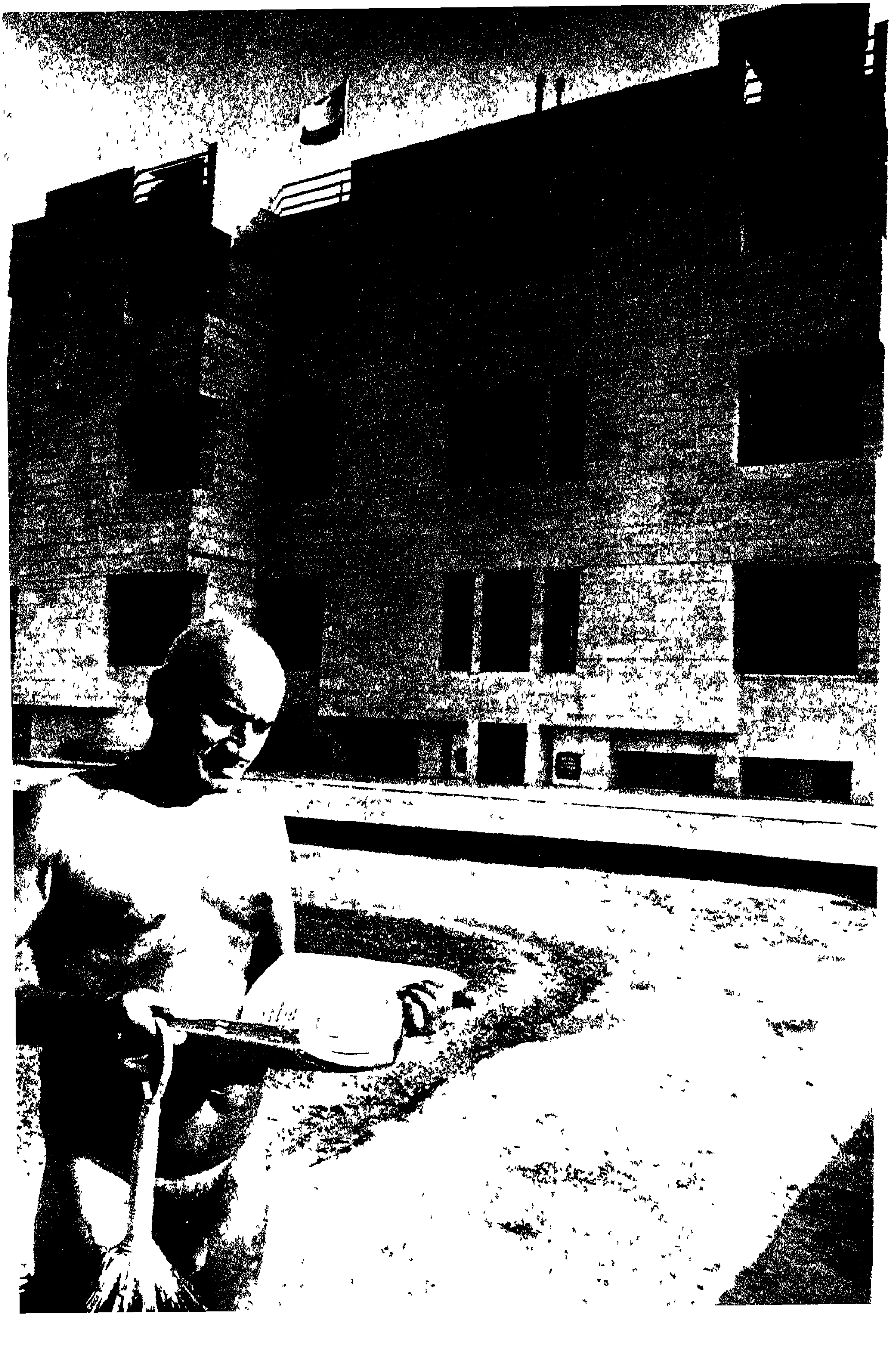
इत्याशीर्वाद

[illegible]

220



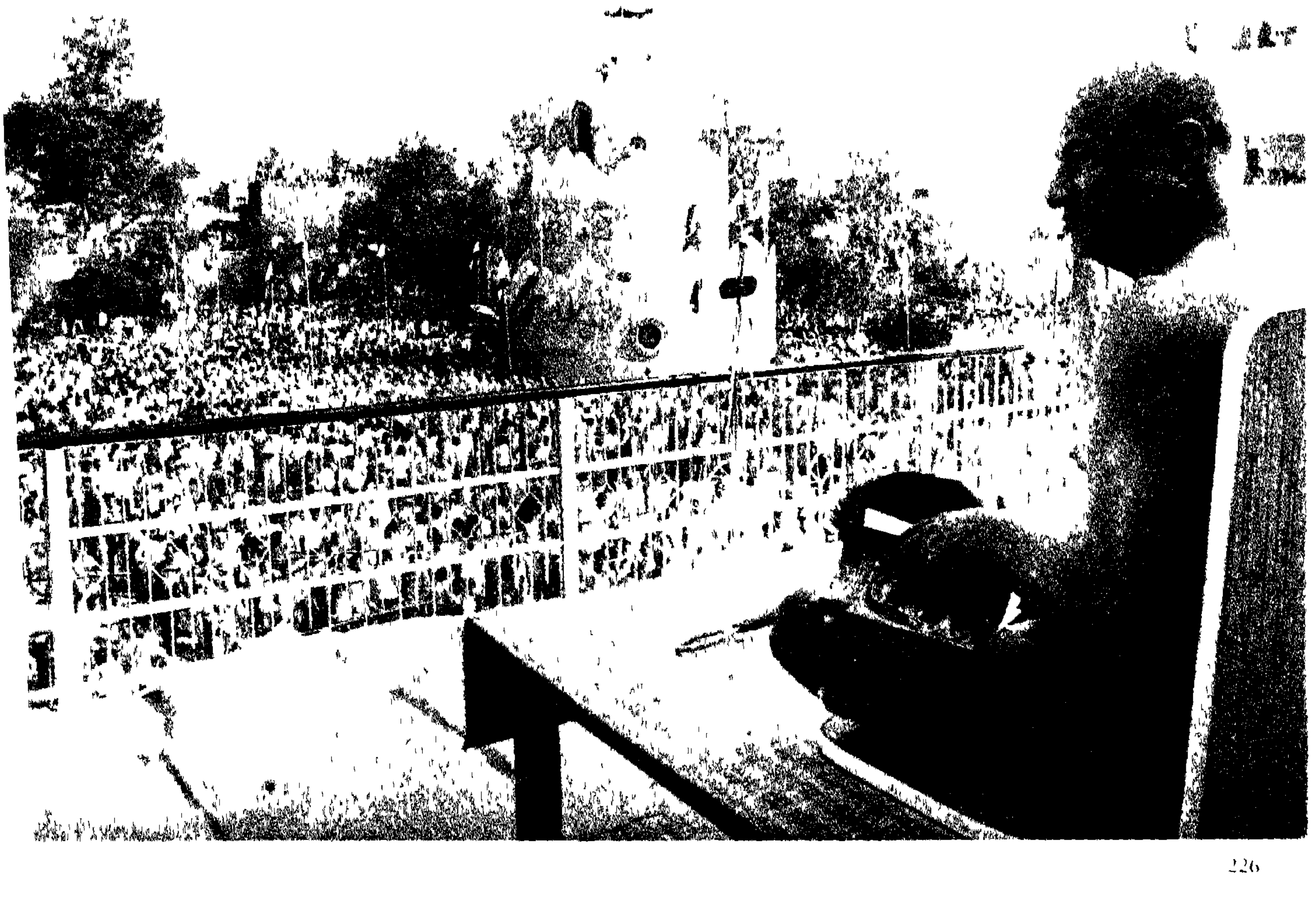






224


SHOES





22

228





229



230



231



232



233



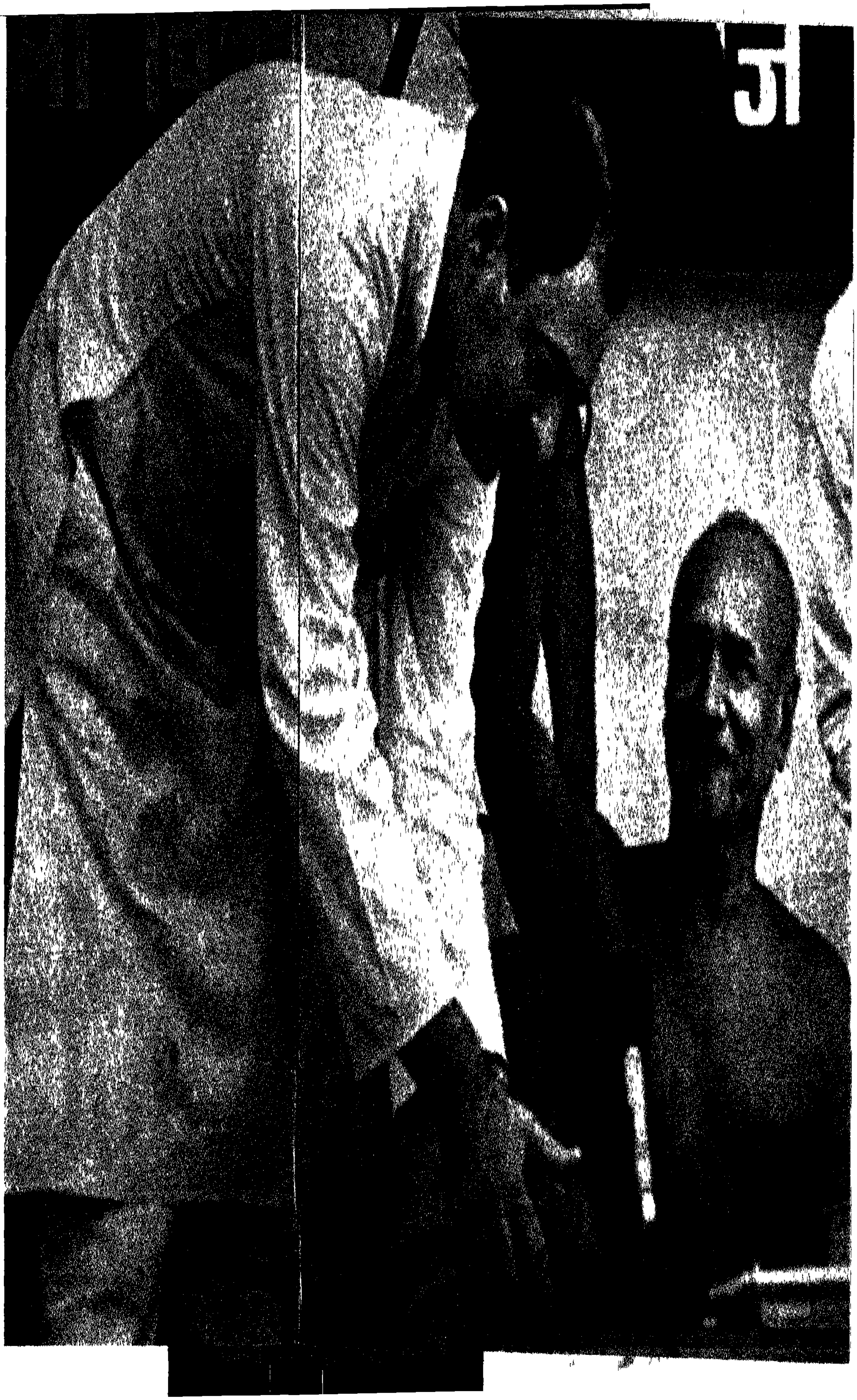
234



235




प पू. आचार्य श्री



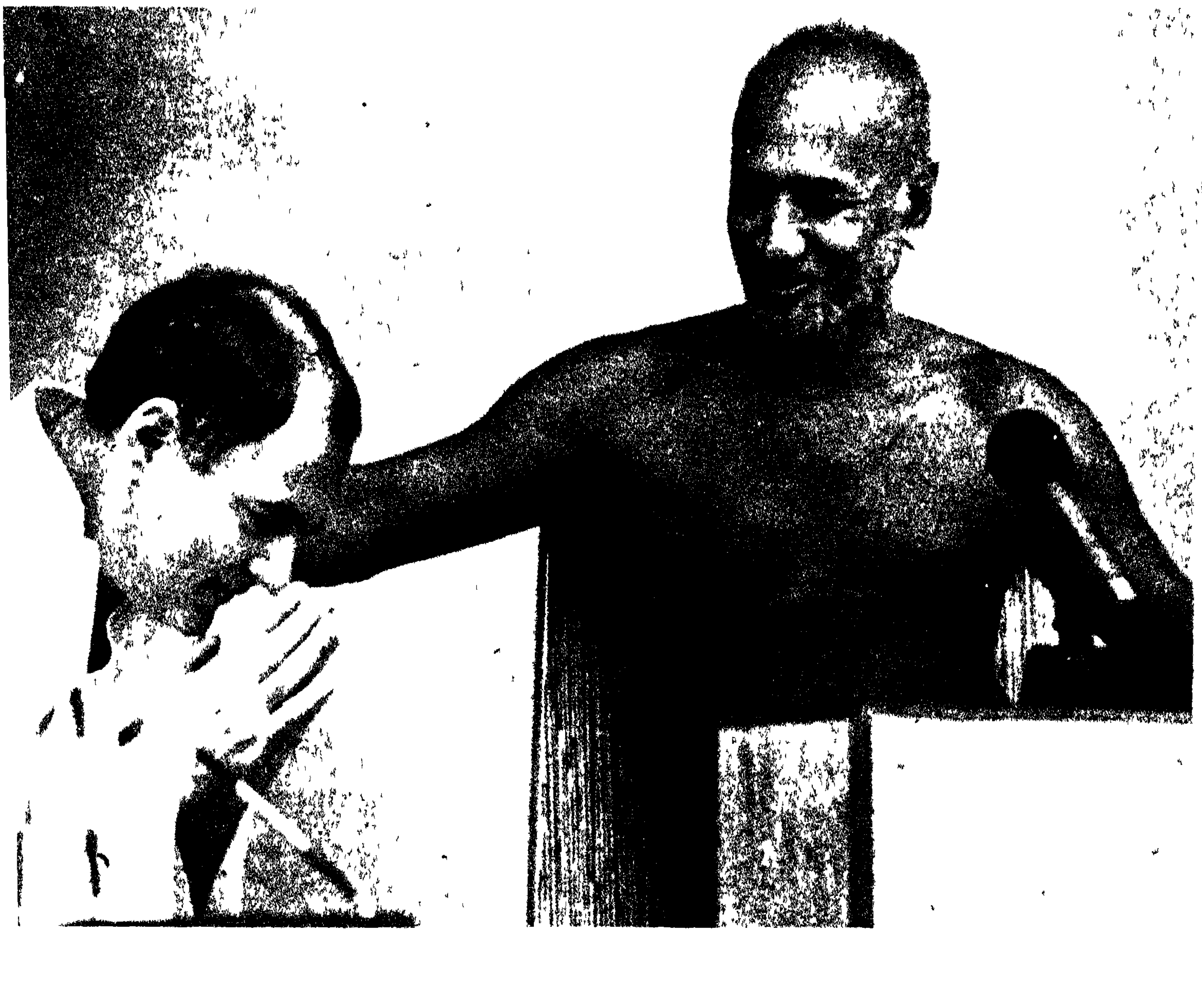
238



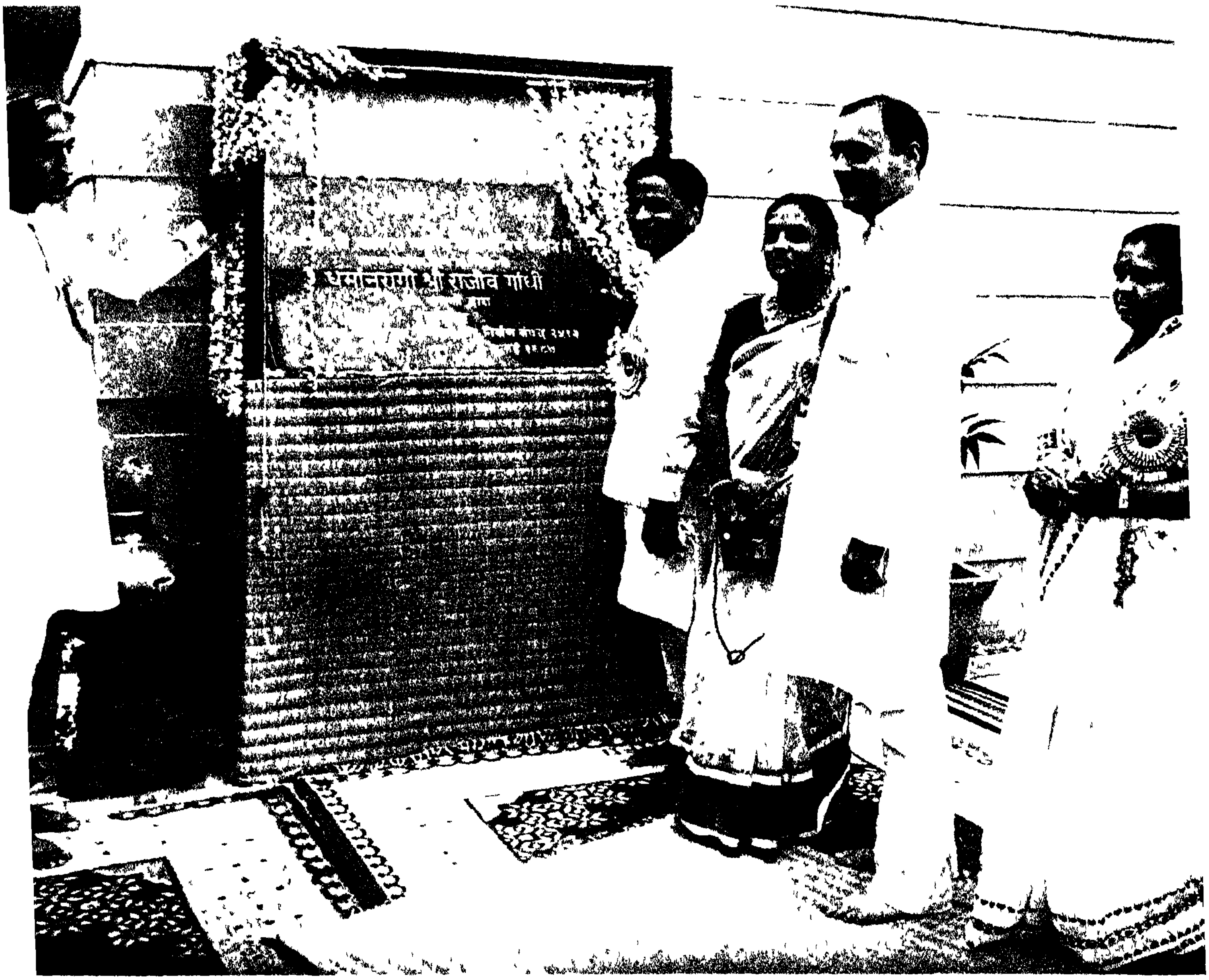
239

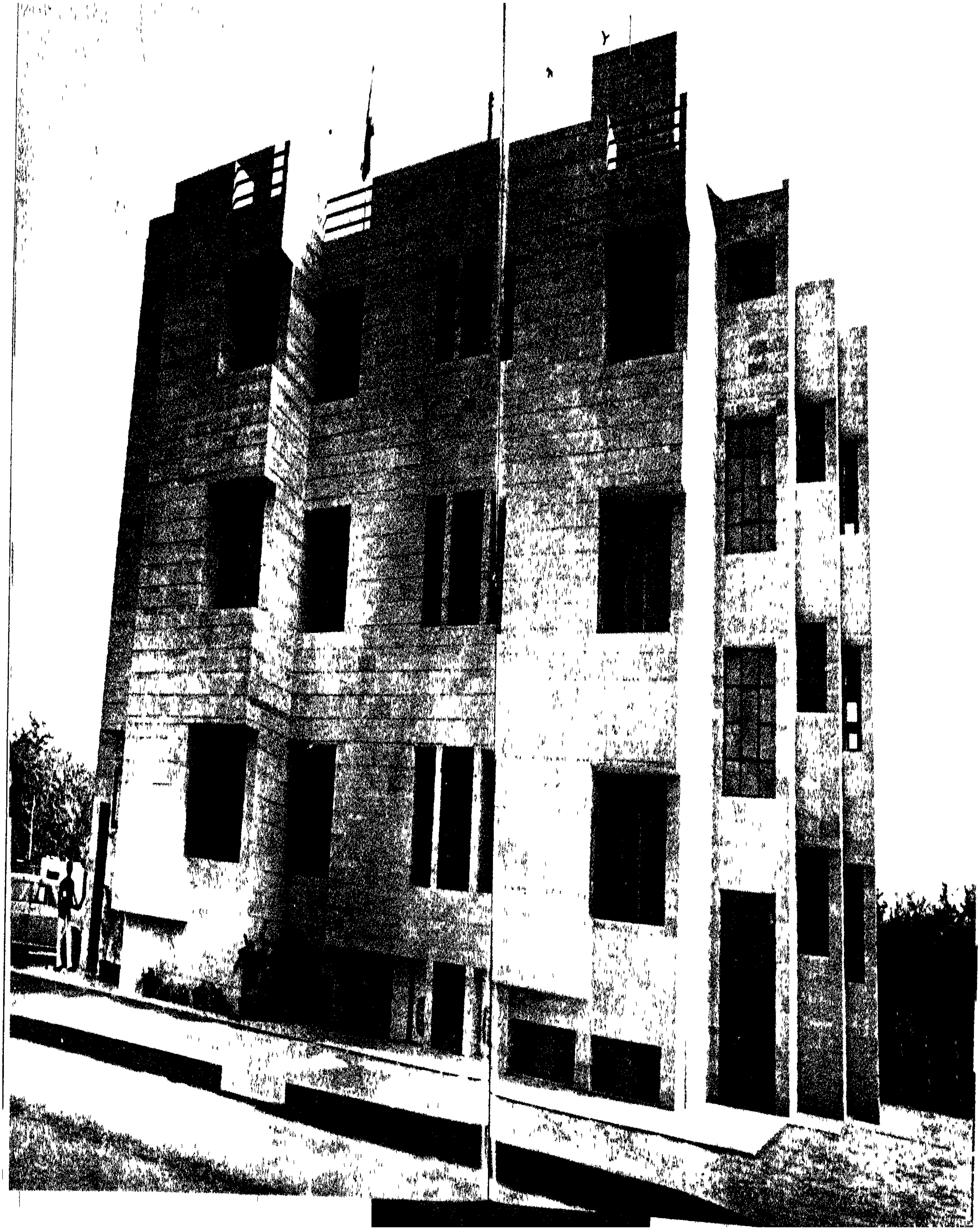
240





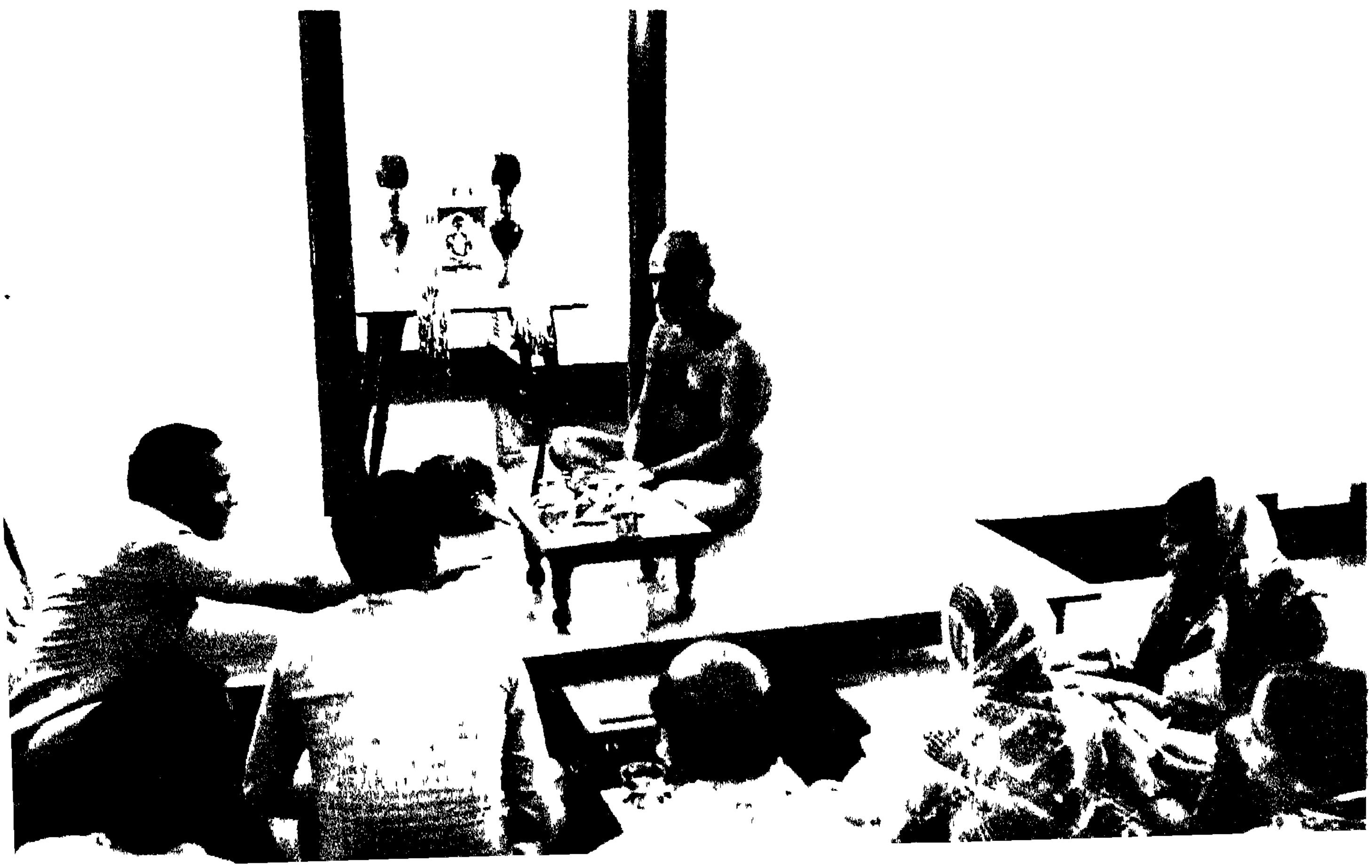



राजीव गांधी











248



249

"ॐ नमः"

परमपूज्य प्रातः स्मरणीय आचार्यश्री विद्यानन्द जी

(१)

विद्यानन्दं परमसुखदं योगिनामग्रगण्यं-
सिद्धं शान्तं विमलयशसं लोककल्याणमूर्त्तिम् ।
धर्माधारं गुणिगणमतं सर्वशास्त्रार्थसिन्धुं-
वन्दे धीरं भुवनविदितं सर्वदा चन्दनस्तम् ।।

(२)

कलानामाधारो विनयबहुलो निर्मलयशाः,
प्रसिद्धो लोकेऽस्मिन् मुनिजननुतः पण्डितमति : ।
सदाचारश्लाघ्यो विगतकलुषः सत्यनिरतः,
स विद्यानन्दोऽयं विजयतितरां तत्वनिपुणः ।।

(३)

विख्यातो गुणशालिनां गुणमयः प्रज्ञावतामग्रणी-
र्लोकानामुपकारकः प्रतिदिनं सत्येन धर्मोपमः ।
विद्याधर्म-सुराजितो गुरुकृपालब्ध प्रतिष्ठः सुधीः,
सोऽयं सर्व सुखावहो गुरुवरः सर्वत्र संराजताम् ।।

(४)

विद्यानन्दं प्रथिततपसं धर्ममूर्ति धरायां-
सेव्यं वन्द्यं प्रणतिसुखदं सत्यनिष्ठं गुणाढ्यम ।
धन्यं मान्यं भवभयहरं भ्राजमानं महान्तं-
तं विद्वांसं मुनिवरवरं धर्मसेतुं भजामः ।।

(५)

विद्यावारिधिरत्न राशिमभयं विज्ञानवेद्यं बुधं-
सत्यं प्रीतिकरं सदा सुखकरं शान्तिप्रियं सामगम् ।
रागद्वेषकषाय भावरहितं रत्नत्रयाराधिनं-
विश्वे भक्तिधरं समाजमुदितं वन्दे गुरूणां गुरुम् ।।






श्री बाहुबली विद्या
बाहुबली
गुरुकुल
न समारोह
दि १८ ते २०







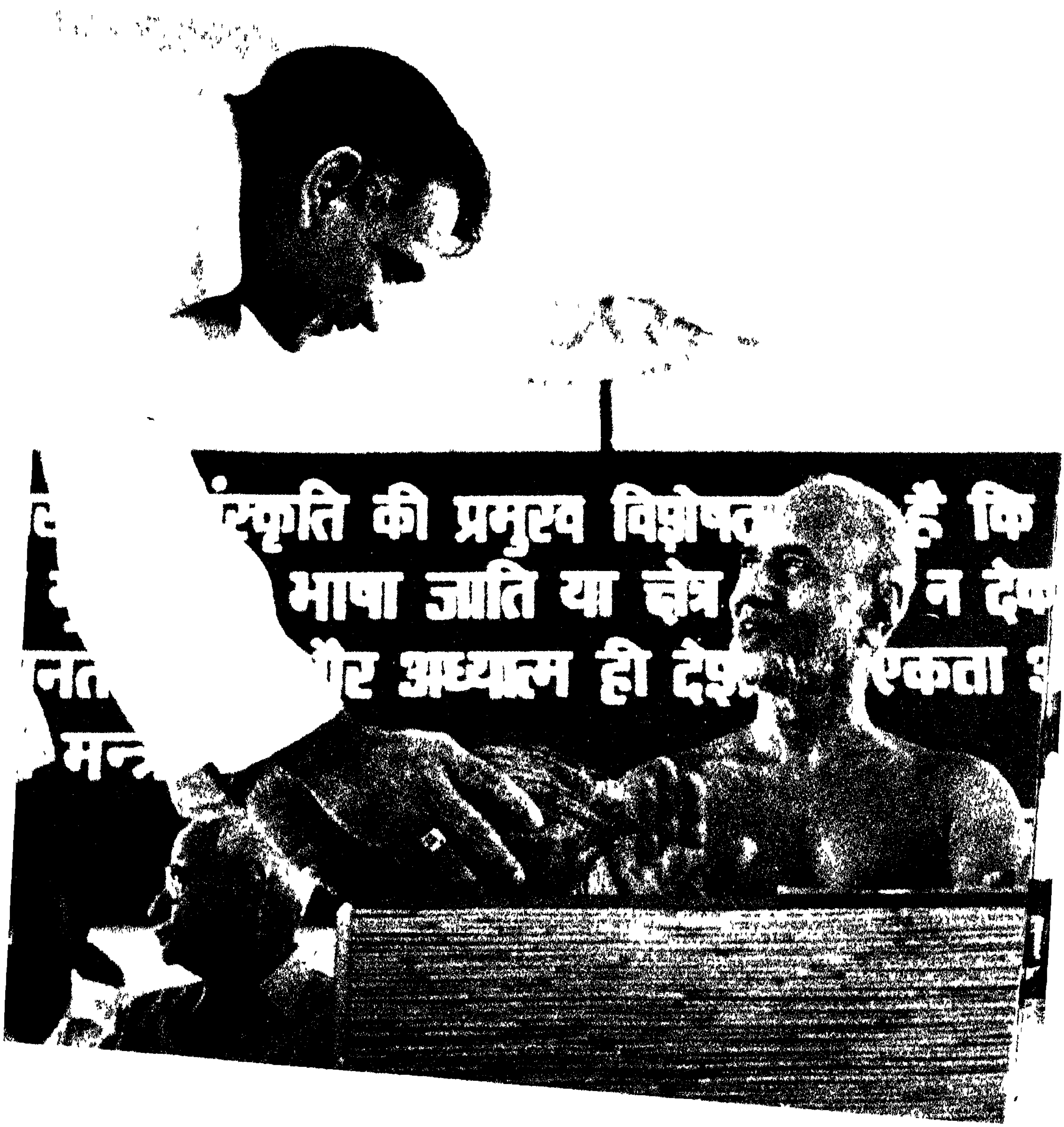
256

257





258


की प्रमुख
भाषा जाति या क्षेत्र
अध्यात्म ही
एकता



260


भारतीय
की प्रमुख
मुनियों
जाति
अध्यात्म
मन्त्र है।





263

भक्तों के बीच आचार्य श्री विद्यानंदजी



स्व श्री प्रतापसिह जैन



स्व श्रीमती इलायची देवी जैन



श्रीब्रिजकिशार जैन, श्रीमती ऊषा जैन



श्री नन्नूलाल फतेह चन्द्र जैन



श्री प्रमोद कुमार जैन



श्री नानगराम जैन



श्री कश्मीर चन्द्र गोधा



श्री सुरेश चन्द्र जैन, श्रीमती स्नेह जैन



श्री प्रेम मादीपुरिया



श्री कैलाशचन्द्र जैन



श्री ओम प्रकाश जैन



श्रीमती जयमाला जैन



श्री अगनलाल जैन, श्री सतीश जैन



श्री एन पी जैन



श्री विशालचन्द्र जैन

भक्तों के बीच आचार्य श्री विद्यानंदजी



श्री बी पी जैन



श्री विपिन जैन



उपराष्ट्रपति श्री गोपाल स्वरूप पाठक, श्रमण जैन भजन प्रचारक संघ द्वारा आयोजित महावीर जयंती के अवसर पर। डॉ सरयू दोषी, डॉ एल एम सिंघवी, श्री विनोद दोषी। श्री धर्मराजा। डॉ ए एन उपाध्याय को वृषभदेव संगीत पुरस्कार से सम्मानित समारोह में डॉ कोठारी।



स्व श्री दीवान चन्द्र जैन



स्व श्रीमती प्रकाशवती जैन

चित्र परिचय

आवरण युगद्रष्टा प्रज्ञापुरुष आचार्यश्री विद्यानन्दजी। आभ्यंतर पृष्ठ (क्रमश) चिरपरम्परागत पच परमेष्ठी का प्रतीक जैन ध्वज, जिसका लाल रग सिद्धो का पीला रग आचार्यों का, सफेद रग अर्हन्तो का, नीला रग उपाध्यायो का और काला रग सर्व साधुओ का प्रतीक है। सर्वधर्म समन्वय। (रगीन चित्र) दुर्धर्ष तपोनिधि अध्यात्ममार्तण्ड आचार्यश्री विद्यानन्दजी।

१ सुरेन्द्र उपाध्ये के यशस्वी पिताश्री कालप्पाण्णा उपाध्ये एव यशस्वी माताश्रीमती सरस्वती देवी उपाध्ये। २ बालक सुरेन्द्र उपाध्ये। ३ शेडवाल (कर्नाटक) स्थित पैतृक गृह जहा सुरेन्द्र उपाध्ये का २२ अप्रैल १९२५ को जन्म हुआ। ४ श्री नेमिनाथ विद्यालय शेडवाल (कर्नाटक)। यहा सुरेन्द्र उपाध्ये ने १९३८ ई मे सस्कृत सगीत एव धर्म की शिक्षा प्राप्त की। ५ सुरेन्द्र उपाध्ये की जन्म पत्रिका। ६ सुरेन्द्र उपाध्ये की हस्त रेखाए। करसामुद्रिक समीक्षानुसार जातक की जीवन-स्थिति १०१ वर्ष होगी स्वास्थ्य अच्छा रहेगा और कोई विषम असाध्य रुग्णता नही होगी। ७ आचार्यश्री के चरण-युगल दीक्षा-मासोपरान्त (१९६३)। **७ए और ७बी** नालाजना नृत्य प्राचीन कला कलिया। **७सी** तीर्थंकर वदना। ८ श्री दिगम्बर जैन मन्दिर शेडवाल (कर्नाटक) स्थित भगवान् शान्तिनाथ की मनोज्ञ प्रतिमा जिसके सम्मुख युवा सुरेन्द्र उपाध्ये ने १९४० ई मे आजीवन ब्रह्मचर्य का सकल्प किया और स्वय को आत्मकल्याण और लोकहित के प्रति समर्पित कर दिया। ९ श्री दिगम्बर जैन शान्तिनाथ मन्दिर शेडवाल। १० निर्भीक सुरेन्द्र उपाध्ये का राष्ट्रीय स्वाधीनता सग्राम के लिए सत्याग्रह और सक्रिय योगदान शेडवाल स्थित उच्च वृक्ष पर अपनी टोली सहित राष्ट्रीय ध्वज तिरगा फहराया। ११ क्षुल्लक पार्श्वकीर्ति चातुर्मास के उपरान्त बेलगाम के समस्त श्रावकगण द्वारा पालकी मे शोभा यात्रा (१९६०)। १२ मुनिदीक्षा से पूर्व (१९६३) आचार्यश्री देशभूषणजी द्वारा श्रावक शिरोमणि साहू शान्तिप्रसादजी से विचार विमर्श। **१३** दीक्षागमन का आग्रह (१९६३) दीक्षापूर्व शोभायात्रा। **१४** दीक्षाविधि और केशलोच (१९६३)। दीक्षागुरु आचार्यश्री देशभूषणजी द्वारा। **१५** क्षुल्लक पार्श्वकीर्ति द्वारा और दीक्षागुरु द्वारा केशलोच (१९६३)। **१६** मुनि दीक्षा के पश्चात् (१९६३) ध्यानस्थ मुद्रा मे। **१७** मुनि दीक्षा से पूर्व प्रवचनरत (१९६३)। १८ वन्य प्राणी सप्ताह (१९६४) श्रीरामनिवास मिर्धा के साथ। **१९** मगल प्रवचन जयपुर मे एक विदेशी महिला श्रमण सस्कृति के विषय मे अपने विचार प्रकट करती हुई। २० चातुर्मास के पश्चात् जयपुर से विदाई (१९६४)। २१ वन्य प्राणी सप्ताह पर जयपुर मे जलूस (१९६४) पूज्य मुनिश्री का मगल सान्निध्य। २२ रक्षा बन्धन के पावन अवसर पर राजस्थान के राज्यपाल डा सम्पूर्णानन्द के साथ (१९६४)। **२३** मुनिश्री का मगल सान्निध्य जयपुर (१९६४) राजस्थान के मुख्यमत्री श्री मोहनलाल सुखाडिया के साथ। **२४** दशलक्षण पर्व सन्दर्भ आदर्श नगर जयपुर (१९६४) भारी उपस्थितिमय आहेन स्टेड का दृश्य। २५ जयपुर से विदाई (१९६४)। २६ हरिजनो का मगल उद्बोधन आगरा (१९६५)। **२७** मगल प्रवचन आगरा (१९६५) साध्वियो से विचार विमर्श। २८ जामा मस्जिद के मौलवी मुफ्ती साहब से चर्चा आगरा (१९६५)। **२९** नई पौध (बालक कुक्कू) से नमोकार मत्र श्रवण (१९६५)। ३० चातुर्मास विषयक विचार विमर्श आगरा (१९६५)। **३१** भक्त श्रावकगण को मगल उद्बोधन (१९६५) क्षुल्लक ऋषभ सागर की मगल उपस्थिति। ३२ महावीर जयन्ती समारोह रामलीला मैदान आगरा मे मगल प्रवचन (१९६५) अपार जनसमूह। **३३** मगल प्रवचन (१९६५) नामधारी सिक्खो की विशेष उपस्थिति। **३४** मगल प्रवचन सभा (१९६५) सुनाता जामुदा द्वारा भजन प्रस्तुति। **३५** दिल्ली मे मगल प्रवेश (१९६६) महापौर श्री नूरुद्दीन अहमद द्वारा भव्य स्वागत। **३६** दिल्ली मे मगल प्रवेश (१९६६) उप महापौर ला दशराज चौधरी द्वारा आभार ज्ञापन। **३७** भारतीय ज्ञानपीठ प्रथम पुरस्कार सन्दर्भ (१९६६) पुरस्कार प्रतीक वाग्देवी मूर्ति की प्रतिकृति के विषय मे चर्चारत साहू शान्ति प्रसाद जैन। **३८** मुनिश्री एव श्रीकाजी स्वामी के मगल सान्निध्य मे दिल्ली के श्रावकबन्धु (१९६६) प कैलाशचद्रजी शास्त्री (वाराणसी) एव प फूलचदजी सिद्धान्तशास्त्री। **३९** मुनिश्री का मगल सान्निध्य दिल्ली (१९६६) प्रधानमत्री श्री मोरारजी देसाई के साथ। **४०** मुनिश्री का मगल प्रवेश दिल्ली (१९६६) रक्षामत्री श्री यशवन्तराव चव्हाण के साथ। **४१** मुनिश्री केशलोचरत दिल्ली (१९६६)। **४२** श्री दिगम्बर जैन मन्दिर बैदवाडा दिल्ली की कलाकृतियो की प्रशसारत (१९६६)। **४३** श्री दिगम्बर जैन मन्दिर लोहा मडी के प्रवेश द्वार पर (१९६६)। **४४** श्री दिगम्बर जैन चैत्यालय मे देव-वन्दना। **४५** चातुर्मास स्थापना समारोह अविचल भक्तो के बीच दिल्ली (१९६६)। **४६** चातुर्मास स्थापना समारोह मेरठ (१९६७) चातुर्मास समिति के सदस्यो के बीच। **४७** मान्टेसरी स्कूल के अध्यापक अध्यापिकाओ के बीच सहारनपुर (१९६९)। **४८** जैन पाठशाला सब्जीमडी के छात्रो के मध्य

(१९६९) क्षुल्लिका ज्ञानमती माताजी की मगल उपस्थिति। ४९ भक्त श्रावकगण के मध्य जैन बाग सहारनपुर (१९६९)। ५० हिमालय स्थित श्रीबद्रीनाथ धाम की मगल यात्रा से लौटते हुए (१९७०) भारत-चीन सीमा क्षेत्र स्थित माणा गाव। ५१ हिमालय की उत्तुग गोद में (१९७०) टेहरी-गढवाल स्थित नदी किनारे। ५२ श्राविका प्रवर्य श्रीमती रमारानी जैन से आहार ग्रहण नजीबाबाद (१९७०)। ५३ तीर्थधाम हरिद्वार में मगल प्रवचन (१९७०) ५४ हिमालय में बद्रीनाथ धाम से नीलकठ शिखर तक। ५५ हिमालयवर्ती एकान्त स्थल मे एकान्त चिन्तन। ५६ वैष्णव कालेज इन्दौर के प्रागण में मगल प्रवचन (१९७१)। ५७ मगल प्रवचन श्रवण में लीन नर-नारियो का विशाल जनसमूह। ५८ मगल चातुर्मास के लिए सेठ हीरालाल और सेठ राजकुमार सिह कासलीवाल विनम्र प्रार्थनारत। ५९ इन्दौर प्रवेश के अवसर पर श्वेताम्बर आचार्यश्री जनक विजय महाराज द्वारा भव्य स्वागत (१९७१)। ६० इन्दौर मे आचार्य शान्तिसागरजी के कीर्ति-स्तम्भ पर (१९७१)। साथ में है क्षुल्लक वरदत्तजी। ६१ श्री दिगम्बर जैन तीर्थ श्री महावीरजी। ६२ पुरातत्व सग्रहालय मथुरा के निदेशक के साथ चर्चा में लीन (१९७३)। ६३ परमपूज्य आचार्यरत्न श्रीदेशभूषणजी महाराज के मगल सान्निध्य मे। ६४ मुनिश्री के ज्ञानवर्धनोत्सव के मगल अवसर पर केन्द्रीय स्वास्थ्य मत्री डा कर्ण सिह (१९७४)। ६५ मगल प्रवचन मे साहू शान्तिप्रसाद जैन श्रीमती रमारानी जैन श्री यशपाल जैन और श्री प्रेमचद जैन। ६६ मुनिश्री का मगल सान्निध्य विज्ञान भवन नई दिल्ली (१९७४) उपराष्ट्रपति श्री बी डी जत्ती द्वारा ग्रथ विमोचन। ६७ २५०० वा महावीर परिनिर्वाण महोत्सव दिल्ली (१९७४) पूज्य आचार्यश्री धर्मसागरजी का पावन सान्निध्य। ६८ २५०० वा महावीर परिनिर्वाण महोत्सव दिल्ली (१९७४) महोत्सव के दशव्यापी कार्यक्रम की रूपरेखा की तैयारी। आचार्यश्री तुलसी महाराज और मुनिश्री सुशील कुमार के साथ विचार-विमर्श। ६९ आचार्यरत्न श्री देशभूषणजी महाराज के मगल सान्निध्य और सुधी श्रावणगण के मध्य पहाडीधीरज दिल्ली (१९७४)। ७० बुद्ध पूर्णिमा के अवसर पर बौद्ध भिक्षु का सान्निध्य बुद्ध विहार दिल्ली (१९७४)। ७१ श्री ओम प्रकाश जैन द्वारा प शिवरामजी का सत्कार। वृषभदेव सगीत पुरस्कार से सम्मानित ७२ गुरु आचार्यरत्न श्री देशभूषणजी द्वारा उपाध्याय पद पर मत्र सस्कारपूर्वक प्रतिष्ठापन। ७३ महावीर जयन्ती महोत्सव पर मगल उद्बोधना (१९७४) साहू रमेशचद जैन की विशिष्ट उपस्थिति। ७४ श्री कुन्दकुन्द भारती स्थापना दिवस। लाला सागरचद जैन द्वारा विशाल धनराशि से सक्रिय योगदान। ७५ श्री कुन्दकुन्द भारती स्थापना पर आशीर्वचन प्रदान (१९७४) मुनिश्री वर्द्धमान सागरजी का मगल सान्निध्य। ७६ श्री कुन्दकुन्द भारती के लिए प्राप्त आभूषण। ७७ श्री कुन्दकुन्द भारती के लिए नई दिल्ली मे भूमि निरीक्षण (१९७९)। ७८ राष्ट्रीय स्वय सेवक सघ के सर सघचालक श्री बाला साहब देवरस से विचार-विमर्श। ७९ जगाधरी (हरियाणा) में सिक्ख मत का मुनिराज से मगल मिलन (१९७५)। ८० डॉ लालबहादुर शास्त्री के समय सार-शोध-ग्रथ विमोचन पर आशीर्वचन दिल्ली (१९७६) साथ हैं प कमलापति त्रिपाठी डा मडन मिश्र और श्री प्रेमचद जैन भी उपस्थित। ८१ मगल विहार के अवसर पर श्री ओमप्रकाश जैन द्वारा आभार दिल्ली (१९७५)। ८२ प्राचीन श्री अग्रवाल दिगम्बर जैन पचायत के पदाधिकारियो के साथ, दिल्ली (१९७६)। ८३ महापौर श्री केदारनाथ साहनी और आचार्य कैलाशचद्र देव बृहस्पति के मध्य दिल्ली (१९७७)। ८४ दक्षिण भारत के लिए दिल्ली मे निमत्रण निवेदित (१९७७)। ८५ श्री अरविन्द आश्रम दिल्ली की सेविका द्वारा मगलाचरण (१९७७)। ८६ जन्म जयन्ती के अवसर पर मुनिश्री मल्लिसागरजी के साथ (१९७८)। ८७ जन्म जयन्ती के अवसर पर मगल वाद्य-वादन (१९७८)। ८८ कर्नाटक के लिए निमत्रण देते हुए मुख्यमत्री श्री देवराज अर्स और केन्द्रीय मत्री श्री बी शकरानन्द (१९७८)। ८९ त्यागियो और श्रावकों के मध्य (१९७८)। ९० केन्द्रीय मत्रियो श्री शान्तिभूषण एव श्री प्रतापचन्द्र चन्दर के साथ (१९७८)। ९१ क्षुल्लक चन्द्रभूषण और क्षुल्लक वरदत्त के साथ (१९७८)। ९२ घास की झोपडी में (१९७८)। ९३ श्री वृषभ देव प्राकृत विद्यापीठ का श्री वीरेन्द्र हेगडे धर्मस्थल द्वारा शिलान्यास नई दिल्ली (१९७८)। ९४ श्री वृषभ देव प्राकृत विद्यापीठ नई दिल्ली के शिलान्यास के अवसर पर (१९७८)। ९५ श्री कुन्दकुन्द भारती की भूमि-पूजा नई दिल्ली (१९७८)। ९६ राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर मे प्रवचन (१९७९)। ९७ दक्षिण भारत के लिए निमत्रण निवेदित कर्नाटक से निमत्रण (१९७९)। ९८ प्रधानमत्री श्रीमती इदिरा गाधी के साथ चर्चारत। ९९ इन्दौर मे मगल प्रवचन (१९७९) १०० चीफ जस्टिस श्री लोढा जी के साथ विचार विमर्श जयपुर (१९७९)। १०१ नई दुनिया (दैनिक) प्रेस, इन्दौर का अवलोकन करते हुए (१९७९)। १०२ यात्रा में दुर्गम पथ पार करते हुए (१९७९)। १०३ इन्दौर में मगल प्रवेश (१९७९)। १०४ केन्द्रीय कारागार, जयपुर में बन्दियों को सम्बोधन (१९७९)। १०५ इन्दौर मे मगल प्रवेश (१९७९)। १०६ केन्द्रीय कारागार, जयपुर स्थित बन्दियों का मगल उद्बोधन (१९७९)। १०७ आचार्य शान्तिसागर स्मारक ट्रस्ट बम्बई का मगल उद्बोधन। १०८ चौपाटी बम्बई मे एलाचार्य नगर। १०९ गीता भवन इन्दौर मे बाबा बालमुकुन्द। ११० समयसार कैसिट का विमोचन (१९७९)। १११ मगल सबोधन के अवसर पर विशाल जनसमुदाय। ११२ बार एसोसियेशन इन्दौर मे न्यायाधीशो और वकीलो को सम्बोधन करते हुए (१९७९)। ११३ चितौडगढ में कीर्ति स्तम्भ के सान्निध्य मे। ११४ श्रवणबेलगोला मे मगल प्रवेश (१९८०) साहू श्रेयांस प्रसाद जैन स्वागत करते हुए। ११५ जन मगल महाकलश प्रवर्तन समारोह दिल्ली। ११६ जैन प्रभावना मडल पूना का मगल उद्बोधन करते

हुए (१९८०)। **११७** शिवाजी विद्यापीठ कोल्हापुर के तत्वावधान मे आयोजित शिवाजी जयन्ती दिवस पर मगल उद्बोधन। **११८** बम्बई विहार के अवसर पर दर्शन करते हुए (१९८०)। **११९** सुभाष मैदान दिल्ली मे श्री रामलीला का उद्घाटन और मगल उद्बोधन। **१२०** उद्बोधन पूर्व मगलाचरण करते हुए। **१२१** श्री विद्यानन्द निलय का उद्घाटन करते हुए श्री अक्षय कुमार जैन श्रवणबेलगोला। **१२२** श्रवणबेलगोला मे मगल प्रवेश। **१२३** भगवान् बाहुबली के चरणो मे। **१२४** श्रवणबेलगोला में सर सेठ हुकमचद त्यागी निवास के शुभारम्भ पर मगल उद्बोधन। **१२५** श्रवणबेलगोला में सर सेठ हुकमचद त्यागी निवास। **१२६** पूज्य क्षुल्लक श्री धर्मानन्दजी को मगल दीक्षा देते हुए (१९८१)। **१२७** मगल दीक्षा से पूर्व शिष्या (पू क्षुल्लक धर्मानन्दजी और पू क्षुल्लक ज्ञानचन्दजी) के साथ (१९८१)। **१२८** कल्याण मडप के शुभारम्भ हेतु जाते हुए। साथ मे श्रवणबेलगोला के भट्टारक श्री चारुकीर्ति स्वामीजी (१९८१)। **१२९** मगल विहार करते हुए (१९८१)। **१३०** महामस्तकाभिषेक के अवसर पर श्रवणबेलगोला में यात्रियो के लिए बना तम्बू नगर। **१३१** एलाचार्य नगर श्रवणबेलगोला (कर्नाटक) (१९८१)। **१३२** श्रवणबेलगोला मे भगवान् बाहुबली के दर्शनार्थ पहाड पर चढते हुए (१९८१)। **१३३** श्रवणबेलगोला स्थित जगमगाता चामुण्डराय मडप। **१३४** ५७ फीट ऊची विश्व की विशालतम ऐतिहासिक भगवान् गोम्मटेश्वर बाहुबली की मूर्ति श्रवणबेलगोला (कर्नाटक)। **१३५** सहस्राब्दि समारोह के अवसर पर भगवान् गोम्मटेश्वर बाहुबली का महामस्तकाभिषेक, श्रवणबेलगोला (१९८१)। **१३६** सहस्राब्दि समारोह के अवसर पर भगवान् गोम्मटेश्वर बाहुबली का महामस्तकाभिषेक श्रवणबेलगोला (१९८१)। **१३७** चवरधारिणी यक्षिणी। **१३८** चवरधारिणी यक्षिणी। **१३९** भगवान् गोम्मटेश्वर बाहुबली तीर्थ श्रवणबेलगोला के मुख्य द्वार पर गजलक्ष्मी। **१४०** वात्सल्य मूर्ति। **१४१** गोम्मटेश्वर पर्वत स्थित गुहा। **१४२** श्रमण महासम्मेलन के अवसर पर मगल सन्त समागम श्रवणबेलगोला (१९८१) धर्मस्थल के श्री वीरेन्द्र हेगड़े एव मुनि श्री सुशील कुमारजी के साथ। **१४३** स्वय सेवकों को प्रमाण पत्र वितरित करते हुए श्रवणबेलगोला के भट्टारक श्री चारुकीर्ति स्वामीजी, श्रवणबेलगोला (१९८१)। **१४४** महामस्तकाभिषेक समारोह के अवसर पर श्री रमेशचद जैन (पी एस जे) दिल्ली का सार्वजनिक अभिनन्दन श्रवणबेलगोला (१९८१)। **१४५** श्री गोम्मटसार ग्रन्थ विमोचन समारोह श्रवणबेलगोला (१९८१) प कैलाशचद्र शास्त्री श्री लक्ष्मीचन्द जैन श्रीमती कुन्था जैन आदि विद्वानो के मध्य। **१४६** राष्ट्रपति ज्ञानी जैलसिह के साथ, श्रवणबेलगोला। **१४७** आचार्यो के बीच एलाचार्य श्रवणबेलगोला (१९८१)। **१४८** श्रवणबेलगोला मे प्रधानमत्री श्रीमती इदिरा गाधी के साथ विचार-विमर्श के समय प्रसन्न मुद्रा मे (१९८१)। **१४९** भडार बसदि, श्रवणबेलगोला (कर्नाटक)। **१५०** महामस्तकाभिषक के अवसर पर महिला सम्मेलन मे श्रवणबेलगोला (१९८१)। **१५१** बाहुबली की मूर्ति के यशस्वी निर्माता श्री चामुण्डराय (चन्द्रगिरि पर्वत स्थित) श्रवणबेलगोला। **१५२** श्री जिननाथपुर मन्दिर मे वाद्य-वादन करते हुए गन्धर्व। **१५३** श्री जिननाथपुर मन्दिर मे वाद्य वादन करते हुए गन्धर्व। **१५४** श्री धर्मचक्र श्रवणबेलगोला। **१५५** श्री विद्यानन्द निलय श्रवणबेलगोला। **१५६** मोहन-जो-दारो से प्राप्त तीर्थंकर मूर्ति। **१५६ए** श्री भरत चक्रवर्ती ग्वालियर (मध्यप्रदेश)। **१५७** ब्राह्मी लिपि। **१५७ए** मोहन जो दारो। **१५८** भगवान् वृषभदेव और भगवान् महावीर की मूर्ति (उड़ीसा की कलाकृति)। **१५९** राष्ट्रीय सग्रहालय मथुरा से प्राप्त अमन्नी क्रीडा का दृश्य सगम देव वर्धमान चलधर काकधर और पक्षक्षर। **१६०** स्वाध्यायरत। **१६१** विचारमग्न। **१६२** मूडबिद्री मे मगल प्रवेश (१९८२)। **१६३** आहार के पश्चात् पिच्छि देते हुए श्रीमती रत्नम्मा हेगडे धर्मस्थल (१९८२)। **१६४** श्रमणो और श्रमणाओ के मध्य धर्मस्थल (१९८२)। **१६५** धर्मस्थल में विचार-विमर्श (१९८२)। **१६६ धर्मस्थल में प्रतिष्ठापित भगवान् बाहुबली।** **१६७** **भगवान् बाहुबली की मूर्ति को सूर्यमत्र देते हुए।** **१६८** **श्री बाहुबली प्रतिष्ठापना महोत्सव, धर्मस्थल (१९८२)।** **१६९** **श्री वीरेन्द्र हेगडे को आशीर्वचन प्रदान करते हुए, धर्मस्थल (१९८२)।** **१७०** **श्रीमन्त सेठ विनोदजी और श्रीमती ललिताबाईजी से चर्चारत, बालचन्दनगर (१९८३)।** **१७१** **महाराष्ट्र के मुख्यमत्री को आशीर्वचन प्रदान करते हुए** (१९८३)। **१७२** **बालचन्द नगर उद्योग का अवलोकन करते हुए (१९८३)।** **१७३** **ब्रह्मचारिणी गजा बहन से चर्चारत कुम्भोज (१९८३)।** **१७४** **आचार्य आनन्द महर्षि के शिष्यों के साथ, अहमदनगर (१९८४)।** **१७५** **श्री शान्तिलाल लोहाडे के साथ, कोपरगाव (१९८४)।** **१७६** **महाराष्ट्र मगल विहार के अवसर पर** पूणे (१९८४)। **१७७** सहकारी शुगर फैक्टरी मे मगल प्रवचन कोपरगाव (१९८४)। **१७८** कीर्तिस्तम्भ अकलूज महाराष्ट्र (१९८४)। **१७९** कीर्तिस्तम्भ का शुभारम्भ श्री कालप्पण्णा आवाडे, अकलूज-महाराष्ट्र (१९८४)। **१८०** श्री महावीर जयन्ती पर मगल प्रवचन अकलूज-महाराष्ट्र (१९८४)। **१८१** बम्बई मे मगल चातुर्मास के लिए श्री जम्बू कुमार कासलीवाल श्रीफल भेट करते हुए (१९८४)। **१८२** चातुर्मास स्थापना बम्बई (१९८४)। **१८३** मूर्धन्य सगीतकार श्री रवीन्द्र जैन आशीर्वचन प्राप्त करते हुए, त्रिमूर्ति-बम्बई (१९८४)। **१८४** विचारमग्न (१९८४)। **१८५** अमृत महोत्सव समारोह मे चर्चारत मालापुर (महाराष्ट्र)। **१८६ से १९० तक** आचार्यश्री द्वारा लिखित और समय समय पर प्रकाशित मगल साहित्य टेप रिकार्ड एव भारत सरकार द्वारा प्रकाशित डाक टिकट। **१९१** आचार्यश्री के मगल

सान्निध्य में पं. फूलचंद्र सिद्धान्तशास्त्री का अभिनन्दन करते हुए श्री रमेशचंद जैन (पी.एम.जे.) (१९८५)। **१९२** षष्ठिपूर्ति समारोह के मंगल अवसर पर विशिष्ट श्रोतागण : सर्वश्री पं. फूलचंद, महाराजा बहादुर सिंह, देवकुमार सिंह, रमेशचंद, डॉ. देवीलाल कोठिया, सेठ लालचंद दोशी, श्रीमती सरयू दफ्तरी, रमेशचन्द जैन एवं सतीश कुमार जैन, इन्दौर (१९८५)। **१९३** षष्ठिपूर्ति समारोह के अवसर पर इन्दौर (१९८५)। **१९४** शाकाहार प्रदर्शनी का मंगल अवलोकन करते हुए इन्दौर (१९८५) मूर्धन्य श्रावक सेठ लालचंद जी दोशी की विशिष्ट उपस्थिति। **१९५** केन्द्रीय मंत्री श्री अर्जुन सिंह के साथ इन्दौर (१९८५)। **१९६** आशीर्वचन प्राप्त करते हुए केन्द्रीय मंत्री श्री चन्दूलाल चन्द्राकर इन्दौर (१९८५)। **१९७** मन्त्रन्यास इन्दौर (१९८५)। **१९८** श्री गोम्मटगिरि क्षेत्र इन्दौर का विहंगम दृश्य। **१९९ से २०१ तक** श्री कुन्दकुन्द भारती दिल्ली में मंगल केशलोंच (१९८५)। **२०२** दिल्ली मंगल विहार के लिए आमंत्रण। **२०३** प्रतिष्ठा के अवसर पर सुप्रसिद्ध हिन्दी कवि डॉ. शिवमंगल सिंह सुमन के साथ चर्चारत। **२०४** पूर्व केन्द्रीय गृहमंत्री श्री गुलजारीलाल नन्दा से विचार विनिमय। **२०५** ग्वालियर के महापौर मंगल नगर प्रवेश के लिए प्रार्थना करते हुए। **२०६** ग्वालियर नगर में मंगल प्रवेश। **२०७** नगर प्रवेश के मंगल अवसर पर राजमाता श्रीमती विजयाराजे सिंधिया द्वारा स्वागत। **२०८** कर्मवीर भाऊराव पाटिल शताब्दी समारोह के निमित्त श्री कुन्दकुन्द भारती दिल्ली में विचार विमर्श करते हुए महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री श्री एस. बी. चव्हाण। **२०९** चातुर्मास स्थापना के लिए मंगल श्रीफल अर्पण श्री अक्षयकुमार जैन द्वारा। **२१०** मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री श्री मोतीलाल वोरा के साथ विचार विनिमय। **२११** सुप्रसिद्ध उद्योगपति संसद सदस्य श्री कृष्ण कुमार बिरला को आशीर्वचन प्रदान करते हुए। **२१२** दिल्ली नगर में मंगल प्रवेश के अवसर पर शोभा यात्रा में श्री रमेशचन्द जैन और श्री महेन्द्र कुमार जैन के साथ। **२१३** मंगल नगर प्रवेश के अवसर पर दिल्ली के ऐतिहासिक लालकिले के प्रांगण में विशाल सभा, महापौर श्री महेन्द्र सिंह साथी एवं पूर्व सांसद श्री जे. के. जैन की विशेष उपस्थिति। **२१४** कर्मवीर भाऊराव पाटिल शताब्दी समारोह का शुभारंभ, लोकसभा अध्यक्ष डॉ. बलराम जाखड़ एवं सुश्री निर्मला देशपांडे भी साथ में। **२१५** भारत के मुख्य न्यायाधीश श्री पी. एन. भगवती एवं पूर्व सांसद श्री जे. के. जैन के मध्य। **२१६** प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी का पूज्य महाराजश्री को सन्देश भेंट करते हुए ब्र. डी. डी. पाटिल। **२१७** केन्द्रीय मंत्री श्री जगदीश टाइटलर आशीर्वचन प्राप्त करते हुए। **२१८** चातुर्मास स्थापना दिल्ली (१९८६) श्री आर. वेंकटरामन का विशिष्ट सान्निध्य। **२१९** राष्ट्रपति श्री आर. वेंकटरामन आशीर्वचन प्राप्त करते हुए। **२२०** गुरु आचार्यरत्न श्री देशभूषणजी महाराज का आचार्यपद के लिए आदेश-पत्र। **२२१** स्वाध्याय। **२२२** दिल्ली मंगल प्रवेश पर भव्य शोभा यात्रा। **२२३** प्राकृत भवन, नई दिल्ली के प्रांगण में। **२२४** शंका समाधान कार्यक्रम (१ जनवरी १९८७)। **२२५** बडौत (उत्तर प्रदेश) में पंच कल्याणक पूजा के अवसर पर इन्द्राणियों की शोभा यात्रा। **२२६** पादुक शिला के अवसर पर मंगल उद्‌बोधन, बडौत (१९८७)। **२२७** उत्तरप्रदेश के मुख्यमंत्री श्री वीर बहादुर सिंह के साथ। **२२८** गुरु सिंह सभा, पांडव नगर, दिल्ली द्वारा स्वागत। **२२९** राजस्थान के राज्यपाल श्री बसन्त दादा पाटिल के साथ। **२३०** पूज्य आचार्य चक्रवर्ती श्री शान्तिसागरजी। **२३१** पूज्य आचार्यश्री पायसागरजी। **२३२** पूज्य आचार्य प्रवर श्री कुन्दकुन्द के चरण चिह्न, पोन्नूर मलै। **२३३** पूज्य आचार्यश्री जयकीर्ति जी। **२३४** गुरुवर पूज्य आचार्यरत्न श्री देशभूषणजी। **२३५** पूज्य एलाचार्य श्री विद्यानन्दजी। **२३६** आचार्यपद प्रतिष्ठापन समारोह, पद पूजा करते हुए श्री सुरेन्द्र कुमार जौहरी एवं श्रीमती सुधा जैन (२८ जून, १९८७)। **२३७** आचार्यपद ताम्रपत्र समर्पित करते हुए केन्द्रीय मंत्री श्री बी. शंकरानन्द और धर्माधिकारी श्री वीरेन्द्र हेगडे (२८ जून १९८७)। **२३८** श्री कुन्दकुन्द भारती में प्राकृत भवन के उद्‌घाटन के अवसर पर आशीर्वाद प्राप्त करते हुए प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी, नई दिल्ली (९ जुलाई, १९८७)। **२३९ से २४१ तक** प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी के साथ, नई दिल्ली (१९८७)। **२४२** श्री कुन्दकुन्द भारती, नई दिल्ली में प्रधानमंत्री द्वारा आचार्यरत्न श्री देशभूषण पुस्तकालय का शिलान्यास। **२४३** प्राकृत भवन का उद्‌घाटन। **२४४** प्राकृत भवन, श्री कुन्दकुन्द भारती, नई दिल्ली। **२४५ से २४७ तक** चातुर्मास स्थापना एवं पर्यूषण पर्व, नई दिल्ली (१९८७)। **२४८** श्री कुन्दकुन्द भारती में कर्मवीर श्री भाऊराव पाटिल के चित्र का अनावरण करते हुए केन्द्रीय मंत्री श्री वसन्त साठे। **२४९** श्री कुन्दकुन्द भारती, नई दिल्ली में भरत चक्रवर्ती की स्थापना (१२ अक्तूबर, १९८७)। **२५०** स्तवन। **२५१** ध्यान मुद्रा। **२५२** श्रेष्ठी श्रावक द्वारा आहार। **२५३** गुरुकुल दिव्यावदान समारोह, कुम्भोज (महाराष्ट्र) पूज्यवर श्री समन्तभद्र महाराज का पावन सान्निध्य। **२५४** आहार, श्री नानगराम जौहरी। **२५५** ग्रन्थावलोकन, साथ में श्री ओम प्रकाश जैन। **२५६** श्रावकों के मध्य। **२५७** आरती उतारते हुये श्री विनोद जैन। **२५८** कर्मवीर श्री भाऊराव पाटिल की प्रतिमा के समक्ष कार्यकर्ता। **२५९** केन्द्रीय मंत्री श्री शिवराज पाटिल आशीर्वाद प्राप्त करते हुये। **२६०** दिल्ली से दक्षिण भारत की ओर मंगल विहार समारोह में सभा मंच पर विराजमान (१९८७)। **२६१** दिल्ली के मुख्य कार्यकारी पार्षद श्री जगप्रवेश चन्द्र ऐतिहासिक सन्दर्भ चित्रावली 'प्राणिमात्र को सन्मार्ग के प्रेरक आचार्यश्री विद्यानन्दजी के तपस्वी जीवन की चित्रमय झांकी' भेंट करते हुए। **२६२** श्री कुन्दकुन्द भारती, नई दिल्ली से मंगल विहार (१९८७)। **२६३** मनन।

बालक सुरेन्द्र से क्षुल्लक पार्श्वकीर्ति

कर्नाटक के सीमान्त ग्राम शेडवाल मे २२ अप्रैल, १९२५ को एक शिशु का जन्म हुआ। कृष्णा नदी के तट पर बसे इस शेडवाल ग्राम के निवासियो व शिशु की माता सरस्वती देवी उपाध्ये और पिता कालप्पाण्णा उपाध्ये ने कल्पना भी न की होगी कि एक भावी निर्ग्रन्थ सारस्वत का जन्म हुआ है। यही शिशु सुरेन्द्र आगे चलकर आलोक-पुरुष विद्यानन्द बना। कालान्तर मे वही कलह, क्लेश, अज्ञान, हिसा और अशान्ति की तमाम अमावस्याओं से जूझता हुआ, मानवता व विश्वधर्म की पताका लेकर आगे बढता गया।

सम्पन्नता से अभिषिक्त ब्राह्मण परिवार के शिशु सुरेन्द्र का बचपन सामान्य था। सातगौडा पाटील उसका बालसखा था। 'वदगगा' और 'दूध गगा' नदियो मे क्रीडा में सलग्न दोनो बाल सखा अच्छे तैराक बन गए। बिना थके मीलो तक नदी की सतह पर आलथी-पालथी मारे लेटे हुए बहते जाना उनके अभ्यास मे शामिल था। नदियों का कुशल तैराक सुरेन्द्र ससार-सागर का कुशल तैराक सिद्ध हुआ। दानवाड मे शिक्षा-दीक्षा के दौरान सुरेन्द्र की रुचि पढाई-लिखाई की अपेक्षा खेल-कूद मे अधिक रही। खिलाडीपन की भावना और नेतृत्व-क्षमता के कारण सुरेन्द्र अपने साथियों के बीच बहुत लोकप्रिय था। चुनौतियो और खतरो स जूझने वाले सुरेन्द्र मे स्वाभिमान व सकल्पशक्ति भी कूट-कूट कर भरी हुई थी। एक बार 'शान्ति सागर आश्रम' मे सवेरे देर से उठने पर गुरु की ओर से फटकार पडने पर सुरेन्द्र का स्वाभिमान तिलमिला उठा। सवेरे जल्दी उठने का उसका निश्चय इतना पक्का था कि वह ठीक घण्टी के नीचे सोने लगा और सवेरे सबसे पहले उठकर घण्टी बजाने लगा। देर से उठने पर डाटने वाले गुरु तवण्णा भी प्रसन्न हो गए और उन्होने सुरेन्द्र को साधुवाद व आशीर्वाद दिया।

भाषाओ के अध्ययन मे सुरेन्द्र की गहरी रुचि रही। दानवाड मे उसकी प्रारभिक शिक्षा मराठी के माध्यम से हुई। इसके बाद उस शेडवाल के स्कूल मे भर्ती किया गया जहा शिक्षा का माध्यम कन्नड था। मराठी के बजाय कन्नड के माध्यम से भी शिक्षा प्राप्त करना सुरेन्द्र को रास नही आया। सुरेन्द्र का समय घूमने-भटकने मे ज्यादा बीतते देख कर पिता कालप्पाजी ने उन्हे 'शान्ति सागर आश्रम' मे भर्ती करा दिया। वहा शिक्षा का माध्यम मराठी था, अत सुरेन्द्र का मन लग गया और उसकी प्रतिभा निखर आई। आश्रम ने उसके व्यक्तित्व को परिपक्व किया। उसमे अनूठी कर्त्तव्यनिष्ठा जागी और श्रम के प्रति गौरव-भावना इतनी अधिक पैदा हो गई कि वह वहा बुहारे से लेकर बागवानी तक के श्रम का मजा लेने लगा। पीडितो और दुखीजनो की मदद करना उसके स्वभाव मे शामिल था। वास्तव में सुरेन्द्र का व्यक्तित्व आरम्भ से ही विलक्षण था। वह सामान्य से भिन्न था, बाल्यावस्था मे भी उसे दूसरो को सुख-सुविधा देने मे आनन्द आता था। उम्र मे अपने से छोटो की मदद करना, रोगियो की देखभाल करना तथा दीन-दुखियो को ढाढस बधाना सदैव ही उसे अपने काम लगते थे।

नियति सुरेन्द्र को जीवन-पथ पर अभीष्ट दिशा की ओर ले जा रही थी। सुरेन्द्र को मात्र भौतिक उपलब्धियो से कभी सन्तोष नही हुआ। उसके मन मे चलने वाला अन्तर्द्वन्द्व उसे किसी बडे उद्देश्य की दिशा मे बढने का स्मरण कराता रहता था, दृश्य जगत से आगे बढ कर अपने असली लक्ष्य की तरफ बढते जाने की उसकी इच्छा अडिग थी। धर्म की तरफ उसकी रुझान और वैराग्य-वृत्ति छुटपन मे भी स्पष्ट नजर आती थी। उपाध्ये होने के नाते परिवार मदिर के ही निकट रहता था और सदा ही साधु-सतो की सगत, धर्म-सभा, कथा-पुराण, भजन-कीर्तन का सुयोग मिलता रहता था। सुरेन्द्र ५-६ वर्ष के रहे होगे जब चातुर्मास मे एक श्रमण मुनि मन्दिर मे आकर ठहरे। बालक सुरेन्द्र उनके पास बने रहते और सेवा का अवसर ढूढते रहते थे। बालक सुरेन्द्र की लगन देखकर मुनि उन्हे आशीर्वाद देते और स्नेहपूर्वक उसे पिच्छी से छूते। सुरेन्द्र पिच्छी के रगीन पख निहारते और उसे हाथ मे लिये रहते। मा कहती – इसके हाथ में पिच्छी ही है। कितने सही थे वे शब्द। धीरे-धीरे सुरेन्द्र वैराग्य-पथ की तरफ बढने लगे। परिस्थितिया ऐसी बनती गईं कि वे तेजी से इस मार्ग की तरफ बढते ही गए। हुआ यह कि युवक सुरेन्द्र शिक्षा पूरी कर निरुद्देश्य से पडे थे कि उन्हे अपनी बेकारी का अहसास हुआ। पिता श्रीकलप्पाजी यद्यपि कहते कुछ नही थे, परन्तु युवक सुरेन्द्र उनकी चिन्ता का कारण समझ गए। उन्हे लगा कि उन्हे जीविकोपार्जन की दिशा मे कुछ न कुछ अवश्य करना चाहिए। आजीविका की तलाश मे वह पुणे पहुचे। वहा उन्हे अपने मौसा जी की मदद से अमिन्यूशन बनाने वाले कारखाने मे काम मिल गया। इसे भाग्य की विडम्बना नही तो क्या कहा जाए कि जिसे भविष्य में अहिंसा का उपदेश देना था, उसे अपनी

आजीविका के लिए हथियारो के कारखाने पर निर्भर होना पडा। सुरेन्द्र ने लगभग एक वर्ष तक लेथ मशीन पर काम किया। अधिकारी उनके साफ सुथरे काम से प्रसन्न थे परन्तु स्वय सुरेन्द्र के मन मे द्वन्द्व चलता रहा था। उनका चित्त ससार से हटने लगा। हथियार-कारखाने की मशीने उन्हे बाध कर नहीं रख सकी। सुरेन्द्र ने नौकरी छोड दी। कुछ दिनो बाद ही उन्हे एक बिस्कुट फैक्ट्री मे काम मिल गया, परन्तु उनके मन की उथल-पुथल फिर भी कायम रही। उनका अतृप्त मन कहता था कि यह वह काम नही है जो उन्हे करना चाहिए। लेकिन इसी बीच एक अच्छी बात यह हुई कि पुणे मे रहते हुए, सुरेन्द्र व्यापक वैचारिक सम्पर्क मे आए। प्रतिभा उनमे इतनी अधिक थी कि किसी भी नए विचार या काम को आत्मसात् करने में उन्हे तनिक भी कठिनाई नही होती थी। देश के स्वाधीनता-सग्राम मे अग्रणी भूमिका निभा रहे पुणे शहर की चेतना से सम्बद्ध रहने के कारण सुरेन्द्र भी राष्ट्र के मुक्ति-युद्ध मे शामिल होने के इच्छुक हो गए। वह गाधीजी के विचारों से प्रभावित हुए और ये विचार उनके व्यक्तित्व का अभिन्न हिस्सा बन गए। सुरेन्द्र ने स्वाधीनता आदोलन से जुडे जलूसो मे भाग लिया तथा अन्य कार्यक्रमो मे भी सक्रिय हो गए। आश्रम जीवन का सस्कार, साधु-सतो का साथ, राष्ट्र का स्वतत्रता-सग्राम, इन सबने मिलकर सुरेन्द्र के मन-मस्तिष्क को मथ डाला। सन् १९४२ के उत्तरार्द्ध मे उन्होने बिस्कुट फैक्ट्री की नौकरी को भी अलविदा कहा और पैतृक स्थान शेडवाल लौट आए।

शेडवाल पहुच कर उनका सारा समय चिन्तन-मनन मे बीतने लगा। गन्तव्य को पहचानने और अधकार को चीर कर प्रकाश मे आने की तडप उनमे थी। नए कर्त्तव्य-पथ और उदात्त जीवन-शैली की खोज के लिए उनके मन द्वारा भी खोज का अनवरत क्रम जारी था। सन् १९४२ मे जब 'भारत छोडो' का देशव्यापी आन्दोलन चला तो सुरेन्द्र भी इसके आह्वान से अछूते नहीं रह सके। हृदय मे हिलोरे ले रही देश-भक्ति की तरगो ने उन्हे भी सघर्ष मे कूद पडने के लिए प्रेरित किया। सुरेन्द्र ने अपने साथियो के साथ मिलकर योजना बनाई। रातो-रात चौपाल के सामने वाले पेड पर तिरगा फहरा दिया। 'भारत माता की जय' के गगन-भेदी नारो के साथ जब युवको की यह टोली निकली तो सारे गाव मे चेतना को नई लहर फैल गई। सवेरा हुआ तो शेडवाल ग्राम-पटेल का माथा ठनका। पूछताछ हुई तो सुरेन्द्र के नेतृत्व की बात उजागर हो गई। सुरेन्द्र को जेल मे ठूसने की धमकी देकर कहा गया कि वे स्वय ही तिरगा उतार दे। सुरेन्द्र ऐसी मिट्टी के बने न थे कि धमकी के असर मे आ जाते। उन्होने तिरगा उतारने से इन्कार कर दिया, परन्तु अपने कुटुम्बजनो को राजकोप से बचाने की दृष्टि से अज्ञातवास पर चले जाना पसन्द किया।

सन् १९४२-४४ अज्ञातवास के पहले पडाव मे सुरेन्द्र कित्तूर पहुचे। थोडे से प्रयास से उन्हे एक चीनी मिल मे काम मिल गया। उन्होने वेश बदलकर कई महीनो तक वहा काम किया। उन्होने अपने परिवार के लोगो को भी अपने बारे मे कोई सूचना नही दी। दूसरी तरफ पिता श्री कालप्पाजी और माता सरस्वतीजी को पुत्र के असह्य विछोह से गुजरना पडा। उन्हे इस बात का भी दु ख था कि सुरेन्द्र का विवाह भी नहीं हो पाया था। शेडवाल मे सुरेन्द्र के रहते विवाह की बात जब भी चली, उन्होने इसमे रुचि नही ली। जहा एक तरफ माता-पिता व परिजन सुरेन्द्र के बारे मे कोई सूचना न होने से दुखी थे, वहा सुरेन्द्र भी सुखी न थे। पराक्रमी एव साहसी सुरेन्द्र को इस बात को सोच कर भी दुख होता कि उन्हे शेडवाल से पलायन कर अज्ञातवास करना पडा। सत्य और अहिसा मे विश्वास रखने वाले सुरेन्द्र का अन्तर्मन अशान्त बना रहा। पलायन की चुभन ने उनका पीछा न छोडा। इस बीच वह देश को आजाद कराने की बात भी सोचते रहे और स्वय को हर बलिदान के लिए तैयार करते रहते। सयोगवश सुरेन्द्र की मित्रता ऐनापुर के एक पाटील परिवार से हो गई। ऐनापुर आचार्य श्री कुन्थुसागरजी की जन्मस्थली है। सुरेन्द्र ऐनापुर चले गए, जहा उन्हे आचार्यश्री के कुछ ग्रन्थ मिल गए। वे रात-दिन उनके अध्ययन मे जुट गए। धीरे-धीरे उनके मन की काया ही पलट गई। उनकी दृष्टि जीवन-शोधन की ओर हो गई। उन्हे अनुभव हुआ कि अध्यात्म ही जीवन-शुद्धि का मार्ग बन सकता है। धीरे-धीरे उन्होने अध्यात्म के मार्ग पर अपनी यात्रा का सूत्रपात किया। परन्तु नियति को तो कुछ और मजूर था। सुरेन्द्र बीमार पड गए। असाध्य मोतीझरा निकला। मित्र ने शेडवाल पहुचा दिया। मा-बाप की आखों से अश्रुधारा फूट पडी। मिलन की खुशी भी थी और पुत्र के गम्भीर रूप से रुग्ण होने की पीडा भी थी। सभी बेहद चिन्तित थे, परन्तु सुरेन्द्र पर आचार्यश्री कुन्थुसागर का अध्यात्म छाया हुआ था। वह णमोकार मत्र का जाप करते और मन ही मन किसी अमृतत्व मे डूब जाते। बीमारी मे ही उनके मन मे सकल्प उभरा कि 'हे शांतिनाथ प्रभो ! आप ही मुझे इस विषम ज्वर से बचाएगे और यदि मै इससे बच गया तो आजीवन ब्रह्मचर्यव्रत धारण करूगा। गाधीजी जैसा मेरा वेश होगा। धर्म और राष्ट्रसेवा मेरा अडिग व्रत होगा।' चमत्कार यह कि सुरेन्द्र ठीक होने लगे। पथ्य पालते-पालते उनके तन-मन दोनों सयमी हो गए। ससार के अनुभवो ने, जो प्राय कडवे थे, उन्हे अनासक्ति की ओर मोड दिया। वैराग्य और ज्ञान के पथ पर सुरेन्द्र की निर्णायक यात्रा शुरू हो गई। यह सन् १९४५

की बात थी। अगले ही वर्ष (१९४६ ई० मे) एक अद्भुत सयोग हुआ। संयममूर्ति ज्ञान-सूर्य महामुनि आचार्यश्री महावीर-कीर्तिजी ने शेडवाल मे वर्षायोग किया। रोग से टूटे सुरेन्द्र को मानो अमृतसिन्धु ही मिल गया। आत्मिक शान्ति के इस मनोज्ञ अवसर से मानो सुरेन्द्र का पुनर्जन्म ही हुआ।

सुरेन्द्र प्रतिदिन मुनिश्री के वचन सुनते और आत्मा के आनन्द में निमग्न हो जाते। आधुनिक वेशभूषा में रहने वाले इस क्रातिकारी युवक ने सादगी को अपना जीवन-क्रम बना लिया। परिचित, मित्र व परिजन इस परिवर्तन को देखकर चिन्तित हुए, परन्तु कोई भी सुरेन्द्र के मन की थाह नहीं पा सका। नियमित रूप से ज्ञान-साधना के लिए आने वाले इस सुन्दर युवक की तरफ आचार्यश्री महावीरकीर्ति जी का ध्यान जाना स्वाभाविक था। सुरेन्द्र की ज्ञान-पिपासा और तर्कणा-शक्ति ने उन्हे प्रभावित किया। वे बडे प्रेमपूर्वक सुरेन्द्र से चर्चा करते और उसके विचारो को सुनकर हर्षित होते। एक दिन बातो ही बातो मे सुरेन्द्र ने मुनिश्री के सामने दीक्षा लेने की इच्छा रख दी। मुनिश्री प्रसन्न तो हुए, किन्तु २१ वर्ष की तरुणावस्था को देखकर किंचित् झिझके और बोले – माता-पिता की अनुमति प्राप्त कर लो, काम आसान हो जाएगा। दीक्षा की बात सुनकर माता-पिता विचलित हुए।

उनके लिए यह कल्पना भी अत्यत कष्टकारक थी कि उनका युवा-पुत्र घर छोडकर इस तरह चला जाए। मगर सुरेन्द्र अटल व अविचल थे। इसी तरह से दो मास बीत गए। अब सुरेन्द्र का अधिकाश समय मुनिश्री के सान्निध्य मे बीतने लगा। अब वे कभी-कभी भोजन के निमित्त ही अपने घर जाते। एक दिन सायकाल सुरेन्द्र घर पहुचे तो पिताश्री कालप्पा घर पर ही थे। पुत्र-प्रेम के कारण उन्हें सुरेन्द्र का मुनिश्री के पास जाना अच्छा नहीं लगता था। इसीलिए उस दिन पिता ने पूछ ही लिया – 'घर क्यो आते हो, खाने के लिए ? किसी स्वामीजी के पीछे-पीछे ही फिरो, पेट भरने लायक भिक्षा कोई डाल ही देगा।' ये शब्द बैरागी सुरेन्द्र को चुभ गए। उस दिन माता के मान-मनुहार के कारण जैसे-तैसे भोजन किया, परन्तु मन पूरी तरह से उचट चुका था। बस उसी दिन से एक जून भोजन की चर्या जारी है। माता-पिता सगे सम्बन्धियो ने पुन समझा बुझाकर वापस लौटाने का प्रयास किया, परन्तु सुरेन्द्र का उत्तर था – "मै स्वामीजी के साथ रहता हू, किसी का बुरा तो नही करता ?"

इसी बीच मुनिश्री ने सुरेन्द्र को कसौटी पर कसा और पाया कि सोना खरा है। मुनिश्री के विहार का दिन निकट आ गया। ग्रामवासियो के लिए उनका अन्तिम उपदेश चल रहा था। लोगो के मन मे एक ही प्रश्न करवट ले रहा था कि सुरेन्द्र अब क्या करेगे ? मुनिजी की पदयात्रा शुरू हुई और लोगो ने देखा कि शिष्य सुरेन्द्र उनके अनुगामी हुए। लोगो ने सुरेन्द्र को समझाया, प्रश्न किए, परन्तु उगते हुए सूरज को कोई भला हथेली से रोक सकता है ?

मुनिश्री आगे बढे। शिष्य सुरेन्द्र साथ थे। वे तमदड्डी पहुचे। उन्होंने आचार्यश्री महावीर कीर्तिजी से पुन दीक्षा-प्रार्थना की। वह सीधे श्रमण मुनि-दीक्षा प्राप्त करना चाहते थे, किन्तु उनसे कहा गया कि उन्हे अभी क्षुल्लक ही बनना है। इसके बाद ही मुनि-दीक्षा मिल सकती थी। उन्होने गुरु के आदेश का तुरन्त अगीकार किया और निष्कलुष साधना की ओर दृढता से कदम उठा लिये। फाल्गुन सुदी तेरस, १९४६ ईस्वी को उनकी वर्णी दीक्षा सम्पन्न हुई। मुनिश्री ने नव-क्षुल्लक को प्रतिभानिष्ठ चारित्र का अमृतोपम उपदेश दिया और शिष्य अन्धकार की काली परिधि के बाहर मुस्कुराता हुआ निकला – पार्श्वकीर्ति के रूप में सस्कारित शिष्य। सुरेन्द्र का नाम अब क्षुल्लक पार्श्वकीर्ति हुआ। वे क्षुल्लक-जीवन की मर्यादाओं, सावधानियों और सूक्ष्मताओ को आत्मसात् कर साधना-पथ पर सयत रूप से अग्रसर हुए। क्षु० पार्श्वकीर्ति को अपनी चेतना पर कोई कृत्रिम बन्धन सह्य नही था। वह क्षुल्लक-जीवन के दायित्व-निर्देशों से भी आगे कदम बढाने को तैयार थे। वह तो दिगम्बर मुनित्व के राजमार्ग के पथिक थे। मोह-माया छूट जाने से उन्होंने मोक्ष की झलक पा ली थी। यह आरभिक उपलब्धि ही जब अक्षय-अपरिमित आनन्द का स्रोत बनी तो सम्पूर्ण मुक्ति का आनन्द कैसा होगा ? क्षुल्लक बनने के बाद से ही उनके मन मे चरम सत्य प्राप्त करने का स्वप्न छाया रहा। वह निरम्बरत्व स्वरूप को पाने की क्षण-क्षण उत्कठापूर्वक प्रतीक्षा करने लगे।

वर्णी पार्श्वकीर्ति के दो ही मुख्य काम थे – स्वाध्याय और साधना। वह एक-एक पग फूक-फूक कर रख रहे थे और ज्ञान को चारित्र की जीवन्तता प्रदान कर रहे थे। यह मर्म उनकी पकड़ मे था कि जो भी जाना जाए उसे निष्पक्ष व अनासक्त रूप से जाना जाए और इस प्रकार अपनी आध्यात्मिक निष्ठा और उत्साह को समृद्ध किया जाए। स्वाध्याय व साधना की निरन्तरता ने उन्हे स्पष्टवादी, साहसी और निडर बना दिया। उनका सकल्प था कि तन, मन और जगत् का कोई रहस्य उनसे छुपा नही रहेगा।

चिन्तन का कोई टापू नही होगा जो अज्ञात रह जाए । पार्श्वकीर्ति वर्णीजी कन्नड में प्रवचन भी करते और लोगो को आत्मकल्याण का मार्ग भी प्रदर्शित करते थे ।

सयम-धर्म के निर्वाह के साथ उन्होने शेडवाल स्थित 'आचार्य शान्तिसागर आश्रम' के अधिष्ठाता की भूमिका भी सफलतापूर्वक निभाई । अधिष्ठाता पद पर आते ही उनमे अनुशासन की भावना और प्रबल हुई । उन्होंने अनुशासन को भावी जीवन की प्रथम आधार-भूमि बनाया । उनके सात वर्षों के श्रम के परिणामस्वरूप आश्रम की व्यवस्था पूर्णत सुव्यवस्थित हो गई और उन्हे लगा कि अब वहा उनकी आवश्यकता नही हे ।

१९४६ कोण्णूर, कर्नाटक ब्रह्मचर्यावस्था, तदनन्तर क्षुल्लकावस्था, घरू नाम सुरेन्द्र, क्षुल्लकावस्था का नाम पार्श्वकीर्ति, कन्नड मे प्रवचन, यशस्विता का प्रारम्भ ।

ज्ञान और चारित्र दोनो एक दूसरे के बिना पगु हैं । ज्ञान के साथ जब तक क्रिया नही हो, तब तक कोरा ज्ञान सार्थक नही है । आत्मा को जानने के लिए अनात्मा को जानना-समझना आवश्यक है । आत्मा के विचार-पर्याय नष्ट होते है, विचारने वाली आत्मा कभी नष्ट नहीं होती ।

महावीर का धर्म पुरुषार्थवादी है, देववादी नहीं । धर्म को सही रूप मे प्रसारित व प्रचारित किया जावे तो वह अमृत है, अन्यथा अधविश्वासों के कारण वह हलाहल है । विचार मे अनेकान्त, आचार मे अहिंसा, वाणी मे स्याद्वाद और समाज मे अपरिग्रह-यही सर्वोदय है ।

योग का अर्थ है मन-वचन-कार्य की एकाग्रता । आत्मा मे एकाग्रता ही ध्यान है । आत्म-तत्व की प्राप्ति न हो तो अध्ययन चाहे कितना ही हो, सब व्यर्थ है । जब तक विकल्पों से मुक्त होकर ध्यान मे मग्न नहीं हो, तब तक बधन ही होता है ।

माला जपना, स्वाध्याय करना, पूजा करना, इन सभी क्रियाओ का ध्येय आत्मा को पवित्र कर मुक्ति प्राप्त करना है । इन क्रियाओ के पीछे यदि सासारिक लालसाये है, तो धर्म सकीर्ण व सकुचित हो जाता है ।

१९४७ हुमच, कर्नाटक अभिनव भट्टारक श्री देवेन्द्र कीर्तिजी के आग्रह पर वर्षायोग का सकल्प, धर्मप्रभावना, सस्थान का पुनर्व्यवस्थापन, लोकप्रियता का सूत्रपात ।

गाव की एक महिला सिर पर पानी का घडा, गोद मे बच्चा लिये सहेली से बात करती हुई बढती जाती है, पर ध्यान उस घडे पर केन्द्रित रहता है, अन्यथा घडा गिर जायेगा और पाव में चोट लग जायेगी । इसी प्रकार, यदि लक्ष्य 'मुक्ति' है तो ध्यान की एकाग्रता बढती चली जायेगी । कुछ देर मे प्रपच-विकल्पो को भूल पायेगे तो अभ्यास से प्रयत्न बढता चला जायेगा ।

भगवान महावीर ने अपने समय मे इस देश मे बिखर रही विविध विचारधाराओ को एक माला मे पिरोया, उसके लिए 'अनेकान्त' के नाम से एक सुन्दर सिद्धान्त दुनिया को दिया । दुनिया के सिद्धान्तो मे परस्पर टकराव उत्पन्न न हो, इसके लिए यह अनुपम सिद्धान्त है । हम जिसको वस्त्र कहते हैं, उस वस्त्र में से कोई कमीज बना ली जाती है, उसे कमीज कहने लगते है, उससे पानी छानने लगते है तो छन्ना कहते है, इसमें से ही टोपी, रूमाल, न जाने क्या-क्या कहने लगते हैं । तो वह चीज कपडा है, छन्ना है या टोपी है, वह है क्या ? मिल में निर्मित थान के टुकडे हुए और उसके नाम बदलने लगे, फिर भी सब कपडे है, समानता सब मे है । इसी प्रकार, चौरासी लाख योनियो के जीवो मे चीटी, हाथी, घोडा, जैन, मुसलमान, हिंदू–ये सब जीव जाति के विभिन्न रूप हैं, पर सब चैतन्यगुण-युक्त है, पृथक् स्वतत्र सत्ता लिये हुए है, पर गुण समान है, उनके चैतन्य मे कोई अतर नहीं है ।

महात्मा गौतमबुद्ध के कुछ शिष्य धर्म-प्रचार के लिए विदेश जा रहे थे । बुद्ध ने उनसे पूछा – तुम्हे वहा कोई चाटा मार देगा तो तुम क्या करोगे ? शिष्य ने उत्तर दिया – सोचूगा, चोट तो नहीं आई । बुद्ध ने कहा – चोट आएगी तो

क्या करोगे ? तो हम समझेंगे हमारी हड्डी तो नहीं टूटी, शिष्य ने कहा। बुद्ध ने फिर पूछा – हड्डी टूट गई तो क्या करोगे ? सोचूगा, जान तो नहीं गई। फिर पूछा – यदि जान ले लेंगे तो क्या करोगे ? शिष्य ने जवाब दिया – वे मेरी आत्मा का तो नाश नहीं कर सकते, जान चली जाए पर धर्म-प्रचार करता रहूगा, यह नहीं छोडूगा। निष्कलक ने धर्म के लिए सिर कटवा दिया पर धर्म नहीं छोडा।

१९४८ कुम्भोज (महाराष्ट्र), बाहुबली क्षेत्र के निकट, पूज्य क्षु० समन्तभद्रजी की कर्मभूमि, उनके द्वारा एक सुव्यवस्थित गुरुकुल का सस्थापन-सचालन, क्षु० पार्श्वकीर्तिजी द्वारा जागृति का प्रादुर्भाव, धर्म की युक्तियुक्त व्यवस्था, यशस्विता का दूसरा पडाव।

प्राचीनकाल मे तक्षशिला व नालन्दा ये दो विश्वविद्यालय (भारत मे) थे। वहा के इतिहास व खुदाई आदि से प्राप्त अवशेषों से ज्ञात हुआ है कि उस समय का विद्यार्थी पूर्ण रूप से स्वावलम्बी था। वह अपना कार्य अपने हाथ से करता था। उस समय वहा व्यावहारिक शिक्षा के साथ-साथ धार्मिक शिक्षा भी दी जाती थी। सभी धर्मों व दर्शनो का ज्ञान कराया जाता था, अपने धर्म व दर्शन के प्रति निष्ठावान् रहने की प्रेरणा दी जाती थी। सभी भाषाओ के प्रति प्रेम व वात्सल्य रखना सिखाया जाता था।

जिन्होने आत्मा को अजर-अमर बनने के लिए आगम दिये, सिद्धान्त दिये, शास्त्र दिये, चिन्तन दिया, उनका उपकार नही माने तो क्या यह कृतघ्नता नही है ? आचार्यों ने आत्मा के उत्कर्ष के लिए ये मदिर बनवाये। वीतराग की वाणी व सिद्धान्त, आत्मा को अजर-अमर बनाने का सदेश व मार्ग प्रशस्त करती है।

१९४९ से १९५६ शेडवाल, कर्नाटक आचार्य शान्ति सागरजी से चरण सम्पर्क, आचार्यश्री का पार्श्वकीर्तिजी की योग्यताओ पर ध्यान, शेडवाल-स्थित 'आचार्य शान्तिसागर आश्रम' के अधिष्ठाता-पद पर प्रतिष्ठित होकर धर्म भी पढाते थे। सात वर्षों मे ही सस्था का कायाकल्प। सूझबूझ के साथ सचालन, परिणामस्वरूप सस्था का तेजी से फलना-फूलना।

एक वन मे एक बारहसीगा विचरण कर रहा था। वह अपने शरीर की ओर निहार रहा था। जब उसने अपने खूबसूरत सीग देखे, तो अत्यन्त गर्वित हो उठा और जब उसने अपने पैरो की ओर देखा तो उनकी बदसूरती देख कर घृणा करने लगा। इतने मे उसे बाण उठाये एक बहेलिया आता दिखाई दिया, उसे देखकर वह घबराया। वह अपनी जान बचाने के लिए भागा, भागता गया। एक स्थान पर रुका तो देखा कि एक मुनिराज बैठे है। मुनिराज ने भी उसकी ओर देखा। उसकी घबराहट देखकर उन्होने पूछा – क्या बात है ? उसने कहा कि मै अपने सींगो की खूबसूरती पर व पावो की बदसूरती पर विचार कर रहा था, इतने मे बहेलिये को देखा, बस जान बचाने के लिए भागा चला आ रहा हूँ। मुनिराज ने कहा – अरे ! तुम जिन सुन्दर सीगो पर गर्व कर रहे हो, वे ही तुम्हारे लिए प्राणघातक सिद्ध हो रहे है और ये बदसूरत पैर, जिन से तुम घृणा कर रहे हो, इन्होने ही तुम्हे बचाया है। हम भी शारीरिक-सौन्दर्य की ही देखभाल-साजसवार करते है, जो हमारे ससार-भ्रमण का कारण है और आत्मा (जिसको लोग शुष्क विषय मानते है) इसकी कोई साज-सवार नहीं करते।

हमे परस्पर प्रेम व वात्सल्य से धर्म का प्रचार करना चाहिए, स्वाध्याय, मनन व चिन्तन करना चाहिए। जैसे पारस पत्थर से लोहा थोडा भी छू जाता है तो वह भी स्वर्ण बन जाता है, इसी प्रकार वीतराग भगवान् की वाणी मन को, आत्मा को जरा भी छू जाये तो अवश्य ही आत्म-कल्याण होगा। वीतराग वाणी को थोडा-सा भी समझ ले, जीवन मे उतार ले तो जन्म सफल हो जायेगा।

सेवा व्यवहारदृष्टि से धर्म है। धर्म केवल मदिर जाने मे ही नही है। यदि हम मानवीय धर्म छोड देते है, तो माला जपना, शास्त्र पढना सब अधूरे है। जो परिग्रह की चिन्ता मे लगे रहे, वे सब बह गये और जिन्होने परिग्रह को छोड दिया, वे बच गये।

सेवा धर्म का अग है। एक जीव दूसरे जीव की सेवा का उपकार करके ही जीवित रह सकता है। जो सेवा को धर्म नही समझते, वे अज्ञान है। यदि आप सेवा न कर सके, तो अनुमोदना तो कीजिए।

मुझे बच्चों से यही कहना है कि माता-पिता, अध्यापक सभी के प्रति आदर व निष्ठा होनी चाहिए। गाधीजी ने गाधी-विचार-दोहन मे लिखा है कि बच्चों को प्यार से समझाना चाहिए, वह न माने तो डाटना चाहिए, पर उन्हे डाटते समय भी मन मे वात्सल्य भाव बना रहना चाहिए। जैसे नारियल ऊपर से कठोर रहते हुए भी अन्दर से अत्यन्त कोमल होता है।

अध्यापक, माता-पिता व बडे लोग सभी मिलकर बच्चो को अनुशासन, आदर, राष्ट्रीय सपत्ति के प्रति प्रेम, राष्ट्र के प्रति निष्ठा सिखायें। इन्हीं बच्चो में से आगे चलकर कोई मेयर बनेगा, कोई मत्री बनेगा तो कोई राष्ट्रपति बनेगा, कोई गाधी बनेगा, कोई टैगोर तो कोई महावीर भी बन सकता है। इसलिये बच्चो को विशेषत विनम्रता व वृद्धो की सेवा करने की शिक्षा देनी चाहिए।

जो जितना ज्ञानी होगा वह उतना ही विनम्र भी होगा। पेड पर अधिक फल लगते है तो वह झुक जाता है। मानव यदि मानवीयता के साथ जीता है, तो वह दो हाथ वाला भगवान् है, अन्यथा पशु मे और उसमे कोई अन्तर नही।

सेवा भाव, विनम्रता, चारित्रिक दृढता व निर्व्यसनता के साथ जीवन व्यतीत करना ही मानव-जीवन की सार्थकता है। व्यसनो मे फसना जीवन गवा देना है और निर्व्यसनी रहना जीवन की गहराई को पा लेना है।

जो हित करे, अहित का परिहार करे, वह ही ज्ञान है। दीपक वही है जो अधकार का परिहार कर प्रकाश फैलाये। जीने की कला धर्म से आती है। मरण को मागलिक बनाने के लिए जीवन मे धर्म व ज्ञान की आवश्यकता है। जिस प्रकार जन्म श्रेष्ठ माना जाता है, वैसे ही मरण भी श्रेष्ठ है, क्योकि मरण आगामी जीवन का प्रारम्भ है।

व्यवहार धर्म का यथार्थ स्वरूप मनुष्य को मनुष्य से जोडता है, किन्तु जब धर्म मे विकृतिया आ जाती है, तो वह तोडता भी है।

धर्म एक है, वह है वीतराग-धर्म (विश्वधर्म)। जो इसको समझता है, जीवन मे वही धर्मात्मा है। किसी का भी तिरस्कार न करने का नियम लेने वाला, तिरस्कार न करने वाला, मेरी दृष्टि मे धर्मात्मा है।

१९५७ हुमच (कर्नाटक) दूसरी बार चातुर्मास, उत्तराधिकारी बनाने के प्रयत्न, किन्तु राजस्थान की ओर मगल विहार, सस्थान की समुन्नति, ग्रथागार की सुव्यवस्था, धर्म-प्रभावना।

शांति बाहरी प्रपच मे प्राप्त नही हो सकती, क्योकि शांति स्वय मे है, अतरग मे है। जब तक दिल मे धर्म है, बहिरग मे कोई अशांति नही होगी, दु ख नही होगा।

प्रभु राम ने युद्ध मे विजित भूमि विभीषण को सौप दी और स्वर्णमय लका को छोड आये। राम को स्वर्ण आदि वैभव ने मोहित नही किया। वे 'तद्भव-मोक्षगामी' थे, इसलिये वैभव मोह उन्हे न ग्रस सका। धर्मात्मा 'पर-वस्तु' को अपनी नहीं समझते, न उससे राग ही करते है।

वनवास की अवधि समाप्त कर वे अयोध्या पहुचे। मा प्यार से लक्ष्मण के शरीर पर हाथ फेर रही थी कि सहसा उसे लक्ष्मण के शरीर पर एक छाला दिखाई दिया। उसने लक्ष्मण से उस छाले के बारे मे पूछा। लक्ष्मण ने बताया कि युद्ध मे मुझे बाण लगा था। मा ने कहा – बेटा! बहुत दर्द हुआ होगा। लक्ष्मण ने कहा – मा, बाण मुझे लगा था, मै मूर्च्छित था, पर दर्द भाई राम को हो रहा था।

त्याग से ही इसान महान् बनता है। भगवान् गोमटेश बाहुबली ने त्याग मार्ग अपनाया और सर्वस्व पा लिया। चक्रवर्ती भरत के राज्य को जीता और जीतने के बाद लौटा दिया। जीतना और लौटा देना हमारी परम्परा रही है। दुनिया को प्रेम से जीत सकते है, शस्त्र-लडाई से कभी नहीं जीत सकते।

हुमच पद्मावती को पार्श्वकीर्ति ने अपना कर्मक्षेत्र बनाया। उन्होंने तीर्थ को सुव्यस्थित कर दिया और उसमे नई प्राण-प्रतिष्ठा कर दी। स्वामी देवेन्द्र कीर्ति उनके कर्मकौशल पर मुग्ध हुए और उन्होने वर्णी पार्श्वकीर्ति को मठाधीश बनाना चाहा। किन्तु पार्श्वकीर्ति तो सारे विश्व के थे, वे एक मठ तक सीमित कैसे रह जाते ? विश्व धर्म की विस्तृत रूप-रेखा उनके मन में घुमड रही थी। वे 'हुमच पद्मावती' में रुके नहीं और राजस्थान की ओर बढ गए। दो चातुर्मास उन्होने सुजानगढ (राजस्थान) में सम्पन्न किए। वहीं उन्होंने सस्कृत के माध्यम से हिन्दी भी सीखी। क्षुल्लक पार्श्वकीर्ति आरम्भ से ही प्रखर वक्ता रहे। उन्होंने अपने मगल विहार में देश-दर्शन किया और सदाचार मे विश्वास रखने वाले देशवासियों को सबोधित किया। उन्होंने अपने प्रवचनों से जैन-जैनेतरो में नैतिक, सास्कृतिक व सामाजिक जागृति का शखनाद फूका। अनेको ने इनके प्रवचनों से प्रभावित होकर मद्य-मासादि व्यसनो का त्याग किया।

क्षुल्लक पार्श्वकीर्ति के मन मे अभीक्ष्ण स्वाध्याय प्रवृत्ति के साथ-साथ अनुसधान-कार्य मे भी रुचि जागृत हुई। वे कई पुस्तकालयों से सम्पर्क कर विविध साहित्य का मनन-मन्थन करने लगे। 'कल्याणमुनि और सम्राट सिकन्दर' कृति की रचना का भाव इसी समय उनके मन मे प्रतिबद्ध हुआ।

१९५८ सुजानगढ (राजस्थान) प्रभावशाली प्रवचन, जैन-जैनेतरो मे नैतिक सास्कृतिक-सामाजिक जागृति का शखनाद, अनेको द्वारा मद्य-मास का परित्याग।

हम महावीर के गीत गा रहे हैं, किन्तु हमने वर्तमान युग को जैनत्व की महत्ता से अनभिज्ञ रखा है। जैन धर्म प्राचीनतम धर्म है। इस देश के जो प्रथम तीर्थंकर हैं वृषभदेव, उनके दो चिह्न मोहनजोदडो और हडप्पा के उत्खनन मे प्राप्त हुए है। ये प्रामाणिक चिह्न है, इन पर गहरा अनुसधान हुआ है। मोहनजोदडो की खुदाई मे प्राप्त इस अवशेष मे तीर्थकर वृषभदेव दिगम्बर मुद्रा मे योगमग्न है। इस तरह हमारा इतिहास इस देश के मूल मे अनादि काल से है। श्री जवाहरलाल नेहरू ने 'हिन्दुस्तान की कहानी' (डिस्कवरी आफ इडिया) मे लिखा है कि "जैन लोग इस देश के शत-प्रतिशत मूल निवासी है, तीर्थंकर वृषभदेव के पुत्र 'भरत' के नाम से ही देश का नाम 'भारत' पडा है।"

आज देश मे हजारो जैन शिक्षण-सस्थाए है, जिनके द्वारा अच्छे नागरिक तैयार होते है। आप महात्मा गाधी का नाम अक्सर लेते है, उन पर किस की शिक्षा है ? श्रीमद् रायचन्द्र की। उन्होंने दो वर्षों तक गाधीजी को जैनधर्म का अध्ययन कराया, जिसका उल्लेख गाधीजी ने श्रीमद् रायचन्द्र की किताब की प्रस्तावना में किया है।

बार-बार कहा जाता है कि जैन समाज एक धनवान् समाज है, किन्तु कोई कारण नहीं जानता कि आखिर यह समाज धनवान् क्यो है ? खोजिए जड मे। इसका कारण है उसका निर्व्यसन होना। जैन समाज में नब्बे-पिच्यानवे प्रतिशत लोग सयमी है। ये सब सयम के कारण चमक रहे हैं। हमे तीर्थंकर वृषभनाथ ने सिखाया है कि ससार मे सयमपूर्वक आचरण कैसे करना, कैसे चलना ? यह एक ऐसी वृति है सयम की, जिसे दुनिया सीखे और खुशहाल बने।

१९५९ सुजानगढ (राजस्थान) पर्यूषण में प्रवचन, दक्षिण के जैन विद्वानों का उत्तरी भारत मे आना, हिन्दी का अध्ययन, 'मुक्तिदूत' से परिचय, हिन्दी मे प्रवचन, धर्म की अभूतपूर्व प्रभावना, अभीक्ष्ण स्वाध्याय की प्रवृत्ति का समुन्नयन।

धर्म और इतिहास की मैंने हजारो पुस्तके पढी हैं, जिसमे नेशनल लाइब्रेरी, कलकत्ता को अथ से इति तक खोजा-पढा है। वास्तव मे मै तो कहूगा कि आप सब अपरिग्रहवाद की सीख देने की बजाय महावीर द्वारा बताये

गये अपरिग्रहवाद को घर-घर पहुचाए। उसे अपने हृदय मे दीपक की तरह जलाये और जिस निष्ठा से उसका पालन करते आये है, पालन करते जाए और इस तरह ससार के सामने एक आदर्श उपस्थित करे कि हम क्या थे ? जहा तक अपरिग्रहवाद की बात है, जिसके पास कपडा नहीं है, उस नगे आदमी को अपरिग्रहवाद की बात क्या समझा रहे है ? सिद्धान्त उससे सीखा जाता है, जो स्वय त्यागी है, जो त्याग करे, उससे सिद्धान्त सीखिए। महात्मा गाधी से सीखिये। याद रखिये इस देश मे जितने कानून बने हैं, जब तक कानून बनाने वाले इनका एक फीसदी भी पालन नही करते, नही करके बताते, तब तक जनता बिल्कुल पालन करने वाली नही है।

काका कालेलकर ने लिखा है–पार्श्वनाथ का चातुर्याम धर्म प्रथम श्रेणी का था। इस विशाल ससार मे मासाहार के त्याग की शिक्षा किसने दी, तो कहा जाएगा जैनो ने दी है, और इसे दुनिया के सामने रखा है भली भांति पालन करके, अपने आचरण मे प्रतिबिम्बित करके। सन्त विनोबा ने लिखा है–जैनो ने अनेकान्त के द्वारा परस्पर टकराने वाले समस्त धर्मों को समन्वित करने की रचनात्मक परिपाटी दी। हमारी परम्परा है सबकी अच्छाइयो को आत्मसात करने की, अत हमने कभी किसी का तिरस्कार नही किया।

१९६० बेलगाम (कर्नाटक) प्रभावपूर्ण प्रवचन, लोकाभिरुचि द्वारा सम्मान, पालकी मे सभास्थल ले जाकर चरण-भक्ति और गुणानुवाद गोआवासियो द्वारा वर्षायोग के निमित्त निमन्त्रण, किन्तु जा नही सके।

इस विशाल विश्व मे प्राणिमात्र को, विशेषकर मनुष्य को दृष्टि में रखकर जब हम यथासभव सुदूर तक देखते हैं, तो हमें सोचने के लिए बाध्य होना पडता है। सागर का अस्तित्व बूदों से है। एक-एक बूद मिलने से सागर कहलाता है। जब सारे मोती पिरो लिये जाते है तो उसे माला कहते है। अक्षरों से पक्ति और पक्तियों से ग्रथ या शास्त्र कहलाता है। बिखरे हुए मोती माला नहीं कहलाते। बिखरे हुए शब्द भी शास्त्र या ग्रन्थ नही कहलाते, श्लोक भी नहीं कहलाते। इसी प्रकार, जिस देश मे हम मिलकर रहते है, वह समाज, राष्ट्र कहलाता है। पृथक्-पृथक् होने से वह समाज नही कहला सकता। जिस प्रकार समुद्र से बूद को अलग कर दिया जाता है, तो सूरज की किरणे उसे सुखा कर नष्ट कर देती हैं, परन्तु समुद्र में सारी बूदे एकत्रित होने से अनेक सूर्य भी उन्हे सुखाने में असमर्थ होते हैं। इसी प्रकार, समाज को सगठित रहने की शक्ति हमारे बुजुर्गों-पूर्वजो ने दी।

मनुष्य केवल अन्न खाने से नही जीता। पशु-पक्षी भले ही अन्न या भोजन मात्र से जीते हो, परन्तु मनुष्य नही जी सकता, क्योकि उसे शान्ति चाहिए। वह शान्ति की खोज करता रहता है। जैसे शरीर की भूख मिटाने के लिए अन्न की आवश्यकता है, वैसे ही आत्मा का दु ख मिटाने के लिए शास्त्र, आगम, तत्वज्ञान की आवश्यकता है। बिना तत्वज्ञान के शान्ति की बात नही हो सकती।

इनके प्रवचनो को सुनने दूर-दूर से लोग हजारो की सख्या मे आते थे। इनकी कीर्ति व गुणों से आकृष्ट होकर गोआवासियो ने आगामी वर्षायोग गोआ मे करने का निवेदन किया, किन्तु उन्होने आचार्य कुन्दकुन्द की परम तपोभूमि कुन्दकुन्दाद्रि (हुमच से लगभग २८ मील दूर मूडबिद्री मार्ग पर स्थित) पर ही चातुर्मास करना निश्चित किया। क्षुल्लक पार्श्वकीर्ति मे स्वाध्याय की रुचि बलवती होने लगी, जो आगे चलकर क्रमश वृद्धिगत ही होती गई।

अनेक लघुकृतिया उनकी लेखनी से प्रसूत हुईं और वे प्रकाशित भी हुई, जिनमे 'कल्याणमुनि और सम्राट् सिकन्दर,' मराठी मे 'गुरु परिवाद विचार,' 'विश्वधर्म की रूपरेखा,' 'जैन सस्कृति मे दान और पूजा' प्रमुख है। 'कल्याणमुनि और सम्राट् सिकन्दर' कृति मे उन्होने ऐतिहासिक तथ्य को उजागर किया कि कल्याणमुनि दिगम्बर अवस्था में सम्राट् सिकन्दर के साथ यूनान गए थे। सम्राट् सिकन्दर ३२७ ई० पू० में भारत आया था और उसने तक्षशिला मे दिगम्बर जैन मुनियों को प्रत्यक्ष देखा और उनके चिन्तन व जीवन-चर्या से अत्यधिक प्रभावित हुआ था। सम्राट् चन्द्रगुप्त भी जैन थे। इस तरह की अनेक अज्ञात बाते इस पुस्तिका के माध्यम से प्रकाश मे आईं।

१९६१ कुन्दकुन्दाद्रि (कर्नाटक) आचार्य कुन्दकुन्द की परम तपोभूमि, हुमच से लगभग २८ मील मूडबिद्री-मार्ग पर स्थित, स्वाध्याय का बीजाकुर यहीं से वपित-विकसित, यही आगे चलकर मुनि अवस्था मे पल्लवित-पुष्पित।

भगवान् राम की पूजा हम क्यो करते है ? वे सत्य की साक्षात् मूर्ति थे। महावीर की पूजा क्यो करते है ? क्योकि उन्होने सत्य का साक्षात्कार किया था। सत्य का साक्षात्कार करने वालो की हम पूजा कर रहे है, परन्तु हम उस सत्य को आंशिक रूप मे भी अपने जीवन मे उतारने मे असफल हो रहे है इसलिए धर्म बदनाम है। उनकी पूजा से नही, उन्होने सत्य का साक्षात्कार करने की जो विधि बतायी उसे अपने जीवन मे उतार कर हम सत्य का साक्षात्कार कर सकते है, तभी हम उनके उपासक कहला सकते है।

धर्म आत्मा मे है। धर्म बाहर नही है। धर्म किताब मे भी नही है। किताब धर्म का मार्ग बता सकती है कि धर्म तुझमे है, किन्तु आपका धर्म आप मे है।

आत्मा नित्य भी है, अनित्य भी है। एक मे दो बाते कैसे ? समुद्र मे तरगे उठती है, वे नष्ट भी होती है, परन्तु जल नष्ट नही होता। वैसे ही विचार आते है, विचार जाते है, नष्ट हो जाते है, लेकिन विचार करने वाली आत्मा नष्ट नही होती।

सामाजिक आचार-विचार हमेशा से परिवर्तनशील है, परन्तु जो धर्म है, वह अजर-अमर है। अग्नि का धर्म जलाना है। जलाने का धर्म उसने कभी नही छोडा, इसीलिए अग्नि को श्रेष्ठ माना गया है। जैनाचार्यों ने कहा है कि ध्यानाग्नि समस्त कर्मों को नष्ट कर देती है और यह ध्यानरूपी अग्नि हमारी आत्मा मे मौजूद है।

१९६२ कुल मिलाकर क्षुल्लक पार्श्वकीर्ति के रूप मे उन्होने १७ चातुर्मास किए। पहला १९४६ मे कोण्णूर (कर्नाटक) मे और अन्तिम १९६२ मे शिमोगा (कर्नाटक) मे। उनके सभी चातुर्मासो मे प्रवचन, स्वाध्याय और धर्म प्रभावना उपलब्धियो ने जन मानस को आकर्षित किया।

भारतीय धर्म और तत्वज्ञान मे यह बात प्रमुखता से रही कि ज्ञान अल्प भले ही रहने दो, पर जीवन मे उतारो। आचार को महत्वपूर्ण माना है। अल्पज्ञानी निर्मोही मोक्षमार्ग पर है। हमारे यहा मोहरहित ज्ञान को ही श्रेष्ठ माना है और वही मुक्ति का कारण भी माना गया है, इसीलिए कुन्दकुन्दाचार्य ने 'समयसार' की २१-२२वी गाथाओ मे समझाया है कि 'अपने से अन्य जो स्त्री-पुत्रादिक चेतन, धन-धान्यादिक अचेतन और ग्रामनगरादि चेतनाचेतन परिद्रव्य है, मै इसका ही हू, यह मेरा है, यह पूर्व मे मेरा था, पूर्वकाल मे मै भी इस रूप था, भविष्य मे भी यह मेरा होगा, भविष्य मे मै भी इस रूप होऊगा – इस प्रकार का मिथ्या आत्मविकल्प जो करता है, वह अज्ञानी है, जो परमार्थ वस्तुस्वरूप को जानता हुआ वैसा झूठा विकल्प नही करता वह ज्ञानी है।

इस प्रकार, यह चीज मेरी थी, मेरी है और आगे भी मेरी होगी, मेरा सम्बन्ध यह है और आगे भी रहेगा – यह मिथ्या ज्ञान है। जब मेरा शरीर ही अपना नही, तो यह सब कैसे रहेगा ? इसलिए शाश्वत आत्मा के पीछे लगना चाहिए।

हम सयोग को शाश्वत समझ बैठते है। अगली पीढी तक जोडते है, पिछली पीढी तक जोडते है। यह सबसे बडा मिथ्यात्व है। आख मुदने के बाद यह शरीर ही आपका अपना नही है, तो फिर अन्य पदार्थ कैसे हो सकते है ? कर्तव्य निभाना आपका धर्म जरूर है, लेकिन उससे अधिक जो है, वह धर्म नही है। देश के प्रति कर्तव्य, समाज के प्रति कर्तव्य, अपनी आत्मा के प्रति कर्तव्य निभाना भी एक धर्म है, लेकिन याद रखिये – जो व्यक्ति कर्तव्य से आगे नही जाएगा वह डूब जाएगा, खत्म हो जाएगा, उसका नाम कलकित हो जाएगा। इस ससार मे जो लिप्त हो जाता है वह खत्म हो जाता है।

क्षुल्लक पार्श्वकीर्ति के मन मे उत्तर भारत की यात्रा करने का सकल्प दृढ होता जा रहा था। फलस्वरूप चातुर्मास समाप्त होते ही उनके कदम दिल्ली की ओर बढे।

१९६३ दिल्ली मे चादनी चौक क्षेत्र की 'कूचा सेठ की धर्मशाला' मे १० जुलाई, १९६३ का पावन दिन, जब पूज्य आचार्यश्री देशभूषणजी महाराज के समक्ष क्षुल्लक पार्श्वकीर्ति ने मुनि-दीक्षा प्रदान करने की अपनी प्रार्थना को

दुहराया। युवा क्षु० पार्श्वकीर्ति के मस्तिष्क मे 'चुनौती' ने करवट ली थी। एक हुकृति उनके मुखमण्डल पर अविचल प्रकट हुई। क्षुल्लक पार्श्वकीर्ति ने पुन अपने सकल्प को अपेक्षाकृत अधिक दृढता के साथ दुहराया–''भद्रपुरुष! सुने! मेरा निश्चय शिलालेख की तरह अटल है। धीरपुरुष अपने निश्चय से विचलित नही होते (विघ्नै पुन पुनरपि प्रतिहन्यमाना) आखिर जमाना होता क्या है पुरुषार्थी के समक्ष। पुरुषार्थी जिधर चलता है, जमाना उसके पीछे चल पडता है। कायर व्यक्ति ही जमाने के साथ चलता है।''

इस अविचल निश्चय के समक्ष सभी नतमस्तक हो गए। आचार्यश्री के मुखमण्डल पर एक नई दीप्ति व्यक्त हुई जो उपस्थितो को भावी शुभ कार्य की एक सूचना थी। आचार्यश्री ने मुनि-दीक्षा देने की अपनी स्वीकृति प्रदान की।

क्षुल्लक पार्श्वकीर्ति भली भाति विज्ञ थे कि दिगम्बर मुनिचर्या एक महाव्रती जीवन है। बाह्य जगत् मे जहा कदम को सभाल कर रखते हुए चीटी का भी ध्यान रखना आवश्यक है, वही अपने अन्तर्मन को दुर्भावो से नितान्त मुक्त रखने का प्रयास रखना भी परमावश्यक है। यदि विषय कषायो से रजित अल्प भाव भी मुनिमन मे उत्पन्न होता है तो वह कर्मबन्ध उत्पन्न करता है। इसलिए मुनि सदैव सयत, सावधान तथा जागरूक रहते है। उनको दिये गये विशेषण काव्यमय अतिशयोक्ति अथवा केवल प्रशसापरक नही कहे जा सकते। वे वास्तव मे उन गुणो का अनवरत पालन करते है और अतिचार को क्षम्य नही मानते। अहिसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य तथा अपरिग्रह उनके महाव्रत है। ईर्ष्या, भाषा, एषणा, उत्सर्ग, अदाननिक्षेपण-पच है। स्पर्श, रसना, घ्राण, चक्षु, श्रोत-निरोध करना पचेन्द्रियनिरोध है। सामाजिक स्तुति, वन्दना, प्रतिक्रमण, प्रत्याख्यान और कायोत्सर्ग–ये दैनिक षडावश्यक क्रियाए है, और केशलुचन, अचैलक्य, अस्नान, भूशयन, अदन्तधावन, स्थिति-भोजन तथा एकाहार–ये प्रकीर्ण गुण मिलाकर अट्ठाईस मूलगुण होते है जिनका पालन निर्ग्रन्थ मुनि करते है। सर्व-सावद्या-विरत, परिहितनिरत, सर्वस्वत्यागी, परमविरागी, मोहममताजयी, कामविजयी, तपस्यासयमादर्श, विश्ववन्द्य इत्यादि विशेषण उनके स्वरूप के वास्तविक अलकरण है। मुनि महाव्रतादि के पालन मे मन, वचन और काय के त्रियोग की एकता का सदा ध्यान रखते है। मन और वचन को भिन्न-भिन्न रखते हुए भाषण आदि नही करते। उनका वचन उनके मन और काय के एकत्व से परामृष्ट होता है। दिगम्बर दीक्षा आकिचन्य की पराकाष्ठा है और अहिसा की आधारशिला है। कषाय और वासना से हिसक परिणति होती है तथा अकिचनत्व स्वीकारने पर भी अहकार का उदय अहिसाधर्म की उच्चकोटि की परिपालना मे विक्षेप उत्पन्न कर सकता है। इस हेतु से निर्ग्रन्थ वेश वास्तव मे अपने आप में सर्वथा निराकुलत्व प्राप्ति का उपाय है। इसीलिए इसे निर्वाणमुद्रा कहते है। मुनि होना, अर्थात् महाव्रती होना, अर्थात् मूलगुण पालन करना और अशेष कर्मों का क्षय कर अनन्त आत्मसुख प्राप्त करने की दिशा मे क्रमश आगे बढते जाना है। आत्म-कल्याण के अतिरिक्त अपने दिव्य ज्ञान से मुनि मानवता का पथ आलोकित करते रहते है।

आखिर २५ जुलाई, १९६३ को क्षु० पार्श्वकीर्तिजी को दिल्ली के सुभाष मैदान (लाल किला) मे आयोजित भव्य समारोह मे दिगम्बरी मुनि दीक्षा प्रदान की गई। उनका दीक्षा-नाम 'विद्यानन्द' रखा गया। चारो ओर खुशी की लहर दौड रही थी।

जो छोटे वाक्य होते है, वे सारभूत होते है, वे सूत्र कहलाते है। जो सात विशेषताओ से युक्त होते है, वे सूत्र कहलाते है। वे सात विशेषताए है अल्प, अक्षर, सारपूर्ण, असदिग्ध, गूढअर्थ, निर्दोष, हेतु एव तथ्ययुक्त। इस प्रकार इन सात विशेषताओ से युक्त वाक्य को सूत्र कहते हैं।

हमारी भारतीय परम्परा के अनुसार तत्त्वज्ञान की सूत्र-रचना मे इन सात बन्धनो का समावेश किया गया है। जिसमे सात बन्धन नही है, वह सूत्र नही है। वह तो धागा है। सूत्र शब्द का अर्थ धागा है और सूत्र शब्द का अर्थ वाक्य भी है परन्तु उस का वाक्य मे विशेष अर्थ रखा गया है, तभी उसे सूत्र कहा गया है। यह बात कुन्दकुन्दाचार्य ने भी कही है। जैसे आदमी रस्सी को पकड कर ऊपर चढता है, उसी प्रकार सूत्रो के आधार पर वह अपने जीवन को सिद्धालय तक पहुचा सकता है। सम्यग्दर्शन का जो निमित्त कारण होता है, वह सूत्र है। उसमे जीवन को ऊपर उठाने की शक्ति है। सूत्र को याद करना, मनन करना, उसके भावार्थ को जीवन मे उतारना बहुत जरूरी है। स्वाध्याय की जरूरत है। आत्मा मे हम भगवान् के बताये हुए वाणी के सूत्र पिरोये रखते है, तो ससार मे हमारी आत्मा खोयेगी नही, उसे झट मे पकड कर ऊपर उठा सकते है।

यायावर मुनिश्री की लोकहितकारी देश-यात्रा के कीर्ति-चिह्न

१९६४ जयपुर (राजस्थान)

दिल्ली मे आचार्यश्री देशभूषणजी के पास श्रमण-दीक्षा लेने के पश्चात् मुनिश्री विद्यानन्दजी अपने गुरु के साथ सन् १९६४ मे जयपुर मे प्रथम वर्षायोग के लिए पधारे। उस समय जयपुर जैन समाज मुनिश्री की विद्वत्ता एव वक्तृत्व शक्ति से बिल्कुल अनभिज्ञ था। मुनि सघो के प्रति वैसे भी जैन समाज का एक वर्ग उदासीन था उस समय पडितश्री चैनसुखदासजी जीवित थे और उनका जयपुरवासियो पर पूर्ण वर्चस्व स्थापित था। पडितजी की प्रार्थना पर मुनिश्री ने निश्चय किया कि धर्म को मदिरो की चार दीवारी से बाहर लाया जाए और उसे जन-जन तक पहुचाया जाए। इसी तारतम्य मे उन्होने सामाजिक दुराग्रहो और मतभेदो को चुनौती दी और कुछ लोक-मगलकारी कदम उठाये। इस तरह धर्म को सामाजिक प्रबुद्धता की दिशा मे मोड कर एक नयी ही सामाजिक चेतना को जगाया और महावीर की जनवादी परम्परा को पुन लोकमन से जोडा। रत्न को कितना ही छिपाओ वह छिप नही सकता, इसी कहावत के अनुसार मुनिश्री की विद्वत्ता एव प्रवचन शैली ने जयपुर नवयुवक समाज पर प्रभाव जमाना प्रारम्भ किया और एक दूसरे के प्रचार के आधार पर काफी सख्या मे लोग उनके प्रवचनो मे जाने लगे।

नगर की सर्वाधिक लोकप्रिय सस्था राजस्थान जैन सभा द्वारा उनके प्रवचन आयोजित होने लगे। पहले उनके प्रवचन मदिरो मे होने लगे और जब मदिरो का विशाल प्रागण भी छोटा पडने लगा तो महावीर पार्क मे उनका साप्ताहिक प्रवचन रखा जाने लगा, लेकिन जब जन-मेदिनी ही उमड पडे तो मुनिश्री को महावीर पार्क तक ही कैसे सीमित रखा जा सकता था? आखिर रामलीला मैदान मे उनके विशेष प्रवचन आयोजित होने लगे। एक दिन स्टेशन रोड पर एक विशाल पडाल मे मुनिश्री का प्रवचन रखा गया। विषय था "हम दु खी क्यो है?" मच पर मुनिश्री के अतिरिक्त राजस्थान के राज्यपाल डॉ सम्पूर्णानन्दजी एव पडित चैनसुखदासजी विराजमान थे। भाषण प्रारम्भ हुआ। पडितजी ने एव राज्यपाल महोदय ने विषय का अत्यधिक सुन्दर ढग से प्रतिपादन किया, लेकिन जब मुनिश्री का प्रवचन आरम्भ हुआ तो उन्होने सर्वप्रथम कहा कि जिस सभा मे एक ओर सम्पूर्ण आनन्द वाले सम्पूर्णानन्दजी विराजमान है और दूसरी ओर चैन और सुख से चैनसुखदासजी बैठे हुए है तथा वे स्वय भी विद्यानन्द युक्त है तो फिर 'हम दुखी क्यो है,' यह विषय ही क्यो रखा गया? मुनिश्री के कहने मे इतना आकर्षण था कि दो मिनट तक सारी सभा मे प्रसन्नता एव हसी की लहर दौडती रही। स्वय राज्यपाल भी मुनिश्री की प्रवचन शैली से इतने आकृष्ट हुए कि फिर तो वे उनकी सभाओ मे स्वयमेव आने लगे और उन्होने अपने पद एव गौरव तथा सुरक्षा नियमो की भी चिन्ता नही की।

जयपुर से उनकी धवलकीर्ति आगे बढी। जनता मे उनके प्रति अपार श्रद्धा तब उभरी जब यह सुना कि इस दिगम्बर महामुनि ने मुलतान (पाकिस्तान) से राजस्थान आये हुए जैन भाइयो को उनके बीच पहुचकर दूध मे शक्कर की भाति एकमेक कर लिया। बात यह थी कि पाकिस्तान से आये जैन भाइयो को लेकर जयपुर समाज मे एक विवाद खडा हुआ जिसने आगत भाइयो को इस दुविधा मे डाल दिया कि या तो वे बदले या फिर समाज उन्हे आत्मसात् करे। मामला मुनिश्री तक पहुचा। उन्होने दूसरे ही दिन अपार जन-मेदिनी के बीच घोषणा की कि वे मुलतान से आये भाइयो की कालोनी मे विहार करेगे और जब तक जयपुर-समाज उन्हे मिला नही लेगा वे वही रहेगे। मुनिश्री वहा गये, अन्तत मुलतानी जैन समाज को भी आदर दिया गया। यह था एक प्रखर सूर्योदय जिसे राजस्थान ने देखा।

मुनिश्री की धर्मप्रभावना की विशेष योग्यता को दृष्टिगत रखकर आचार्यरत्न श्री देशभूषणजी महाराज ने मुनिश्री को 'धर्म प्रभावना के लिए मगल विहार' की अनुमति प्रदान की।

जयपुर नगर ने मुनिश्री के जीवन-निर्माण की जो भूमिका निभायी वह सदैव उल्लेखनीय रहेगी। उनकी कीर्ति, प्रशसा एव प्रसिद्धि बढने लगी और एक महीने मे ही वह वटवृक्ष के समान विशाल हो गयी। उनके प्रवचन नगर के विभिन्न मोहल्लो के अतिरिक्त बापू नगर, आदर्शनगर, अशोक नगर, स्टेशन रोड, मोहनवाडी आदि उपनगरो मे रखे गये और नगर के अधिकाश नागरिको ने उन्हे श्रद्धापूर्वक सुना। राज्यपाल, मुख्यमत्री, मत्रिगण, विधान सभाध्यक्ष, राज्य के उच्चाधिकारी, विश्वविद्यालय के प्राध्यापक, विद्वान्, व्यापारी एव विद्यार्थी वर्ग सभी ने मुनिश्री के प्रवचनो का लाभ उठाया और ३-४ महीनो तक सारा नगर ही विद्यानन्दमय हो गया। उनकी रविवासरीय सभाओ मे १० हजार से २०-२२ हजार तक का जन समूह होता था। ऐसी भीड जयपुर नगर के इतिहास मे किसी सन्त के प्रवचन मे प्रथम बार देखने को मिली थी। स्वाध्याय व अनुसधान की प्रवृत्ति को भी मुनिश्री ने अखण्डित जागृत रखा। फलस्वरूप 'जैन साहित्य मे विकार' तथा 'पिच्छी कमण्डलु' जैसी महत्वपूर्ण कृतियो की रचना सम्पन्न हुई और उनका प्रकाशन हुआ। 'पिच्छी कमण्डलु' कृति तो इतनी लोकप्रिय हुई कि १९८० ई० तक इसके चार सस्करण निकले।

वर्षायोग के चार महीने एक-एक दिन करते निकल गये और जब मुनिश्री के मगल विहार की तिथि निश्चित हुई तो जयपुर की जनता अवाक्-सी रह गई। मुनिश्री ने अपने चातुर्मास मे विशाल जन समूह एव विशेष सभाओ को सम्बोधित किया और ३-४ लाख स्त्री पुरुषो ने उनके प्रवचनों से लाभ लिया। उनकी अन्तिम सभा त्रिपोलिया बाजार स्थित आतिश मार्केट मे रखी गई जिसमे २५ हजार से भी अधिक उपस्थिति थी। मुनिश्री को जयपुर के नागरिको की ओर से भी भावभीनी एव अश्रुपूरित नेत्रो से विदाई दी गई। वह जयपुर के इतिहास मे उल्लेखनीय रहेगी। तीन मील तक यही क्रम रहा। आखिर यही सोचकर कि मुनिश्री वापस आने वाले नही है लोगो ने उनके चरणो मे नत-मस्तक होकर अपने घरो की राह ली।

मुनिश्री ने देश भर मे श्रमण सस्कृति की सार्वभौम अन्तरात्मा का शखनाद करने हेतु जयपुर से मगल विहार किया। परवर्ती वर्षों मे उनके विभिन्न स्थानो मे हुए वर्षायोगो के दौरान घटित महत्वपूर्ण कार्यो का उल्लेख इस प्रकार है –

जो स्वय बुरा है, उसे सारी दुनिया मे बुराई दिखाई देती है तथा जो स्वय भला है उसे विश्व के समस्त प्राणियो मे भलाई ही भलाई नजर आती है। हमारे पूर्वजो ने हमे जो दृष्टि दी है, वह बडी व्यापक दृष्टि है। व्यापक के साथ ही सूक्ष्म और बारीक,इस प्रकार समता की दृष्टि हमारे पूर्वजो ने हमे दी है।

ससार मे जहा भी लडाई-झगडे हुए, सजातीय प्राणियो मे हुए और उसका दुष्परिणाम भी उन्होने भुगता। कौरव-पाण्डव भाई-भाई थे। एक देश, एक धर्म, एक सस्कृति, एक खून फिर भी आपस मे लडकर सर्वनाश को प्राप्त हुए। सुप्रसिद्ध पप कवि के अनुसार, जिस प्रकार बडी मछली छोटी मछली को खा जाती है, उसी प्रकार जैन समाज भी अपने ही सजातीय लोगो के द्वारा समाप्त होगा। दूसरी जाति के लोग उन्हे समाप्त नही करेगे, वे तो आपस मे ही लडकर स्वय अपने आप खत्म हो जायेगे। महाभारत मे लिखा है लडाई किसकी ? धार्मिक से धर्मी की कभी लडाई नही हो सकती। लडाई होगी तो अधार्मिक से अधार्मिक की ही होगी। नारायण श्रीकृष्ण भी कहते है कि तामसी प्रकृति वाले ही अधर्म को धर्म मानते है।

हम अपने दैनिक जीवन मे यदि दु खी है, तो केवल रागादि विकल्पो के कारण ही। क्योकि इन विकल्पो का कोई अन्त नही है। हमारे भारतवर्ष मे धर्म के प्रमुख अग 'करुणा' को भी विशेष महत्व दिया जाता है। दया, करुणा अथवा परोपकार के बिना हमारा दैनिक जीवन चल ही नहीं सकता।

हमे इस बात का सदैव ध्यान रखना चाहिए कि हम सज्ञी पचेन्द्रिय मनुष्य है। हम से जितनी हो सके, प्राणिमात्र की यथाशक्ति नि स्वार्थ भाव से सेवा करते रहे, तभी हमारा यह मानव-जीवन सफल हो सकेगा।

१९६५ फीरोजाबाद (उ० प्र०)

जयपुर से दिल्ली तक के मार्ग मे राष्ट्रधर्म पर सारपूर्ण प्रवचन, फीरोजाबाद मे जैन-जैनेतरो को सदाचारपूर्ण एव धर्मपरायण जीवन का प्रभावी उपदेश।

अहिसा और सत्य एक सिक्के के दो पहलू है। अहिसा के अभाव मे सत्य और सत्य के अभाव मे अहिसा की स्थिति नही है। अहिंसा निषेधात्मक है और सत्य विधेयात्मक। अहिसा निषेध करती है कि ऐसा मत करो, वह रोक देती है, पर सत्य विधिसूचक है।

आचार्यों ने सर्वप्रथम मिथ्यात्व छुडवाना चाहा, फिर क्रोध, मान, माया और लोभ, तत्पश्चात् सत्य को स्थान दिया। प्राणी कभी लोभवश भी असत्य व्यवहार या असत्य भाषण कर देता है। क्रोध, मान और माया के कारण तो वह असत्य बोलता ही है। इसलिए आचार्यों ने पहले इन चारों से छुटकारा पाने के लिए कहा। पहले इनकी सफाई करवा दी। क्रोध, मान, माया और लोभ की समाप्ति के पश्चात् सत्य धर्म रखा। विश्व मे कोई भी धर्म या तत्वज्ञान ऐसा नही है, जिसमे सत्य को कोई स्थान न दिया गया हो। व्यवहार-जगत मे भी कहते है – साच बराबर तप नही।

१९६६ दिल्ली

एक उल्लेखनीय चातुर्मास, कई ओजस्वी प्रवचन।
मुनिश्री सुशील कुमारजी से महत्वपूर्ण भेट तथा परस्पर विचारो का आदान-प्रदान। 'विश्वधर्म की रूपरेखा' लघुकृति का प्रणयन, प्रकाशन।

अपने वक्तव्य मे प० जवाहरलाल नेहरू ने कहा था कि मेने डॉ० राजेन्द्र प्रसाद को जीवन मे कभी असत्य बोलते नही देखा, न सुना, अर्थात् राजनीति मे रह कर भी सत्य का प्रयोग किया जा सकता है, जीवन मे उतारा जा सकता है। जो लोग यह समझते है कि छल, झूठ, कपट के बिना राजनीति मे प्रवेश नही किया जा सकता है, उनकी इस भूल का अहसास कराने के लिए डॉ० राजेन्द्र प्रसाद का दृष्टान्त पर्याप्त हैं। सत्य का अशमात्र भी विजय का कारण बन जाता है।

उत्तम सत्य को तो वीतराग ही परिपूर्णत प्राप्त कर सकते है, पर सामान्य मानव को भी व्यवहार सत्य तो जीवन मे उतारना चाहिए। जीवन मे कितना उतारा, इसका महत्व है, केवल चर्चा करते रहना महत्वपूर्ण नही है।

आचार्यों ने कहा कि उत्तम सत्य दया से परिपूर्ण है, दोषो का निवारक है, इस भव और पर-भव में सुखकारक हैं। सत्य मे अतुल धर्म तथा विश्वसनीयता का निवास है। सत्यभाषी सबका विश्वास अर्जित कर लेता है। इसके विपरीत असत्य-वक्ता किसी का विश्वास-पात्र नही हो सकता। 'सत्य' सब धर्मों मे प्रधान है। सत्य पृथ्वी पर गौरव का विधान है। सत्य ससार-समुद्र का सेतु है, पुल है, यह सबको पार कराने वाला है। सत्य सुख-उत्पादक है। मानव-जीवन सत्य की कांति स ही शोभायमान होता है। सत्य से, पवित्रता से पुण्यकर्मों की प्राप्ति होती है।

१९६७ मेरठ (उत्तरप्रदेश)

तरुणशक्ति से सम्पर्क, जैन-जैनेतरो को एक शात प्रशमित जीवन जीने की प्रेरणा, युवाशक्ति धर्म की ओर आकर्षित, उसका सामाजिक और धार्मिक अभ्युत्थान के लिए आह्वान। राजस्थान विधान सभा के अध्यक्ष श्री निरजन नाथ आचार्य, प्रसिद्ध विद्वान डॉ० मगलदेव शास्त्री आदि विख्यात व्यक्तित्व मुनिश्री की विद्वत्ता व ओजस्वी-वाग्मिता से प्रभावित।

हमे तीर्थकर की वाणी का, तीर्थकर द्वारा अभिव्यक्त सिद्धान्तो के अनुसार ही कथन करना चाहिए, अपनी इच्छानुसार नही। दृष्टात कही से भी ले सकते है। पर सिद्धान्त तीर्थकर प्रणीत ही लेने होगे। आचार्य कुन्दकुन्द देव के 'समयसार' मे अस्सी दृष्टातो के माध्यम से सिद्धान्तो को समझाया गया है, कोई दृष्टान्त सोने का है, कोई लोहे का। हम भी दृष्टात पेड-पौधे आदि किसी का भी ले सकते है, पर यदि कथन भी इच्छानुसार करेंगे, तो सत्य मे दोष आ जायेगा। तीर्थकर सर्वज्ञ हो जाने के पश्चात् उपदेश देते है, इसके पूर्व नही, क्योकि तभी तो वे सत्य की पूर्ण गहराई को मापते है। इसलिए हमे उनके अनुकूल, उनके सिद्धान्तो के अनुसार, शास्त्रो के अनुसार अपनी बुद्धि ओर वाणी को ले जाना चाहिए, अन्यथा अमृत को विष और विष को अमृत समझ लेगे और अनर्थ हो जायेगा।

१९६८ बडौत (उत्तर प्रदेश)

धर्म प्रभावना, स्वाध्याय, धर्म की ओर लोकशक्ति का उत्प्रेरण। 'तीर्थकर महावीर भक्तिगगा' लघु कृति की रचना व प्रकाशन।

भारत एक विशाल देश है। यहा नाना धर्म-सम्प्रदाय है। जैसे माली बाग मे जाता है, गुलदस्ता बनाता है, उस गुलदस्ते में सफेद, लाल, गुलाबी, नीले-पीले सब रग के फूल सजाता है और भेट करता है, उसी प्रकार सारे सप्रदाय नयो का समन्वय कर समस्त विचारधाराओ को अनेकान्त मे एकता-सूत्र मे बाध कर गुलदस्ता बनाये, ऐसे गुलदस्ते को बनाने की कला सीखे, माली बनें, एकान्त को लेकर न चले। जैसे माली गुलदस्ते के लिए सब पेडो से फूल लेता है, उसी तरह हम भी सब सम्प्रदायों से लाभ ले। भारत एक बगीचा है, हम सब उसके माली है, माली का कर्त्तव्य है कि वह सुन्दर गुलदस्ते बनाये, जिसे पाने वाला सुखी हो जाये। अत हम अनेकान्त को धारण करे।

हरिजन ओर गिरिजन सभी दु खो से मुक्ति पा सकते है। जाति मद का दुरभिमान मत कीजिए। एक दूसरे के अच्छे विचार सुनिये, बुराई न कीजिए। सब मे बुराई है, तो अच्छाई भी है। कोई अयोग्य मनुष्य है ही नही, सब मे कोई न कोई अच्छाई, गुण अवश्य है। उसे ही देखिये, ग्रहण कीजिए। देखिये, आप अच्छाई के भण्डार बन जायेगे। बुराई मत देखिये, बुराई देखेगे, बुराई करेगे तो आपके हाथ क्या लगेगा ? बुराई करेगे तो स्वय बुरे बनेगे। कोयले की दुकान मे घुसने पर कालिख अवश्य लगेगी। आप सदैव देश, मानव-मात्र, समस्त पशु-पक्षियो के प्रति सुख प्राप्ति के विचार रखे। विचार श्रेष्ठ होने चाहिए। एक-एक शब्द मे कलह-निर्माण की, अशान्ति निर्माण की शक्ति हे तो साथ मे प्रेमभाव उत्पन्न करने की शक्ति भी हे। अत प्रेमभाव वाले शब्द का ही प्रयोग कीजिए।

१९६९ सहारनपुर (उत्तर प्रदेश)

वर्षायोग के दिनो मे भगवान् महावीर २५०० वा निर्वाणोत्सव प्रारम्भिक विचार विनिमय। विद्वानो और साहित्य-सर्जको को धर्म की ओर आने का निमन्त्रण, धर्म की उपादेयता का सुसगत व्याख्यान, यह बताना कि वह जीवन से अलग-थलग वृत्ति नही है, धर्म मे सौन्दर्यबोध का नवोन्मेष, यही बीज आगे जाकर सगीत, साहित्य रचना, चित्रकला इत्यादि के रूप मे पुष्पित-फलित। अनेकान्त-सप्तभगी-स्याद्वाद आदि साहित्य के हिमालय को शुभ्र-धवल गिरि-शिखरो का अनिवार्य निमत्रण, प्रथम तीर्थकर भगवान् आदिनाथ की पवित्र तपोभूमि हिमालय तीर्थ की यात्रा करने की भावना, तदनुसार आगामी वर्षायोग का सकल्प।

हमारा भारत धर्म-प्रधान देश है। भगवान् राम बहिरग वैभवो से नही, अपने धर्ममय, सत्यनिष्ठ और सत्य का साक्षात्कार करने से मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् कहलाये।

जिस प्रकार गृहस्थ जीवन मे पुरुषो की जिम्मेदारी है, उसी प्रकार महिलाओ की भी है। जिनसेनाचार्य ने महापुराण मे कहा है कि जो गुणी और विदुषी है, कष्ट-सहिष्णुता आदि गुणो से सम्पन्न है, वह स्त्री सृष्टि मे

अग्रिमपद को पाती है। लोग कहते है कि नारी की निन्दा की गई है। निन्दा दोषो की की गई, गुणो की किसी ने भी निन्दा नही की। जिस तरह मल्लाह यात्रियो को नदी मे आने वाले तूफानो से बचाता हुआ उस पार पहुचाता है, वैसे ही अपने विवेक और समझदारी से गृहस्थ जीवन मे आने वाले दु खो और संकटों से बचाते हुए ससुराल से लेकर पीहर तक और पीहर से लेकर ससुराल तक दोनो किनारो तक पहुचाने की जिम्मेदारी स्त्री की है और वह तभी पहुचा सकती है, जब वह सीता के समान सपत्ति के समय पीछे रहे और विपत्ति के समय आगे रहे, क्योकि सपत्ति के समय तो सब साथ देने वाले है, परन्तु विपत्ति आने पर सब भाग खडे होने वाले है। इसीलिए सीता के चरण गगाजल से अधिक पवित्र माने गये। जिस सास के मन मे बहू और बेटी के प्रति भेद नही हो, समता हो, वह धर्मात्मा बन सकती है।

१९७० श्रीनगर – गढवाल (उ० प्र०)

प्रथम बार किसी दिगम्बर मुनि का अभिक्रम, कई जैनेतर साधुओ तथा सप्रदायो से सद्भावनापूर्ण संपर्क, प्रकृति की स्वाभाविक शक्तियो का निरीक्षण, अभीक्षण, अनुप्रेक्षण। श्री बद्रीनाथ तीर्थ के प्रवेश द्वार श्रीनगर मे अलकनन्दा के मनोज्ञ तट पर स्थित प्राचीन किन्तु जीर्ण-शीर्ण जिन-मन्दिर का जीर्णोद्धार करा कर सुन्दर भव्य जिनालय का निर्माण, यात्रियो की सुविधा हेतु धर्मशाला का भी निर्माण। इन्दौर-वर्षायोग का निमत्रण, तदनुसार वहा से मगल-विहार।

धर्म कोई केवल मदिर मे जाना ही नही है। धर्म तो समताभाव मे है। समताभाव को प्राप्त करना धर्म है। सूत्र या श्लोक रटने से कुछ नही होता, उसे समझकर उसके अनुसार आचरण आवश्यक है। जो हमारी सस्कृति ने भाव दिया है, वह समता और वीतरागता का है। समताभाव को छोडकर दुनिया मे धर्म और उसका सिद्धान्त सिद्ध नही हो सकता। हम समझ नही पा रहे है कि धर्म क्या चीज है। धर्म दुकान का अलग, मकान का अलग, मदिर का अलग, गुरुद्वारे का अलग नही है। धर्म सर्वत्र है, सदैव है। जब तक हम इस बात को नही समझेगे, तब तक धर्मलाभ नही ले सकेगे, धर्मात्मा भी नही बन सकेगे।

हमारे देश मे जो सास्कृतिक परम्पराए रही है, उनमे भगवान् राम जैसे महापुरुषो का योगदान है। हम उन परम्पराओ से दूर होते चले जा रहे है। हम अपने जीवन मे रामराज्य का एक भी गुण नही अपनायेगे तो रामराज्य कैसे ला सकेगे। भगवान् महावीर ने अपने सिद्धान्त के साथ दो बाते दी – विचार और आचार। विचारपूर्वक आचार करो और आचारपूर्वक विचार करो। विचार इसलिए करना है, ताकि उसे आचरण मे उतारा जा सके। विचार मे स्याद्वाद और आचार मे अहिसा – यह भगवान् महावीर का महान सदेश है।

१९७१ इन्दौर (म० प्र०)

२५००वे निर्वाण महोत्सव की रूपरेखा तैयार। देश के गण्यमान्य श्रावक सगम मे निर्णय। आदिनाथ मागलिक भवन मे पडाव, अपूर्व धर्म भावना, जैन-जैनेतरो का हजारो की सख्या मे प्रवचन-श्रवण, वैष्णव विद्यालय के प्रागण मे एक लाख से भी अधिक जनता की उपस्थिति मे भगवान् राम पर प्रभावपूर्ण प्रवचन से मुनिश्री के अपार वैदुष्य व समन्वयवादी भावो की जनता पर अमिट छाप। विद्वत् सपर्क, निर्वाण, वीर निर्वाण ग्रन्थ प्रकाशन समिति तथा वीर निर्वाण विचार सेवा जैसी लोकसेवी सस्थाओ की स्थापना, सामाजिक एकता का पुनरुज्जीवन 'निर्मल आत्मा ही समयसार है', भक्ति के अकुर, विश्वधर्म के मगल पाठ, समय का मूल्य, स्वतत्रता और समाजवाद, विश्वधर्म के दस लक्षण, नारी का स्थान और कर्त्तव्य, सप्त व्यसन, अभीक्ष्णज्ञानोपयोग जैसी अपूर्व रचनाओ का प्रणयन, कला और साहित्य को प्रोत्साहन।

किसी जाति या धर्म के कारण कोई बडा नही हो जाता है। न हिन्दू, न मुसलमान, न सिख, न पारसी अच्छा है, अच्छा वह है जिसकी नियत अच्छी है। जब हम दहेज मागते है, तब कहा जाता है हमारा धर्म, कहा जाता है भगवान् राम और महावीर ? उनके सिद्धान्त कहा चले जाते है ? हमने तो धर्म को कृत्रिम बनाकर छोड दिया।

जिनधर्म मे आत्मशुद्धि साधन है। आत्मा को शुद्ध करने के जो साधन है, वे शुद्ध होगे, पवित्र होगे, तो आत्मशुद्धि होगी। जिस प्रकार साफ बर्तन मे दूध रखेगे, तो वह रहेगा अन्यथा फट जाएगा। आत्मशुद्धि का साधन धर्म है। धर्म की पहली शर्त यह है कि जो पहले अपने मन को शुद्ध, स्वच्छ, निर्मल और अप्रमत्त बनाता है, तब वह दूसरो को भी वैसा बना सकता है। साधन और साध्य की पवित्रता की विशेषता यह है कि सस्कार का सार निकल आता है। जब पदार्थों पर सस्कार करने से उनकी कीमत बढती है, वे कीमती हो जाते है, तब हमारी आत्मा पर भी उत्तम सस्कार कर दे, तो वह कीमती हो जाती है। वैसे तो वह कीमती है ही। उसे और अधिक से अधिक मूल्यवान् बनाने की हमारी सस्कृति मे जो विधि बतायी गयी है, वह सस्कार है।

१९७२ श्रीमहावीरजी (राजस्थान)

इन्दौर से श्रीमहावीरजी के मार्ग मे अनेक पडाव, धर्म-प्रवचन, कोटा मे विश्वधर्म ट्रस्ट की स्थापना, जैन साहित्य सृजन का नवोत्थान, 'अनुत्तर योगी तीर्थकर महावीर' जैसे उपन्यास लेखन के लिए समुचित उत्प्रेरण-सकल्पन, आत्मधर्म की साधना का अभ्युदय, समाज के सास्कृतिक उन्नयन के लिए समुचित वातावरण की रचना तथा इन्दौर जैन समाज मे उत्पन्न हुए विवाद की शान्ति हेतु सफल उद्बोधन। 'आदि कृषि शिक्षक तीर्थकर आदिनाथ,' 'ईश्वर कहा है', 'अपरिग्रह से भ्रष्टाचार उन्मूलन', 'देव और पुरुषार्थ', 'पावनपर्व रक्षाबन्धन', 'सुपुत्र कुलदीपक', 'श्रमण सस्कृति और दीपावली', 'मगलप्रवचन' आदि कृतियो का प्रणयन व प्रकाशन की योजना।

धर्म कहता है कि आप गुणवान् है। जहा आपको गुण मिलता है, वहा से आप उसे लेते है। मनुष्य मे गुण-ग्राहकता है, इसीलिए आचार्यों ने भगवान् वन्दन को 'तद्गुण लब्धये' कहा है। हे भगवान्! आपको हम प्रणाम कर रहे है, इसका मूल कारण आपके गुणो को प्राप्त करना है। यदि हम केवल भगवान् का गुणगान करते रहे तो गुणो की प्राप्ति कैसे होगी? उनके गुणो को जीवन मे उतारने से ही गुणो की प्राप्ति हो सकती है।

भारतीय धर्म और सस्कृति का मूल उद्देश्य यह है कि स्वय को स्वच्छ और पवित्र बनाओ। जो स्वच्छ और पवित्र बनता है, वही मार्ग दर्शक बन सकता है, इसलिए तीर्थकर महावीर और भगवान् राम आदर्श बने तभी हम श्रद्धा से उनकी ओर देखते है।

१९७३ मेरठ (उत्तर प्रदेश)

द्वितीय वर्षायोग। साहित्य-निर्माण की प्रेरणा। 'वीर निर्वाण भारती' की स्थापना। सगीत मे परिष्कृत रुचि, १९७४ ई० मे आयोजित होने वाले २५००वे महावीर निर्वाण महोत्सव की योजना का दूरदृष्टिपूर्ण आकल्पन-मुनियोजन, धर्मचक्र-परिक्रमण का निश्चय, समस्त जैन-सप्रदायो को एक मच पर लाने का उदार-सतुलित प्रयास, 'आध्यात्मिक सूक्तिया', 'तीर्थकर वर्धमान' आदि कृतियो का सर्जन। १९८१ ई० मे आयोजित होने वाले 'बाहुबलि गोमटेश्वर सहस्राब्दि महामस्तकाभिषेक' की योजना मे उपयोगी परामर्शादि प्रदान, वहा जाने वाले यात्रियो की सुविधा हेतु ३ अगस्त, १९७३ को श्रवणबेलगोला मे विद्यानन्द निलयम् का शिलान्यास।

वीर निर्वाण भारती सस्था द्वारा 'एन अर्ली हिस्ट्री आफ वेशाली' के लेखक डॉ० योगेन्द्र मिश्र (पटना विश्वविद्यालय), प्रसिद्ध इतिहासविज्ञ डॉ० ज्योति प्रसाद जैन (लखनऊ), 'जैनिज्म इन विहार' के लेखक डॉ० पी सी राय चौधरी तथा प० बालचन्द जैन को २५०० रु० की धनराशि व स्वर्णपदक प्रदान कर सम्मान।

व्यवहार मे पानी पीना धर्म है, तो पिलाना भी धर्म है। इसलिए कहा गया है – 'परस्परोपग्रहो जीवानाम्'। जीव परस्पर-उपकार करके शांति मे जी सकता है। इस व्यावहारिक धर्म को छोडकर इस दुनिया मे और धर्म नही हो सकता। जो इसे छोडेगा, वह धर्मच्युत हो जाएगा। इस धर्म को जीवन मे उतारने से ही आत्मशुद्धि और शांति

सभव है। हमे अपने स्वार्थों से ऊपर उठना है। सेवा भावी बनकर 'परस्परोग्रहो जीवानाम्' के सूत्र को जीवन मे चरितार्थ करना है।

अहिसा धर्म का यही कहना है कि यदि आपको जीने का अधिकार है, तो दूसरो को भी है। अहिसा केवल पूजने का धर्म नही है। यदि हम शान्ति से जीना चाहते है तो दूसरे भी शान्ति से जीये, ऐसे उपाय हमे ढूढने होंगे।

१९७४ दिल्ली

तृतीय वर्षायोग। पच्चीससौवे वीर-निर्वाण महोत्सव के लिए अपेक्षित वातावरण का निर्माण। जैन ध्वज, जैन प्रतीक, ध्वज-गीत, जैन साहित्य आदि मुद्दो पर सभी सप्रदायो की निर्विवाद सहमति, आचार्य विनोबाजी की प्रेरणा से (नवम्बर मे) 'समणसुत' पर हुई सगीति मे महत्वपूर्ण योगदान, 'श्री कुन्दकुन्द भारती' की स्थापना। १७ नवम्बर को आचार्यरत्न श्री देशभूषणजी महाराज की अनुज्ञा से चतुर्विध सघ की उपस्थिति मे उपाध्याय पद प्रदान, फलत उपाध्याय' परमेष्ठी की परम्परा को पुनर्जीवन। ५० वी जन्म-जयती आयोजित।

प्राकृत साहित्य, प्राकृत भाषा व जैन साहित्य के लेखन, अनुसधान व प्रकाशन के लिए समाज मे जागृति की लहर। तीर्थंकर महावीर और उनकी आचार्य परम्परा (भाग १-४), ले० डॉ० नेमिचन्द जैन का अ० भा० दिग० जैन विद्वत्परिषद द्वारा प्रकाशन। हरियाणा के लिए मगल विहार।

भारत-भूमि मे दयाभाव, आतिथ्यभाव सदैव से सबमे विद्यमान है। पर आज वह अभिव्यक्त नही है, लुप्त होता जा रहा है। उसे जगाने के लिए हमे वैज्ञानिक ढग से शिक्षा देनी होगी। पहले अध्यापक, बच्चो को पढाई के साथ-साथ सफाई से रहने की शिक्षा भी देते थे। पर आज केवल अक्षर ज्ञान कराना ही पर्याप्त मान लिया जाता है। केवल अक्षर ज्ञान होना, बडी-बडी डिग्रिया ले लेना ही पर्याप्त नही है। शिक्षा से विवेक की, ज्ञान की वृद्धि होनी चाहिए। ज्ञानवान् व्यक्ति कभी दु खी नही होगा, वह गलत कार्य नहीं करेगा, क्योकि ज्ञान सदैव दु ख को दूर करता है। वह ज्ञान किस काम का जो दु ख दूर नही कर सके? सच्चा ज्ञान वही है जो दु खो को दूर कर दे। विषम परिस्थितियो मे सतप्त न हो, धैर्य न खोये, समता भाव रखे तो दु ख का अनुभव ही न हो। आज बडी-बडी डिग्रिया ले लेने पर भी विद्यार्थियो को ज्ञान प्राप्त नही होता, उनका दु ख दूर नही होता तो वे बसो को आग लगा देते है, रेल की पटरिया उखाडते है और भी अनेक अनीतिपूर्ण कार्य करते है।

१९७५ जगाधरी (हरियाणा)

हरियाणा मे प्रथम चातुर्मास, डॉ० प्रेम सागर जैन लिखित 'ब्राह्मी विश्व की मूल लिपि' का प्रकाशन व विमोचन। राष्ट्रीय स्तर पर दिगम्बर जैन सस्था की अपेक्षा की अभिव्यक्ति, फलस्वरूप साहू श्री शान्ति प्रसाद जैन के प्रयास से जयपुर मे अ० भा० दिगम्बर जैन महासमिति की स्थापना। पहली धर्म प्रस्तावना। दिल्ली से जगाधरी के लिए मगल विहार।

दुनिया मे जैन, बौद्ध, सिक्ख, हिदू सभी है, कोई बुरा नही है, बुरा वही है जिसकी नियत बुरी है। गुणभद्राचार्य ने कहा है कि धर्म प्रत्येक आत्मा मे है। जब आत्मा स्वच्छ होगी, निर्मल होगी तभी कल्याण होगा। आचार्यों ने प्राणीमात्र के कल्याण के लिए दर्शन दिया, दृष्टि दी।

सम्राट् चन्द्रगुप्त व अशोक के द्वारा स्थापित एकछत्र राज्य की परिणति प्रमादो के कारण झगडों मे हुई। गृहस्थियो व नागरिको को अपने घर-परिवार व राष्ट्र को प्रमादों से बचाना चाहिए। बहुत प्रयत्नों से सात पीढियो तक परिश्रम के साथ घराने की प्रतिष्ठा व नाम ऊचा किया जाता है, पर उसको नष्ट करने मे सात मिनट भी नही लगते, दुर्व्यसनो मे पडकर उसी घराने के उतराधिकारी सात मिनट मे उसके नाम को बट्टा लगा देते है, घराने की प्रतिष्ठा खत्म कर देते है। अशोक के पश्चात् धीरे धीरे उसका राज्य भी छिन्न भिन्न हो गया।

ऋषि मुनियो ने अपने तत्वज्ञान, चिन्तन व मनन के द्वारा आगम की रचना की है। हम उन शास्त्रो को, उनकी रचनाओ को पढकर आनन्दित होते है। जब छोटे बच्चे प्रारम्भ मे विद्यालय मे पढने जाते है, उनको वहा चिडिया की कविता सिखायी जाती है, तब वे प्रसन्न हो उठते है, उसको याद कर लेते है, गाते है, सब को सुनाते है। जब वे बच्चे कुछ बडे होते है, उनका अध्ययन-स्तर आगे बढता है, तो वे चिड़िया की कविता से भी उत्तम कविता सामग्री ढूढने लगते है और पर्याप्त रुचि व सस्कार हो तो तत्वज्ञानी जिज्ञासु भी बनते है।

१९७६ दिल्ली

'समयसार' पर अनुचिन्तन, तदनुसार अनवरत अनुसधान एव पाठालोचन, प० बलभद्रजी को सपादन के लिए प्रेरणा, धर्म प्रभावना, अभीक्ष्ण अध्ययन।

प्रत्येक प्राणी के प्रति दया भाव, अहिसक भाव के कारण महावीर, महावीर बने। महावीर की अहिसा हमे निर्माण सिखाती है, विध्वस नहीं। इस सृष्टि मे जितना उपकार पशु-पक्षियो ने मानव पर किया है उतना मानव-मानव पर नही कर सका है। मानव जाति ने इतनी मात्रा मे किसी को जल पिलाकर तृप्त नही किया होगा जितना गोवश ने मानव जाति को दूध पिला पोषण कर दिया है। ऐसे परोपकारी मूक पशु-पक्षियो को मारने, आगजनी आदि से हिंसा फैलाना कहा तक शोभनीय है।

एक बार युधिष्ठिर वगैरह तीर्थ यात्रा के लिए जा रहे थे, वे श्रीकृष्ण के पास गये और यात्रा मे साथ-साथ चलने का आग्रह किया। श्रीकृष्ण स्वय नही गये, एक तुबी का फल दिया और कहा – तुम इसे तीर्थ यात्रा करवा लाओ। यात्रा से लौटने पर युधिष्ठिर ने तुंबीफल श्रीकृष्ण को वापस लाकर दिया और बताया कि हमने सब तीर्थों पर एक-एक बार स्नान किया पर इस फल ने सैकडो बार स्नान किया है। हर यात्री आपके द्वारा प्रदत्त फल है, यह जानकर इसे साथ लेकर स्नान करता था। श्रीकृष्ण ने कहा – अच्छा ऐसी बात है तो सब इसको खाओ। सबने काटकर एक-एक टुकडा मुह मे रखा और थू-थू करने लगे, 'बहुत कडवी है, बहुत कडवी है' कहने लगे। इतना स्नान करने पर भी उस तुबी का कडवापन नही गया। अत केवल चर्म धोने मे कर्म नही धुलते। क्रोध, मान, लोभ, माया, मिथ्यात्व आदि छोडने से ही सम्यग्दृष्टि बन सकते है।

१९७७ बडौत (उत्तर प्रदेश)

'समयसार' के पाठालोचन को अतिम स्पर्श तथा प्रकाशनार्थ 'श्री वीर-निर्वाण-ग्रन्थ-प्रकाशन-समिति' को प्रदान, किन्तु प्रकाशक श्री कुन्दकुन्द भारती, विद्वानो को नवसाहित्य-रचना के लिए प्रेरणा। बडौत मे विद्यानन्द शोध सस्थान की स्थापना। अप्रैल, ७८ मे आ० पार्श्वदेव रचित संगीत समयसार का विमोचन।

एक बालक मेले मे अपने पिता की अगुली पकड कर घूम रहा था। मेले मे लगी दुकानो व अन्य सभी वस्तुओ को देखकर वह अत्यन्त आनन्दित व खुश हो रहा था। अचानक पिता की अगुली छूट गई। बालक पूरे मेले मे घबराया हुआ, रोता हुआ घूमता रहा। यद्यपि मेले मे वे ही वस्तुए अब भी विद्यमान थी जो पहले थी, जिन्हे देखकर वह बालक पहले प्रसन्न हो रहा था, पर अब पिता की अगुली छूटने मात्र से वह दु खी हो रहा था, वे वस्तुए भी उसे प्रसन्न नही कर पा रही थी। इस प्रकार, सब वैभवादि होते हुए भी यदि धर्म का सहारा, धर्म का आश्रय, धर्म की पकड छूट गई तो कोई सुखी नही रह सकता। उन वैभवादि की वस्तुओ मे कोई सुख नजर नहीं आयेगा। जो वैभव पहले, धर्म का अवलम्बन रहने से सुख का कारण बना हुआ था, वही दु ख का कारण बन जायेगा। इसीलिये धर्म का आश्रय लेकर प्रतिदिन आत्मचिन्तन के लिये थोडा-सा समय अवश्य देना चाहिए।

बाल्मीकि ने लिखा है कि – राम ने हनुमान से कहा कि तूने जो मेरी सेवा की है, उसे मै लौटाना नही चाहता, क्योकि सेवा लौटाने का मतलब है तुम पर भी मेरे जैसे सकट व उपसर्ग आदि आवें और उस समय मै तुम्हारी सेवा करू, तुम्हारे द्वारा की गई सेवा का बदला चुकाऊ। मै तो चाहता हूँ कि तुम पर कोई उपसर्ग, कष्ट ही न आवे। यही

मेरा आशीर्वाद है। जिसने आपकी सेवा की, आप भी उसकी सेवा चुकाना चाहते है, पर ऐसी भावना मत लाइये कि उस पर भी सकट आये और तब आप उसकी सेवा करे। आपने हमारी सेवा की थी तो देखिये हम भी आपकी सेवा कर रहे है, यह तो मान कषाय हो जायेगी।

राम ने चौदह वर्ष का वनवास भोगा, पाण्डवो ने भी १४ वर्ष का वनवास भोगा, नारायण श्रीकृष्णजी के जन्म व मरण के समय कोई गीत गाने वाला व रोने वाला नही रहा। इन महापुरुषो के जीवन की इन घडियों से यही प्रेरणा ले सकते है कि मनुष्य पर कब, कैसे दु ख-सकट आ जावे इसका कोई ठिकाना नही है। इसलिए हमे दूसरो की नि स्वार्थ सेवा करनी चाहिए व सदैव ही सेवा के भाव बनाये रखने चाहिए। जो सेवा का धर्म नहीं समझते वे अज्ञान मे है। यदि सेवाभाव धर्म नही है तो क्यो डाक्टर व हकीम के पास भाग कर जाते है।

१९७८ दिल्ली

प्राकृत भाषा और कुन्दकुन्दाचार्य के आध्यात्मिक व तत्वचिन्तन एव जैन सस्कृति से सबधित ग्रन्थो के अनुसंधान, अनुवाद, सपादन, प्रकाशन आदि के उद्देश्य से १९७८ ई० मे गठित 'कुन्दकुन्द भारती' नामक संस्था के भवन का शिलान्यास। १७ नवम्बर को आचार्यरत्न श्री देशभूषणजी महाराज की अनुज्ञा से चतुर्विध सघ द्वारा 'एलाचार्य' पद प्रदान।

आचार्यों ने तत्वज्ञान के तीन साधन बताये – शब्द, अर्थ व ज्ञान। श्लोकवार्तिक मे भी इसे भली प्रकार समझाया गया है। आचार्यों ने नाम, स्थापना, द्रव्य व भाव से व्यवहार होता है, ऐसा बताया है। नाम को ही ले, नाम की आवश्यकता क्या है ? आचार्यों ने कहा है कि उद्देश्य को समझने के लिये, उद्देश्य की सिद्धि के लिये नाम की आवश्यकता है। नाम के साथ, समस्त दार्शनिको ने अपने मतानुसार लौकिक, आध्यात्मिक या पारमार्थिक परिभाषाए दी है।

आज राष्ट्र मे अनेक आन्दोलन हो रहे है। हमे राष्ट्र के प्रति अपने कर्त्तव्य को समझकर शांति का मार्ग अपनाकर समस्याओ का निराकरण करना चाहिए। इनके लिये कुमार्ग न अपनाकर सन्मार्ग ही अपनाना चाहिए। राष्ट्र को महान् बनाना चाहिए।

धर्म कोई जातिगत या व्यक्तिगत नही है। धर्म प्राणी मात्र के लिए है। कर्त्तव्यपालन करना प्रमुख धर्म है। जब एक पेड एकेन्द्रिय जीव होते हुए, हमे फल, फूल, सुगन्ध आदि निर्लोभ भाव से देता है तो हम मानव, पचेन्द्रिय, ज्ञानी, शिक्षित है और हमारी जिम्मेदारिया कितनी है ? सोचिये।

आप अपना कर्त्तव्यपालन कर अपने राज्य व राष्ट्र को महान् बनाने मे योगदान दे, आपकी बुद्धि भगवान् के प्रति, राष्ट्र के प्रति पवित्र बनी रहे, यही भावना है।

मनुष्य का अभिमान दूर करने के लिए स्वय का कार्य स्वय करना चाहिए। परावलम्बन दु ख का कारण है। आप दूसरो को हेय, छोटा समझकर उससे क्यो अपना कार्य करवाते है। धर्म कहता है कि स्वावलम्बी बनो। जो सादा जीवन चाहेगा वह स्वावलम्बी होगा। विचारो की पवित्रता के साथ-साथ सादगीपूर्ण जीवन आवश्यक है, सादगी के साथ आचरण की पवित्रता आवश्यक है। विलासिता का कोई अन्त नही, मानव इस विलासिता के कारण ही दु खी है।

१९७९ इन्दौर (म० प्र०)

समयसार व रयणसार के लघु संस्करणो का प्रकाशन। 'छह ढाला' का पाठालोचन। 'सद्गुरुवाणी' (आ० श्री शान्ति सागरजी महाराज द्वारा १८ सितम्बर, १९५५ को दिया गया अतिम प्रवचन) तथा 'गुरुवाणी'

(पूज्य मुनिश्री के इन्दौर वर्षायोग में दशलक्षण धर्म पर दिए गए प्रवचनों का संकलन) का प्रकाशन। १९८१ में होने वाले भगवान् बाहुबली सहस्राब्दि महामस्तकाभिषेक के कार्यक्रमों को अंतिम रूप देने हेतु अनेक अखिल भारतीय बैठको का सयोजन, इन्दौर की जनता द्वारा ७ नवम्बर को 'दिव्यावदान आलेख' समर्पण। पत्रकारो, छात्रो, वकीलो, बालकों, श्रमिको, कैदियों आदि को उद्‌बोधन-सम्बोधन।

चातुर्मास समाप्ति पर आचार्यरत्न श्री देशभूषण जी महाराज की अनुज्ञा से मुनिश्री को 'सिद्धान्तचक्रवर्ती' उपाधि। भावविह्वल वातावरण मे दक्षिण भारत के लिए मंगल विहार।

दक्षिण भारत की ओर पदयात्रा करते हुए, बम्बई मे धर्मानुरागी जनता द्वारा (१९८० को) अभिनन्दन। मार्ग मे कोल्हापुर मे (अप्रैल, १९८०) 'प्रगति आणि जिनविजय' पत्रिका अमृत महोत्सव का आयोजन, 'धर्म भारती' सस्था का उद्‌घाटन एवं सांस्कृतिक भवन के निर्माण की प्रेरणा। कोल्हापुर मे कोल्हापुर विश्वविद्यालय मे आयोजित शिवाजी जयन्ती पर ओजस्वी व प्रभावोत्पादक प्रवचन। बेलगाम के (१७-५-८०) दिगम्बर जैन समाज के निमत्रण पर सम्पन्न दिगम्बर जैन महासमिति नैमित्तिक अधिवेशन मे मगल-उद्‌बोधन।

जब भगवान् की भक्ति मे, उनके गुणो के चिन्तन मे स्वय लीन होगे तभी पाप नष्ट होगे। जब भक्ति से चित्त की शुद्धि होती है तभी उससे कर्म नष्ट होते हैं। ससार समुद्र से पार होने के लिए, दु ख से पार होने के लिए, शांति प्राप्त करने के लिए साधनो को भी त्यागना होगा। साधन छोडे बिना इष्ट स्थान पर नहीं पहुच सकते। आत्मानुभव के बाद शास्त्रो की, मनन की, चिन्तन की कोई आवश्यकता नही है। ज्ञान सबके पास है, पर धर्मध्यान का एक अश भी आत्मसात् कर ले, पचा ले, तो सब पापकर्म नष्ट कर सकते है।

आप सबकी बुद्धि आत्मकल्याण के साथ पर-सेवा, परोपकार मे भी बनी रहे। निष्काम-भाव से, बिना किसी फल प्राप्ति की आकाक्षा के सेवा करने की भावना व प्रयत्न करना चाहिए। इन्ही प्रयत्नो से देश, समाज व सस्कृति आदर्श बन सकती है और यही आदर्श हमारा प्राचीन आदर्श होने के कारण कलियुग के अतिम क्षण तक भारत की अहिसा सस्कृति को अक्षुण्ण रखेगा। अहिसा सस्कृति के अनुरूप यह फले-फूले और समस्त प्रजा शान्ति से जीवे, यही भावना है।

श्रमण परम्परा की दक्षिण दिग्विजय

१९८०-८१ एलाचार्य विद्यानन्द जी के सानिध्य मे जो भी धार्मिक कार्यक्रम हुए उन कार्यक्रमो के साथ उन्होने कुछ समाज कल्याण के कार्यक्रमो की भी परम्पराये स्थापित की हैं, उससे सारे देश मे एक जागृति पैदा हुई है। जिस वर्ष बाहुबली भगवान् का महामस्तकाभिषेक हुआ, महाराजश्री के सान्निध्य मे जनमंगल कलश की एक बृहद् योजना तैयार की गई। स्वर्गीय श्रीमती इंदिरा गांधी के कर कमलों द्वारा जन मगल कलश प्रवर्तन हुआ। जन मंगल कलश देश के एक-एक कोने से गुजरता हुआ, गाव-गाव से होता हुआ देश के दूसरे कोने मे बाहुबली के चरणो मे २० जुलाई को पहुचा।

जनमगल कलश के बाहुबली पहुचने पर मुनिश्री विद्यानन्दजी ने देखा कि वहा पर हजारो गरीब लोग बसते है, भगवान् बाहुबली की जहा प्रतिमा स्थापित है तो मुनिराजश्री का आदेश हुआ कि इस शुभ अवसर पर हम इन गरीब बन्धुओ को कुछ रोजगार देने की योजनाए बनाए। वहा के लोगो को हजारो नारियल के वृक्ष प्रदान किए ओर वे हर वर्ष वहा उनसे खेती करके अपनी जीविका अर्जन करने लगे है। महिलाओ को सिलाई मशीने भेट की गईं, वे भी उनसे अपनी रोजी कमा रही है। वहा पर पूज्य मुनिश्री के आशीर्वाद से औषधालय, चिकित्सालय एव अनेक शिक्षा केन्द्र स्थापित किए गए है। पर्यटको के लिए विश्राम गृहो का निर्माण हुआ है। जहा-जहा मुनिश्री का प्रवेश हुआ, वहा-वहा पर धार्मिक कार्यक्रमो के साथ-साथ सामाजिक कार्यक्रमो की जो नई विचारधारा दी है, वह सचमुच ही देश मे एक जागृति ला सकती है।

महाकलश का भारतव्यापी देशाटन, विभिन्न राज्यो के लगभग २०० नगरो की १८००० किलोमीटर की विराट् मगल यात्रा, विभिन्न राज्यो की राजधानियो मे राज्यपालो, मुख्यमत्रियो एव मत्रियो आदि के मध्य जनसमुदाय द्वारा हार्दिक अभिनन्दन, पवनार आश्रम मे सन्त बिनोवा भावे एव आष्टा (मध्यप्रदेश) मे शकराचार्य द्वारा महाकलश को शुभ कामनाये अर्पित। बेलगाम मे कर्नाटक के मुख्यमत्री द्वारा महाकलश का भव्य स्वागत। देश भर मे स्थान-स्थान पर सर्वत्र महाकलश की भव्य शोभा यात्राये।

मै विश्वनाथ भगवान् गोमटेश के जिनका सहस्राब्दि समारोह होने जा रहा है, चरण सान्निध्य मे अपने चातुर्मास की स्थापना करने जा रहा हू। कर्नाटक प्रदेश के वासियो का बहुत समय से आग्रह था। मैने कभी सोचा भी न था कि मै लगभग २५०० मील की पदयात्रा करते हुए एक वर्ष और आठ माह की अवधि मे यहा भगवान् गोमटेश के सान्निध्य मे पहुच जाऊगा।

यह हमारा परम सौभाग्य है कि हम अपने जीवन काल मे महामस्तकाभिषेक जैसे महोत्सव देखने का सुयोग प्राप्त हो रहा है। महामस्तकाभिषेक के कार्यक्रम का शुभारम्भ हो चुका है। इस महोत्सव मे कर्नाटक सरकार भी बहुत उत्साहित है। इस महोत्सव मे भाग लेने हेतु देश के कोने कोने से लाखो यात्री आयेगे, विदेशो से भी अनेको यात्रियो के आने की अग्रिम सूचना प्राप्त हो चुकी है।

गगवशीय नरेशो के सुप्रसिद्ध सेनापति चामुण्डराय ने इस मूर्ति का निर्माण करवाया है, इसके शिल्पकार थे 'अरिष्टनेमी'। उन्होने बडे मनोयोग से इस मूर्ति का निर्माण किया है। कलाकार अपने कार्य मे किसी भी प्रकार का व्यवधान, टीका-टिप्पणी सहन नही कर पाता। मूर्ति के निर्माण के समय सेनापति चामुण्डराय कलाकार की कला देखने लगते, कभी कहते कि जरा इस मूर्ति का पाव इस तरह तराशो और शिल्पी अरिष्टनेमी अपनी छैनी हथौडी लेकर रवाना हो जाते। चामुण्डराय पुन उन्हे मनुहार करके लाते। इस प्रकार कई बार हुआ। मूर्ति के निर्माण मे दस वर्ष का समय लगा। आज हम सब उस मूर्ति के सान्निध्य मे बैठे है। इस वर्षायोग के समय मे आप लोग कोई सकल्प कीजिए। जो अपने जीवन मे कोई महान् उद्देश्य बनाकर सकल्प नही करता उसका जीवन

मगलमय नही होता, उसका जीवन ऊचा नही उठ सकता । मन मे सकल्प कीजिए कि मै अपने जीवन मे अमुक प्रतिज्ञा निभाऊ, मै अपने जीवन को स्वच्छ व निर्मल बनाऊ, मै अपना खान-पान शुद्ध रखू । जीवन को ऊचा उठाने के लिए, उन्नत बनाने के लिए परिश्रम की, साधना की आवश्यकता ह, पर पतन की ओर जाने के लिये न परिश्रम की आवश्यकता ह, न साधना की ।

हमारे देश मे चामुण्डराय जैसे महान् व्यक्तित्व भी हुए जिन्होने स्वर्णाक्षरो मे लिखने योग्य कार्य किये । आज श्रवणबेल्गोल मे जो स्वर्ण अवसर आया है, ऐसे अवसर पर हमारी जिम्मेदारी है, उत्तरदायित्व है कि हम इस अवसर का लाभ उठाये और ऐसा महोत्सव मनाये जो स्वय स्वर्णाक्षरो मे लिखने योग्य हो । इस अवसर पर जीवन को भी स्वच्छ व निर्मल बनाये । जीवन मे ऐसे अवसर बार-बार नही आते ।

आप लोग सब मिलकर एव सगठन से, एक स्तर से इस महोत्सव की सफलता के लिए प्रयत्न कीजिए । जीवन के अनेको वर्ष गुजारने है, सौ वर्ष जीना है केवल यही उद्देश्य नही होना चाहिए, ऐसे जीवन का तो कोई प्रयोग नही है । आयु थोडी ही हो, जीवन थोडा ही हो पर ऐसा हो कि दुनिया हमारे समक्ष मस्तक झुकाये, आदर से नाम ले । हम भी राम आदि का आदर के साथ नाम लेते है उनके जीवन-आदर्शों के कारण । वे एक परम्परा, एक अच्छा इतिहास छोडकर गये है । इस कारण महावीर का नाम लेते है कि उन्होने दुनिया मे परिवर्तन लाने हेतु तलवार की सहायता नही ली, अपितु स्नेह से, करुणा से, हृदय परिवर्तन कर, सबको अपना बनाया, सबको अपनाया । इसीलिये आज भी देश के कोने कोने मे अत्यन्त आदर के साथ उनका नाम लिया जाता है ।

त्याग से ही इसान महान् बनता है । भगवान् गोमटेश ने त्याग मार्ग अपनाया और सर्वस्व पा लिया । उन्होने चक्रवर्ती भरत के राज्य को जीता और जीतने के बाद उनको उनका राज्य पुन लौटा दिया । उनके दृष्टिकोण मे कितनी उदारता थी । उन्होने ही जीतकर लौटाने की इस भारतीय परम्परा की नीव रखी थी । राम ने भी लका को जीता और पुन लौटा दिया । आधुनिक काल म भी दखत ह कि भारत क भूतपूर्व प्रधानमत्री लालबहादुर शास्त्री ने पाकिस्तान से युद्ध जीता और पुन उनकी जमीन लौटा दी और श्रीमती इदिरा गाधी न भी बगलादेश का युद्ध जीता तथा उनकी जमीन लौटा दी । जीतना और लौटा देना हमारी परम्परा रही है । हम दुनिया को प्रेम स जीत सकत ह, शस्त्र से कभी नही जीत सकते । शस्त्र किसी को हरा सकता है, पर उसे जीत नही सकता ।

भगवान् आदिनाथ के पुत्र गोमटेश्वर बाहुबली प्रथम कामदेव थे । वे अद्वितीय शौर्य, बल और पौरुष के धनी थे । भगवान् आदिनाथ अपने सभी पुत्रो को अपना-अपना राज्य सभला कर साधना व तप मे लीन हुए और कैवल्य निधि को प्राप्त कर चुके थे । तभी बडे भ्राता भरत को चक्ररत्न की प्राप्ति हो चुकी थी और वे छह खण्ड विजय करने हेतु निकल पडे थे । बाहुबली ने पूर्ण विनम्रता, आदर व सम्मान सहित भगवान् आदिनाथ से प्राप्त अपने राज्य की रक्षार्थ, भरत का आधिपत्य स्वीकार नही किया । परिणाम स्वरूप हान वाल युद्ध की विभीषिका तो सुयोग्य मत्रियो की मत्रणा के फलस्वरूप टल गई, पर सुनीतिपूर्वक हुए दृष्टि, जल और मल्ल युद्ध मे भरत बाहुबली पर विजय न पा सके, परास्त हो गये । पराजय की क्षुब्धता असह्य और विवेकहीन हो गई और भरत ने चक्र का प्रहार कर दिया – परन्तु चक्र बाहुबली की प्रदक्षिणा देकर वापस लौट आया । इस घटना स बाहुबली ससार से विरक्त हो गये, राज्य छोडकर दिगम्बर मुनि हो गये और घोर तपस्या मे लीन हो गये । पर वे भरत की भूमि पर खडे है, मान की इन तनिक सी शल्य क कारण ज्ञान पर स आवरण हट नही सका । भरत को भगवान् आदिनाथ से जब इस तथ्य का पता लगा तो व बाहुबली की वन्दना करन आये और निवदन किया कि किस का राज्य ? किस की भूमि ? स्वात्म से उसका कैसा सरोकार ? बाहुबली को जैसे ही बोध हुआ, मान कषाय के बधन टूट गये और कैवल्य बोध से मुक्तिश्री का वरण किया । उन्ही बाहुबली भगवान् की प्रतिमा विध्यगिरि पर आज ससार को उनकी जीवन-गाथा का स्मरण करा रही है । वहा के चन्द्रगिरि पर्वत पर भद्रबाहु मुनिराज की तपोभूमि रही है – कितनी शात, कितनी मनोरम । वहा का वातावरण साधना से सिक्त परमाणुओ का पुज ह, केन्द्र ह ।

काका कालेलकर ने १९४५ मे यहा की यात्रा की और उसके पश्चात् भगवान् गोमटेश पर एक पुस्तक लिखी । उन्होने उसमे लिखा है कि मै इस मूर्ति के नजदीक गया, मूर्ति को देखा । देश-देशान्तरो मे अनेको मूर्तिया देखी,

किसी भी मूर्ति के आगे मस्तक नही झुकाया पर यह मूर्ति ऐसी है जिसके आगे मेरा मस्तक स्वमेव ही झुक गया, इस मूर्ति ने मेरा मस्तक झुका लिया।

महानुभावो ! सत्य है कि गर्दन पर तलवार रखकर किसी को जीतना, जीतना नही हे। तलवार से ह्रदय परिवर्तन नही किया जा सकता, स्नेह एव करुणा से ही ह्रदय परिवर्तन किया जा सकता है, किसी को झुकाया जा सकता है। हमे इस महामस्तकाभिषेक महोत्सव को अत्यन्त स्नेह के साथ संगठित होकर मनाना चाहिए। कर्नाटक सरकार व भारत सरकार दोनो ही बहुत सहयोग कर रही है। कर्नाटक सरकार के मुख्यमत्री ने स्पष्ट कहा है कि प्रत्येक यात्री हमारा, हमारी सरकार का अतिथि है। २५००वे निर्वाणोत्सव के समय भी सब का सहयोग रहा। यदि हम सब उदार मन से सहयोग लेगे तो हमारा यह महोत्सव भी अत्यन्त सफल होगा।

हम देश के कोने कोने मे भगवान् गोमटेश के विचार, उनके चरण-चिह्न अकित करने मे सफल होगे तभी हमारा यह महोत्सव सफल होगा।

११ जनवरी से १३ जनवरी तक अखिल भारतीय जैन विद्वानो की सगोष्ठी का आयोजन, जिसमे भगवान् बाहुबली, श्रवण बेलगोला आदि से सम्बद्ध ऐतिहासिक व सांस्कृतिक इतिहास पर विचार-विमर्श। ९ फरवरी से १५ मार्च तक महामस्तकाभिषेक समारोह की आयोजना। समारोह का मुख्यमत्री द्वारा उद्घाटन। उत्तरापथ की ५००० से अधिक किलोमीटर की यात्रा करते हुए १९ फरवरी को जनमगल महाकलश का श्रवणबेलगोला मे प्रवेश। २२ फरवरी को प्रधानमत्री श्रीमती इन्दिरा गाधी, अनेक केन्द्रीय मंत्रियो, राज्य के मुख्यमत्री एव अनेक विदेशी नागरिको की उपस्थिति मे आचार्यरत्न श्रीदेशभूषणजी महाराज, आचार्यश्री विमल सागरजी महाराज एव आचार्य सुशील कुमारजी महाराज, विशाल सघो के सम्मेलन मे भगवान् गोमटेश्वर बाहुबली की विशाल ५७ फीट ऊची मनोरमा प्रतिमा का गरिमामय महामस्तकाभिषेक सम्पन्न। प्रधानमत्री श्रीमती इदिरा गाधी द्वारा हेलीकाप्टर से मूर्ति पर पुष्पवर्षा। आकाशवाणी व दूरदर्शन (हैदराबाद) से समारोह का आंखो देखा हाल प्रसारित। भारत के सचार मत्री द्वारा गोमटेश्वर पर डाक टिकट का विमोचन। भगवान् आदिनाथ के सास्कृतिक अवदान तथा भरत-बाहुबलि कथानक मे निहित अहिसा व क्षमा के सक्रिय रूप का अन्तर्राष्ट्रीय विश्व मनीषियो के समक्ष प्रस्तुतिकरण। जैन सस्कृति व जैन साधना की महत्ता का व्यापक प्रचार-प्रसार।

न भूतो न भविष्यति

९ फरवरी से १५ मार्च तक युगस्रष्टा भगवान् अहिसा, विश्वशांति एव मानवता के जीवन्त प्रतीक, सत्यम् शिवम् सुन्दरम् के साक्षात दिग्दर्शक, पौराणिक आख्यानो और जन मान्यताओ के समन्वय गोमटेश्वर बाहुबली का महामस्तकाभिषेक एव सहस्राब्दि समारोह दस लाख श्रद्धालुजनो के मध्य १००८ मगल कलशों से सानन्द सम्पन्न। पचकल्याणक एव रथयात्रा। २१ फरवरी को प्रधानमत्री श्रीमती इन्दिरा गाधी द्वारा महामस्तकाभिषेक, विशाल जनसभा को उद्बोधन एव महामस्तकाभिषेक का उद्घाटन। आचार्य देशभूषणजी की दीक्षा के ५० वर्ष सम्पन्न। २५ फरवरी को भारतवर्षीय दि० जैन महासभा का अधिवेशन।

१६ जुलाई को विश्वतीर्थ श्रवण बेलगोला मे एलाचार्यजी के सान्निध्य मे विशाल श्रमण सन्त समुदाय का वर्षायोग स्थापना समारोह एव मगल प्रवचन। मुनिदीक्षा समारोह सम्पन्न। अखिल भारतीय दिगम्बर जैन मुनि परिषद् का गठन, १५९ दिगम्बर जैन साधुओ का प्रथम बार सम्मेलन। निर्ग्रन्थ मुनि सम्मेलन और श्रमण परिषद्। आचार्यश्री नेमिचन्द्र सिद्धान्त-चक्रवर्ती को श्रद्धांजलि अर्पित। श्री वीरेन्द्र हेगडे की अध्यक्षता मे सर्वधर्म सम्मेलन सम्पन्न। एलाचार्य श्री विद्यानन्द जी को इन्दौर मे प्रदत्त सिद्धान्त-चक्रवर्ती की उपाधि की उनके गुरु आचार्य देशभूषण के सान्निध्य मे पुष्टि। महिला सम्मेलन। अनेक अखिल भारतीय सेमिनार एव सगोष्ठिया।

गृहस्थ और साधु धर्मरथ को खीचने के लिए दो बैल है। दोनो पूरक है। बिना गृहस्थ के साधु नही रह सकते और बिना साधु के गृहस्थ नही रह सकते। दोनो का परस्पर सम्बन्ध है। जब तक दोनो का सम्बन्ध है, तब तक धर्म है, धर्म की रक्षा है। आचार्य

शांतिसागरजी महाराज कहते थे कि साधु कितना ही बडा हो, आहार लेते समय उसके हाथ नीचे है और गृहस्थ का हाथ ऊपर है, और जब गृहस्थ भोजन दे चुका, तब उसका हाथ जुड गया, साधु का हाथ ऊपर हो गया। कभी इसका हाथ नीचे, कभी उसका हाथ ऊपर, कभी इसका हाथ ऊपर कभी उसका हाथ नीचे – दोनो बधन है। जब तक दोनो का बधन है, तब तक धर्म का रक्षण है। जब दोनो का बधन टूट जाएगा, तब दोनो का धर्म खत्म हो जाएगा। पानी बहता भला, साधु जाता भला, गगा बहती रहती है, गाव-गांव जल मिलता रहता है। हमारे बडे-बडे तपस्वी भारत के कौने-कौने मे घूमते रहे।

१९८१ दूसरा चातुर्मास भी श्रवणबेलगोला मे। धर्मशाला, चिकित्सा भवन, अतिथि भवन आदि का निर्माण तथा यात्रियो के लिए विधि उपयोगी सुविधाओ का विकास, फलस्वरूप समस्त क्षेत्र को सुसस्कृत रूप प्रदान। धर्म प्रभावना की दृष्टि से उल्लेखनीय चातुर्मास।

२० दिसम्बर को तत्कालीन केन्द्रीय गृहमत्री द्वारा मुनिश्री से उत्तर भारत की ओर मगल विहार करन का अनुरोध। श्रवणबेलगोला से धर्मस्थल की ओर विहार। मार्ग मे मूडबिद्री मे श्रीमती रमा जैन शोध सस्थान की स्थापना। धर्मस्थल (कर्नाटक) मे प्रवचन। २४ जनवरी से ४ फरवरी तक भगवान् बाहुबली की ३९ फीट ऊची ग्रेनाइट पर बनी विशाल शिला प्रतिमा की पच-कल्याणक समारोह के साथ प्रतिष्ठा।

यहा से शांतिगिरि (कोथली – कुप्पनवाडी – आचार्यश्री देशभूषणजी महाराज की पावन जन्म-भूमि) मे चातुर्मास हेतु विहार।

मनुष्य के जीवन मे सब वैभव हो पर धर्म व शाति न हो तो वह जीवन शुष्क है, निष्प्रयोजन ह व पशुवत् ह। कोई भी तत्वचर्चा व धर्मध्यान की विधि बताने मे सहायक हो सकता है, पर एकाग्र स्वय को ही होना होगा। प्रपच के कार्यो के लिए साथी की आवश्यकता है पर धर्मध्यान अकेले, एकान्त मे एकाग्रता से करना होगा। स्वय क कर्म स्वय ही धो सकते है, नष्ट कर सकते है और करने होगे। परमात्मा किसी के कर्म नही धो सकता नष्ट नही कर सकता। परावलम्बन ही दु ख का कारण है।

सौ वरदानो मे प्रथम वरदान स्वतन्त्रता प्राप्त करना है। जैसे सूर्य के पीछे प्रकाश आता है, बादलो क साथ-साथ विद्युत् स्फुरण होता है और जल के साथ-साथ शीतलता चली आती हे वैसे ही स्वाधीनता के साथ सभ्यता, धर्म, सस्कृति, आत्मगौरव, शक्ति और सर्वगुण सम्पन्नता के समूह चले आते ह। शरीर मे जो स्थान प्राणो का है वही ससार मे स्वतत्रता का हे।

१९८२ शान्तिगिरि (कोथली)

वीर-निर्वाण-ग्रन्थ-प्रकाशन-समिति, इन्दौर की ओर से 'जिन पूजा जिन मंदिर लघु कृति का प्रकाशन तथा जिन अभिषेक व जिन पूजा सबधी प्रामाणिक सामग्री की प्रस्तुति। दिल्ली मे वृषभदेव प्राकृत विद्यापीठ-कुन्द-कुन्द भारती के भवन के निर्माण कार्य मे प्रगति।

चातुर्मास मे एक सौ एक प्रवचनो की श्रृखला। अतिम प्रवचन ९ अक्तूबर को 'आध्यात्मिकता आर भौतिकता' पर। प्रवचन की भाषा रविवार को मराठी अन्यथा कन्नड। कभी-कभी हिन्दी मे भी स्पष्टीकरण। क्षेत्रीय यातायात की असुविधा के बावजूद हजारो श्रोताओ की उपस्थिति। प्रवचन के अतिरिक्त समय मे स्वाध्याय व शास्त्र चर्चा का कार्यक्रम।

दक्षिण भारत जेन महिला सम्मेलन व दक्षिण भारत जेन सभा का ६७वा अधिवशन आर शाकाहार प्रदर्शनी आदि अनेक लोक प्रभावक आयोजन।

२० दिसम्बर को उत्तर भारत की जेन समाज के सौ से भी अधिक विशिष्ट व्यक्तियो के शिष्टमण्डल के साथ भारत के तत्कालीन गृहमत्री से उत्तर भारत आर दिल्ली की ओर मगल विहार करने का अनुरोध।

कुम्भोज बाहुबली मे चातुर्मास हेतु विहार। मार्ग मे अनेक स्थानो पर धर्म प्रभावना एव नैतिक जागरण का शखनाद। कोल्हापुर मे दक्षिण भारत जैन सभा की युवा शाखा वीर-सेवा-दल द्वारा आयोजित की गई पद यात्रा कार्यक्रम के अवसर पर व्यसन-मुक्ति प्रवचन।

१९८३ कुम्भोज बाहुबली (महाराष्ट्र)

२० जुलाइ को अतिशय क्षेत्र कुम्भोज बाहुबली मे प्रवेश तथा २३ जुलाई को चातुर्मास स्थापना। आचार्यश्री समन्तभद्रजी महाराज का दिव्यावदान समारोह सम्पन्न। अनेकान्त शोधपीठ की स्थापना तथा उसकी शोध-योजनाओ के सम्बन्ध मे उपयोगी परामर्श प्रदान। रक्षाबन्धन पर्व पर अहिसा प्रसारक ट्रस्ट, बम्बई के तत्वावधान मे २०० हरिजन महिलाओ को साडिया एव ग्रामीणो को पौधे व नारियल वितरित।

कुम्भोज बाहुबली की पहाडी के शिखर पर क्षेत्रीय स्वामित्व को लेकर श्वेताम्बर समाज से विवाद की स्थिति। हिसक घटनाओ के बाद मन शुद्धि व सामनस्य हेतु मुनिश्री द्वारा अनिश्चित काल के लिए अन्न-जल त्याग की घोषणा। प्रधानमत्री के आश्वासन एव केन्द्रीय गृहमत्री की अपील पर अनशन समाप्त। महाराजश्री के अदम्य आत्मबल व अहिसापूर्ण जन-चेतना के माध्यम से साम्प्रदायिक विवाद के समाधान की दिशा मे प्रगति।

८ मार्च से १५ मार्च ८४ तक आयोजित पच कल्याणक आदि धार्मिक आयोजनो के साथ बाहुबली पहाडी पर तीर्थकरो व बाहुबली भगवान् की प्रतिमाओ की प्रतिष्ठापना का महोत्सव आयोजित। १३ मार्च को पहाडी पर विराजित ८२६ वर्ष प्राचीन बाहुबली की मनोज्ञ प्रतिमा का १००८ कलशो से मस्तकाभिषेक तथा जैन शिल्पकला समारोह आदि भव्य कार्यक्रम सम्पन्न।

यहा से विहार कर पूना, पढरपुर आदि होते हुए बम्बई की ओर प्रस्थान। शोलापुर मे (मई ८४) दिगम्बर जैन बोर्डिंग के ७४ वे अमृत महोत्सव का आयोजन। शोलापुर स्थित श्राविका सस्था नगर मे (२-७ मई को) भगवान् महावीर रिसर्च सेन्टर एव जैनालाजिकल सेमिनार का आयोजन तथा अनेक विद्वानो का सम्मान।

१९८४ बम्बई

११ जुलाई को महानगरी बम्बई मे मगल प्रवेश। १५ जुलाई को पोदनपुर क्षेत्र स्थित आचार्य शांतिसागरजी महाराज स्मारक भवन मे चातुर्मास स्थापना। सदाचार, एकता, दया, समता, राष्ट्र व समाज के प्रति कर्त्तव्य आदि विषयो पर अमृतमय प्रवचनो से उल्लेखनीय धर्म जागृति। आचार्य शांतिसागरजी की ३९वी पुण्यतिथि आयोजित। 'भक्तामर स्तोत्र केसेट्स का विमोचन' समारोह आयोजित। 'परम पुरुष सिद्धप्पा' कृति का प्रकाशन व विमोचन समारोह।

११ नवम्बर को चातुर्मास समाप्त कर इन्दौर हेतु मगल विहार। बोरीवली मे विनोबा भावे की स्मृति मे 'सर्वोदय साधना' पत्रिका के रजत महोत्सव अक का विमोचन। रावलगाव (नासिक) मे जैन बोधक (मराठी पत्र) का शताब्दी समारोह (२३-२४ फरवरी), पत्रकार सगोष्ठी आयोजित।

१९८५ इन्दौर (मध्यप्रदेश)

१४ अप्रैल को इन्दौर मे मगल प्रवेश तथा १२ मई को गोम्मटगिरि मे चातुर्मास स्थापना। गोम्मटगिरि के निर्माण कार्य तथा भावी बाहुबली मूर्ति-प्रतिष्ठापन समारोह के आयोजन के सम्बन्ध मे कुशल मार्ग निर्देशन।

मुनिश्री की षष्ठिपूर्ति के उपलक्ष्य मे २०-४-८५ से २१-४-८७ तक देशव्यापी शाकाहार-सदाचार-श्रावकाचार वर्ष मनाने हेतु चिन्तको व मनीषियो द्वारा बैठके आयोजित। देश के विभिन्न स्थानो मे शाकाहार

प्रदर्शनियो का आयोजन, शाकाहार के महत्व एव आहार शुद्धि के नैतिक मूल्यो की पुनर्स्थापना का व्यापक अभियान। नैतिक मूल्यो के प्रचार-प्रसार हेतु विविध पत्रिकाओ द्वारा विशेषाको, लेखादि का प्रकाशन। एलाचार्य द्वारा राष्ट्र के प्रति स्वस्तिवचन।

वीर निर्वाण ग्रन्थ प्रकाशन समिति, इन्दौर द्वारा 'विद्यानन्द तिथि दर्पण' तथा 'श्रावकाचार की सहज कथाए' प्रकाशित। मुनिश्री की कृतियो – अहिसा, विश्वधर्म तथा सप्त व्यसन – के तीसरे सस्करणो का प्रकाशन। अन्य प्रकाशन विद्यानन्द वचनामृत, विद्यानन्द नीति दर्शन एव सत्य की खोज।

१९ जनवरी को १८१ व्यक्तियो के एक शिष्टमण्डल द्वारा मुनिश्री से दिल्ली की ओर विहार करने एव वहा चातुर्मास करने की प्रार्थना। १ मार्च को तथा १४ मार्च को दिल्ली नगर निगम के महापौर ने मुनिश्री से दिल्ली मे चातुर्मास करने का विनम्र अनुरोध व्यक्त किया। मुनिश्री द्वारा गोम्मटगिरि मे बाहुबली मूर्ति प्रतिष्ठा समारोह के अनन्तर दिल्ली की ओर प्रस्थान करने की स्वीकृति।

मार्च ८६ मे (७-१४ मार्च तक) १९ फीट ऊचे गोमटेश बाहुबली भगवान् का महामस्तकाभिषेक तथा २४ तीर्थकरो की मूर्ति की प्रतिष्ठा तथा पचकल्याणक समारोह। देश के हजारो तीर्थ यात्रियो द्वारा श्रद्धासुमन अर्पित।

महाराजश्री का १६ मार्च ८६ को इन्दौर से दिल्ली के लिए मगल विहार।

२३ अप्रैल-गोम्मटगिरि मे त्यागी उपासना केन्द्र का उद्घाटन। श्रावकाचार वर्ष को अधिक सार्थकता प्रदान करने एव राष्ट्रीय एकता, अखण्डता व सद्भावना के प्रचार-प्रसार हेतु भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थ क्षेत्र कमेटी द्वारा अपनी रजतजयन्ती के अवसर पर २५ मई ८६ को राष्ट्रपति द्वारा उपस्थिति, तीर्थ वन्दना रथ का प्रवर्तन।

प्रश्नों के माध्यम से शंका समाधान :

१ जनवरी, १९८७, नई दिल्ली। प्रश्नोत्तर कार्यक्रम अपने ढग का एक विशेष कार्यक्रम रहा, जिसका आयोजन वर्ष के पहले दिन १ जनवरी को किया गया। इस कार्यक्रम के न कोई पोस्टर छपे न कार्ड, केवल समाचार पत्रो के माध्यम से प्रश्न-कर्त्ताओ और श्रोताओ को आमन्त्रित किया गया और जो भी प्रश्न आए उनका उसी समय पूज्य एलाचार्य महाराज ने समाधान किया। निरन्तर दो घण्टे तक चलने वाले इस कार्यक्रम को उपस्थित सभी श्रोताओ और प्रश्नकर्त्ताओ ने सराहा।

एक प्रश्न के उत्तर मे एलाचार्य महाराज ने लोगो का आह्वान किया है कि वे आतकवाद व अलगाववादी शक्तियो का सामना समझबूझ एव सयम से करे। उन्होने कहा कि किसी भी परिस्थिति मे हिसा का प्रतिकार हिसा द्वारा नही किया जाना चाहिए।

एक प्रश्न के उत्तर मे एलाचार्यजी ने कहा कि कुछेक व्यक्तियो की भ्रमित बुद्धि और अपराध के लिये किसी विशेष वर्ग की भर्त्सना किये जाने की प्रवृत्ति गलत है।

प्रश्न का उत्तर देते हुए आध्यात्मिक अग्रणी ने स्पष्ट किया कि समस्त धर्म नैतिक मूल्यो पर आधारित है, कोई भी धर्म घृणा नही सिखाता। अत किसी धर्म विशेष को निन्दनीय करार देना सरासर अन्यायपूर्ण होगा।

प्रश्नकर्त्ताओ मे राजधानी के वकील, डाक्टर, युवक तथा बडी सख्या मे सम्भ्रात लोग उपस्थित थे। कार्यक्रम का आयोजन पी एस जैन फाउन्डेशन, दिल्ली ने किया।

दु:ख का मूल कारण अज्ञानता है :

बडौत। रोटरी क्लब, बडौत द्वारा आयोजित 'राष्ट्रीय एकता और अखण्डता के लिये धार्मिक एव नैतिक मूल्यो का योगदान' पर आयोजित एक विचार-गोष्ठी मे राष्ट्रसत एलाचार्य मुनिश्री विद्यानन्दजी ने कहा–संसार परिवर्तनशील है और परिवर्तन

इसका धर्म है। परिवर्तन रोका नही जा सकता क्योकि हर क्षण परिवर्तनशील है। विश्व की ऐसी कोई चीज नही है जो बदलती न हो। राष्ट्रीयता के लिये हमे जीवन मे सयम और अपरिग्रहवाद को अपनाना होगा। हमे स्वतन्त्रता के महत्व को आराम से समझना होगा।

आज जितनी समस्याए है उनमें से अधिकतर मनुष्य ने स्वयं खड़ी की हैं। धर्म को लेकर यदि कोई लडे तो इसमे धर्म का क्या दोष है। अग्नि का उपयोग भोजन बनाने के लिये करते हैं। यदि कोई अपने ही घर मे आग लगा ले तो इसमे अग्नि का क्या दोष है। यदि हम शान्ति चाहते है तो हमे अज्ञानता को मिटाना होगा। दु ख का मूल कारण अज्ञानता है।

एलाचार्य मुनिश्री विद्यानन्दजी ने 'श्री वृषभदेव जिन बिम्ब पचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव एव सहस्राब्दि समारोह' के अवसर पर बडौत मे विभिन्न सभाओ को सम्बोधित करते हुए कहा

भगवान् महावीर के 'जियो और जीने दो' के सदेश को हमे घर घर फैलाना होगा। समस्त संसार के प्राणियो का कोई धर्म है तो वह अहिसा धर्म है। हिसा को रोकने के लिए अहिसा को अपनाना होगा।

श्रावक सगम के अवसर पर आयोजित एक विशाल सभा को सम्बोधित करते हुए मुनिश्री ने कहा – जनतन्त्र की रक्षा की जितनी जिम्मेदारी जैन समाज की है उतनी और किसी की नही क्योकि जैन धर्म में अहिंसा का पाठ पढाया जाता है।

मुनिश्री ने एक स्थान पर कहा – चन्द्रमा पर सूर्य की अपेक्षा अधिक बार ग्रहण लगता है। यह इस बात का प्रतीक है कि शीतलता (शान्ति) को कुछ लोग अपवित्र करने से बाज नही आते। वे हर समय इस कोशिश मे रहते है कि शान्ति और एकता पर स्वार्थ और राजनीति का ग्रहण लगाया जाए।

परिक्रमा :

परम श्रद्धेय गुरुवर्य पूज्य आचार्य श्री विद्यानन्दजी मुनिराज का १९८७ के वर्षायोग के लिए बडौत (उत्तर प्रदेश) से दिल्ली की ओर मगल विहार हुआ। आचार्य श्री ने आस पास के क्षेत्रो और दिल्ली के उप नगरो मे मगल विहार करते हुए यहा लाखो श्रद्धालुओ को अपनी अमृतवाणी से सम्बोधित किया। उन्ही उपनगरो मे हुए मगल प्रवचनो का सक्षिप्त सार

हम दुखी क्यों हैं :

सरूरपुर। दु ख का कारण कर्म बन्धन है। ससार में सबसे दुखी तो निगोदी जीव है और सबसे सुखी केवल परमात्मा है। सुख-दु ख वस्तु मे नही मन मे है। एक ही वस्तु को देखकर एक व्यक्ति सुख का अनुभव करता है और दूसरा दु ख का, तो यह सुख-दु ख उस वस्तु मे नहीं है, वह तो हमारे अनुभव की वजह से होता है। हम स्वय ही दुखो को निमन्त्रण देते है। पर पदार्थों के मोह के कारण यह जीव स्वय दुखी होता रहता है।

कोई मनुष्य सदैव सुखी नही रहता और उसी प्रकार कोई हमेशा दुखी नही रहता। सुख-दु ख दोनो ही जीवन के साथ लगे है। यह विषय कषाय ही सारे दुखो की जड है। ये ससार की सुन्दर सुन्दर चीजे ही घातक है और इनमे जीव की आसक्ति ही सारे मानसिक दुखो का कारण है।

धर्म स्वयंसिद्ध है :

बागपत। धर्म एकमात्र मन्दिर मे, मूर्ति मे, माला फेरने मे या पुस्तको मे फसा हुआ भटकता रहता है। धर्म तो एक क्षण का है। जिस क्षण कर्म नष्ट हो जाये, वही क्षण धर्म है।

वस्तु का यथार्थ स्वरूप ही धर्म है। धर्म प्राप्त करने के लिए हमे निरन्तर पुरुषार्थ करना होगा। हमे कोई भी ऐसा कार्य अपने जीवन मे नही करना चाहिये जिससे किसी प्राणी या जीव का तिरस्कार और उसकी हिसा होती हो। हम आत्मा से क्रोध, मान, माया और लोभ इन चार शूद्रो को हटाकर वीतराग वाणी पर श्रद्धा और आचरण करके आत्मा मे ज्ञान ज्योति प्रज्ज्वलित कर सकते है। हमे अपना आचरण निर्मल और खान पान शुद्ध रखना चाहिये।

देश समाज में सुख शान्ति के लिए पुरुषार्थ करें :

खेकडा। मानव सस्कृति के आदि सृष्टा भगवान् आदिनाथ के अनुसार ससार मे धर्म बिना जीवन निष्प्राण है। धर्म के लिए पुरुषार्थ करना होगा और पुरुषार्थ से अपने मन को पवित्र बनाए रखना होगा। बिना धर्म के प्राप्त किया गया धन व सम्पदा बेकार है। धर्म से अपना जीवन मागलिक बनाए और देश और समाज मे सुख शान्ति के लिए हम जहा भी है पुरुषार्थ करे। धर्म केवल मन्दिर-गिरजा-मस्जिद और गुरुद्वारो मे नही है। धर्म पालन हम दुकान, कार्यालय और जीवन की प्रत्येक क्रिया मे कर सकते है। सीमा पर खडी सुरक्षा सेना भी धर्म का पालन कर सकती है और करती है। देश की रक्षा करना भी धर्म है। यदि देश सुरक्षित नही होगा तो न धर्म सुरक्षित रह सकता है और न हमारी सस्कृति और न हम।

बिना करुणा के सम्यक् ज्ञान की प्राप्ति नहीं हो सकती :

बडा गाँव। धर्म, जाति प्रान्त आदि मे जन्म लेने से नही, उसे जीवन मे उतार लेने से आता है। धर्म की प्रभावना अपने घर से ही प्रारम्भ होती है। बिना करुणा के सम्यक् ज्ञान की प्राप्ति नही हो सकती। हमे किसी भी चीज को एकान्त से नही अनेकान्त से देखना चाहिए। विचार मे अनेकान्त, आचार मे अहिसा, वाणी मे स्याद्वाद यही समाज के अन्दर सर्वोदयी तीर्थ है। यही मानव के अभ्युदय के कारण है। हमे केवल स्वय ही नही जीना है अपितु विशाल विश्व के मानव मात्र के कल्याण के लिए कार्य करना है। इस लक्ष्य के साथ कार्य करेगे तभी भारत अपने पुराने आदर्शों को पुनर्स्थापित कर सकेगा।

गुरुकुल और शिक्षा पद्धति ·

मन्डोला। बच्चो की वास्तविक धार्मिक शिक्षा माता-पिता के सस्कार से होती है। घर के वातावरण का प्रभाव कोमल मति बालको पर पडता है। यदि मा-बाप धार्मिक विचारो के होगे तो बच्चो पर भी धार्मिक विचारो का असर पडे बिना नही रहेगा। जब बच्चो को शुरू से धार्मिक शिक्षा दी जायेगी तभी वे आगे जाकर धर्मात्मा बन सकेगे और अपना कल्याण व देश का भी कल्याण करेगे। धार्मिक शिक्षा, रहन-सहन, खान-पान की शुद्धता होगी तभी आदर्श नागरिक बन सकेगे। यदि बच्चे मे आरम्भ से कुसस्कार पड गए तो वह आदर्श नागरिक नही बन सकता।

प्राचीन काल मे गुरुकुल मे शिक्षा दी जाती थी। बच्चो को नीरस भोजन दिया जाता था। वह बहुत कठोर जीवन था। पर समय बदलता गया और यह पद्धति समाप्त हो गयी। आज यदि हम अपने बच्चो को त्याग और बलिदान की शिक्षा नही देगे तो वे आगे जाकर क्या बनेगे। हमारी आत्मा तो कर्मों के बन्धन मे फसती जा रही है उससे कैसे मुक्त होगे।

मन की निर्मलता से ही धर्म का पालन :

गुलाब वाटिका। निर्मल मन से ही धर्म पालन हो सकता है। मन छह प्रकार के बताये है। काला मन उन लोगो का होता है जो सदैव क्रोधी स्वभाव वाले, ढोग, प्रपच और कुदृष्टि रखते है। नीला मन रखने वाले मन्दबुद्धि के होते है, कायर होते है और लोभी होते है। जिनके मन का रग भूरा होता है वे हर समय शोकातुर रहते है। कितनी भी सम्पदा उनके पास हो जाये वे सदैव रोते ही रहते है। छोटी छोटी बातो पर लडवा देना उनका ध्येय होता है। चौथे पीले रग वाले होते है। ये व्यक्ति जो भी करते है सोच विचार करके करते है, उनके मन मे करुणा भाव होता। हित मित वचन बोलते हैं और दूसरो का अहित नही करते। पाचवा

मन लाल रग का होता है। ऐसे व्यक्तियो का मन तो बिल्कुल शुद्ध होता है, अतरग और बहिरग दोनो ही शुद्ध भाव होते है। इनका अधिकांश समय धर्मध्यान और सत्सग मे ही व्यतीत होता है और आखिरी और छठा मन सफेद रंग का होता है। यह सबसे उच्च श्रेष्ठ है। इनके मन मे किसी प्रकार का राग-द्वेष नहीं होता। स्फटिक मणि के समान इनका मन निर्मल होता है।

जीवन की कला आत्मनिष्ठा में निहित है :

यमुना विहार। ससार मे मनुष्य का जीवन श्रेष्ठ कहा जाता है। मनुष्य ने अपने लिये बहुत सुख साधनो का निर्माण किया और वह आज विज्ञान युग मे पहुच गया तथा अपने को और अधिक सुखी और समृद्ध बनाने की कोशिश कर रहा है। मनुष्य सुखी व समृद्ध तभी हो सकता है जब उसके साथ सत्य निष्ठा, आत्म निष्ठा, ब्रह्म निष्ठा और धर्म निष्ठा हो। जहा सत्यनिष्ठता है वही धर्म है। जब तक हम पर-पदार्थों मे रम रहे है तो दुनिया को कैसे पहचान सकते है। जब हम अपने को जानेगे तभी दुनिया को भी जान सकते है। भव भवान्तर के साथ यदि कोई चीज जाने वाली है तो वह ईश्वर निष्ठा अर्थात् आत्मनिष्ठा है। यदि कोई ईश्वर निष्ठा को छोडता है तो उसका जीवन व्यर्थ है।

विवेकी पुरुष श्रेष्ठ है

कबूल नगर। विवेकी पुरुष श्रेष्ठ है। विवेकी के मन मे धर्म, दया और परोपकार के भाव होते है। धर्म किसी मस्जिद, गिरजा, गुरुद्वारा या मन्दिर मे ही नही है वह सर्व व्यापक है। धर्म प्रत्येक मनुष्य की आत्मा मे है, धर्म को विवेकी पुरुष ही धारण कर सकता है। किसी को दु ख देने के विचार उन पुरुषो के मन मे नही आते। यहा तक कि ऐसे विवेकी पुरुष अपने शत्रुओ तक के लिए मन मे दया भाव रखते है। मन्दिर, गुरुद्वारे तो धर्म के साधन मात्र है। उनमे जाने से हमे धर्म की प्राप्ति नही हो सकती, धर्म तो हमे अपने आचरण मे उतारना होगा। मन्दिर, मस्जिद, गुरुद्वारे यह सब धर्म के साधन मात्र है, साध्य नही।

सत्य शाश्वत है :

भोलानाथ नगर। ससार मे जितने भी पदार्थ है सब परिवर्तनशील है। कोई भी ऐसी वस्तु नही जो बदलती नही। केवल सत्य ही है जो सदैव शाश्वत है। सत्य ही कल्याणकारी और सच्चा सुख देने वाला है। सत्य की आध्यात्मिक परिभाषा बताते हुए कहा कि सत्य कभी बोला नही जा सकता, वह तो मात्र अनुभव की वस्तु है। बोला हुआ सत्य सदैव अपूर्ण सत्य होगा, पूर्ण सत्य नही। सम्पूर्ण सत्य भगवान् ने प्राप्त किया है।

व्यवहार मे भी हमे सदैव सत्यनिष्ठ रहना चाहिए। मनुष्य सत्य से ही उन्नत बन सकता है। हमारा समाज, देश तभी सुखी रह सकता है जब प्रत्येक मनुष्य मे सत्य रहेगा और एक दूसरे के उपकारी काम मे लगे रहेगे। सत्य मे महान् शक्ति है, वह ससार के दु खो को दूर करने वाला है।

सद्भावना और कर्त्तव्य :

भोलानाथ नगर। ससार मे हर व्यक्ति अपना-अपना कर्त्तव्य करता रहता है और उन कर्त्तव्यो के पीछे यदि सद्भावना हो तो हमे सासारिक दु खो से मुक्ति मिल सकती है। जब कोई अपने कर्त्तव्य से च्युत होता है तभी दुखी होता है। किसी ने दुखी बना दिया, यह भाव भी मिथ्या है। कर्त्तव्य-विमुख होने पर यह जीव स्वय दुख पाता है। आज देश मे अधिकांश व्यक्ति कर्त्तव्य-विमुख होते जा रहे है, अपने-अपने कर्त्तव्य से भटक गये है। इसी कारण देश के सामने अनेक समस्याये है।

कर्त्तव्य और सद्भावना दोनो परस्परावलम्बी है, एक दूसरे पर आधारित है। जब यह जीव सत्य को समझेगा, अपने कर्त्तव्य को जानेगा तो उस कार्य के पीछे सद्भावना भी होगी। कर्त्तव्य से जब यह जीव हटता है तभी सद्भावना मे कमी आती है। आज आवश्यकता है कि लोग कर्त्तव्यनिष्ठ बने। कर्त्तव्य से ही देश, सस्कृति, धर्म और आत्मा की रक्षा हो सकती है।

महावीर के जीवन से प्रेरणा लें :

कृष्णा नगर । भगवान् महावीर के जीवन पर विहगम प्रकाश डालते हुए कहा कि आज भगवान् महावीर के आदर्शमय जीवन से प्रेरणा ग्रहण करनी चाहिए । भगवान् महावीर का सदेश है कि विचार में अनेकान्तवाद, आचार में अहिंसा और अपरिग्रह अपनाना चाहिए । इसी से आजकल कलुषित जीवन मे शान्ति और सुख मिल सकता है । मनमुटाव घातक है, वह हिंसा का कारण बन सकता है । अपने अतरग को निर्मल करना चाहिए । वह तभी हो सकता है जब हम सत्सग, पूजा, व्रत और तीर्थो की वन्दना करेगे और इसके बाद उनके आदर्शों को अपने जीवन मे लाने का प्रयास करेगे, तभी हमारी पूजा और वन्दना सार्थक होगी ।

माता पिता के शादी के आग्रह को अस्वीकार करते हुए भगवान् महावीर ने कहा – पिताजी ! आपका और मेरा शरीर एक हो सकता है, परन्तु आत्मा तो भिन्न है । मुझे ससार मार्ग पर नही, मोक्ष मार्ग पर अग्रसर होना है, मुझे ऐसे मार्ग पर चलना है जिस पर चल कर मै अपना कल्याण कर सकू और दूसरे प्राणियो के लिए मार्ग प्रशस्त कर सकू ।

परिस्थितियां बदलती हैं मूल सिद्धान्त नही बदलते :

पटपडगंज । यह ससार अनादि काल से है और अनन्त काल तक रहेगा । इसमे कालवश अनेक परिवर्तन आये पर मूल बाते नही बदली । ससार मे कोई भी वस्तु पैदा नही होती, हा पर्याय बदलती रहती है । इस आत्मा ने चौरासी लाख योनियो मे घूमने के बाद भी अपने स्वरूप को नही बदला । शरीर बदलता रहा पर यह आत्मा वही रही ।

ससार मे जो वस्तु अस्तित्व मे है उसका नाश कभी नही होता और जो अस्तित्व मे ही नही उसका जन्म कभी नही होता । इसी प्रकार, अजीव पदार्थो का भी नाश कभी नही होता । आकाश हमेशा ऐसे ही रहा और रहेगा, यह कभी नही बदलता । इस ससार मे छह द्रव्य अनादि काल से है और ऐसे ही रहेगे । इस मनुष्य मे पाच इन्द्रिया है और हमेशा पाच ही रहेगी, चार नही हो सकती । ससार मे गतिया चार है और सदैव चार ही रहेगी ।

कर्मठ और पुरुषार्थी जीवन व्यतीत करें :

मयूर विहार । जन्म-मरण, सुख-दु ख अनादि काल से चल रहा है । यह प्रकृति की देन है । इसे कोई रोक नही सकता । मनुष्य जन्म के समय तो धूमधाम से उत्सव मनाते है लेकिन मरण के समय रोते है, बिलखते है । जबकि सब यह जानते है कि जन्म और मरण सुनिश्चित है । इसलिए जरूरत इस बात की है कि मरण के समय कम से कम घर से मोह ममता छोड़कर भगवान् का नाम ले । मृत्यु को महोत्सव के रूप मे अपनाए तभी जीवन सार्थक है। जिस शरीर को जीवन भर साफ करके नाना प्रकार के कपडे और प्रसाधनो से सुन्दर बनाते रहे, जब उसने भी साथ छोड दिया, फिर किसका मोह किया जाए ।

महिलाओ को सम्बोधित करते हुए कहा कि वह अपने भावो मे निर्मलता और पवित्रता लावे । अपनी बेटी और बहू को समान समझे । दहेज जैसी बुरी प्रवृति को घृणा की दृष्टि से देखे और बहुओ के प्रति कटु व्यवहार छोडकर अपनी बेटी के समान दया और स्नेहपूर्ण व्यवहार करे ।

ज्ञान का महत्व :

निर्माण विहार । हम ससारी जीव अपने शरीर से मोह करते है । अनेक सौन्दर्य प्रसाधनों से इसे नित्य ही सजाते है, परन्तु यह नही जानते कि इस शरीर का स्वभाव सडना है । जिस समय यह आत्मा इस शरीर को छोड कर चली जाती है यह शरीर सडने लगता है और इसमे से दुर्गन्ध उठने लगती है । इसलिये इस शरीर का श्रृगार छोड़कर अपनी आत्मा का श्रृगार करना चाहिए । शरीर शाश्वत नही है केवल एक आत्मा ही शाश्वत है ।

जो अपनी आत्मा को पहचानते है, जिनकी दृष्टि शरीर पर नही बल्कि गुणो पर जाती है वही पण्डित कहलाने के योग्य है। जिस समय हम शरीर और आत्मा का भेद-विज्ञान जान लेगे और अपनी दृष्टि आत्मा की ओर डालेगे तभी हमे यथार्थ ज्ञान का प्राप्ति होगी।

ससार मे आकर भी यदि मनुष्य ने ज्ञान प्राप्ति और आत्मा के कल्याण के लिए कोई यत्न नही किया तो जैसे बिना जल के कुआ होता है, उसी प्रकार उस मनुष्य का जीवन व्यर्थ है।

आत्मा वास्तविक सत्य है :

प्रीत विहार। भारत प्राचीन काल से ही आध्यात्मिक देश रहा है। यहा के सभी अध्यात्मवादियों ने अपने अपने विचार के अनुसार आत्मा की चर्चा की है। आखिर इस आत्मा का वास्तविक रूप क्या है ?

इस आत्मा को समझना इस जीवन के लिये सबसे महत्वपूर्ण बात है। यह शरीर एक मकान है और दो नेत्र इसकी खिडकिया है। इस मकान मे कुछ समय के लिये हमारी आत्मा उसी प्रकार रह रही है जैसे एक मकान में जला हुआ दीपक रखा हो और सारे मकान को प्रकाशित कर रहा हो। यदि मकान के अन्दर से दीपक हटा दिया जाये तो एकदम अन्धेरा छा जायेगा। उसी प्रकार, यदि शरीर से आत्मा हट जाये तो इस शरीर रूपी मकान मे भी अंधेरा हो जायेगा।

मनुष्य ने समस्याएं खुद ही पैदा की हैं :

पाडव नगर। साधु सारे ससार के सुख की बात करता है। सभी जीवो के कल्याण की बात करता है। मनुष्य ने अस्त्र-शस्त्र इकट्ठे करके अपने लिए ही समस्या पैदा की। किसी अन्य जीव ने ऐसा नही किया। यह देश धर्म प्रधान है। इसमे ऋषि-मुनि ही सबके उपकार व अहिसा की बात करते है। इस देश मे सभी को निर्भय होकर रहना चाहिए।

एलाचार्य मुनिश्री विद्यानन्द के प्रवचनार्थ पाडव नगर मे गुरु सिह सभा द्वारा आयोजित स्वागत समारोह मे सैकडो सिखो, जैना तथा जैनेतर लोगो ने भाग लिया। इस अवसर पर दिल्ली केन्द्रीय गुरु सिह सभा के अध्यक्ष सरदार तरविंदर सिह मारवाह तथा पाडव नगर गुरुद्वारा के कोषाध्यक्ष श्री मगल सिह ने मुनिश्री का भव्य स्वागत किया और कहा कि सभी धर्म अहिसा का मार्ग दिखाते है। कुछ लोग ही बुरे होते है। जब जब भी देश मे सकट आता है तब तब मुनिश्री जैसे महान् लोग देश का कल्याण करते है।

धर्म और राजनीति एक ही सिक्के के दो पहलू हैं :

शकरपुर। हम अपने कर्त्तव्यो का निष्ठा से पालन करे और वात्सल्य तथा प्रेम से दूसरो का मन जीते, तभी हम सुन्दर व महान् देश की कल्पना कर सकते है। राजनीति और धर्म एक ही सिक्के के दो पहलू है। राजनीति मे कर्त्तव्य करना ही धर्म है। धर्म उपकार सिखाता है, आत्मा को परमात्मा से मिलाता है।

आज जनसख्या की वृद्धि पर रोक लगाने की भीषण समस्या हमारे देश के सामने है और नाना तरीको से उसे सुलझाने का प्रयत्न किया जा रहा है। हमारे तीर्थकरो ने बहुत पहले ही ब्रह्मचर्य और सयम ऐसे दो धर्म बताए जिनसे जीवन सुखी बन सकता है और परिवार भी सीमित रह सकता है। लोगो ने इस दर्शन को नही अपनाया और कालान्तर मे यह समस्या सामने आ गयी।

जहां विनाश है वहां विकास नहीं :

लक्ष्मी नगर। कोई भी देश धन-वैभव या अधिकाधिक शस्त्र इकट्ठा करके महान् नही बन सकता है। वही देश महान् है जिसमे सुशिक्षित नागरिक है और जहा प्राणी मात्र के कल्याण की भावना है। भगवान् महावीर ने वसुधैव कुटुम्बकम् के

आदर्श को हमारे सामने रखा। साधु-सन्त भी इसी आदर्श को रखते है, वे प्रदेश, जाति और भाषा आदि का भेद न करके सभी के सुख की बात करते है। साधु-सत सारे ससार की बात सोचते है कि सब सुखी रहे। अभयदान सबसे बडी चीज है। वह अहिसा से सम्भव है। जहा विनाश है वहा विकास सम्भव नही।

भारतीय सस्कृति बडी ऊची है। यहा के जन जीवन मे तामसिक भाव अपेक्षाकृत अन्य देशो के निवासियो से बहुत कम है, क्योकि भारत भूमि सन्तो की रही है। भगवान् राम का उद्धरण देते हुए उन्होने कहा कि धर्मपालन के लिए ही राम ने अपने पिता की आज्ञा मानी और चौदह वर्ष का वनवास ग्रहण किया।

इस अवसर पर केन्द्रीय आपूर्ति मन्त्री श्री एच के एल भगत ने कहा – अहिसा ही देश और दुनिया को विनाश से बचा सकती है। भारत की जडो को कोई नही तोड सकता। श्री भगत ने महावीर भगवान् एव महात्मा गाधी के शांति और प्रेम के सन्देश पर चलने की सलाह देते हुए कहा कि देश मे बढ रही अराजकता, झगडे और नफरत को दूर करके देश के भविष्य को उज्ज्वल बनाना हर भारतवासी का कर्त्तव्य है।

इसी अवसर पर महापौर श्री महेन्द्र सिह साथी ने कहा कि सिखो को आगे बढकर आतकवाद के खिलाफ आवाज उठानी चाहिए। सभी को आपसी मतभेद भुलाकर देश के निर्माण मे रचनात्मक भूमिका अदा करनी चाहिए।

मृदुभाषण मानव को मानवता सिखाता है .

बैक कालोनी। मनुष्य के जीवन मे भाषा उसे ऊचा उठाने के लिये होती है। तन की भाषा, मन की भाषा और वाणी। मृदुभाषण वही है जो तन, मन और वचन से एक हो। बहुत से कपटी और मायाचारी मृदुभाषण ऊपर से करने वाले होते है। मृदुभाषण का तभी लाभ है जब वह स्व और पर कल्याण की भावना से हो। मृदुभाषण से तात्पर्य हा जी करने से नही है। मृदुभाषण से मतलब है कि हम प्रिय, सत्य, हित और मित वचन बोले। आध्यात्मिकवाद की अभीक्ष्ण काललब्धि की प्राप्ति केवल मृदुवचनों से ही हो सकती है। कठोर शब्दों से ससार मे महान् विपत्तिया आयी। मृदुभाषण मानव को मानवता सिखाता है।

कृतज्ञता इसी मे है कि अपकार का बदला भी उपकार से दिया जाये। जिन आचार्यों ने तत्त्वज्ञान के शास्त्र लिखे, क्या हम उनका उपकार भुला सकते है ? जिन गुरुओ ने हमे अक्षर ज्ञान कराया, क्या हम उनका उपकार भुला सकते है ? जिन जवानो ने देश की रक्षा, धर्म की रक्षा, शास्त्रो की रक्षा के लिये अपने प्राणो की बलि दे दी, क्या हम उनका उपकार भुला सकते है ? ससार मे इस जीव पर अनन्तानन्त उपकार होते है, उन्हे न भुलाना ही कृतज्ञता है।

धर्मध्यान में लगाया गया समय अपना है :

खुरेजी। जीवन मे जिसने समय के मूल्य को पहचान लिया उसने सब कुछ जान लिया। थोडी सी लापरवाही से समय का मूल्य न पहचानने से राजा महाराजा अनेक युद्ध हार गये। आज मानव परिग्रह इकट्ठा करने मे ही अपना समय नष्ट कर रहा है। संसार मे मनुष्य जीवन पाना बहुत कठिन है और यदि भाग्यवश मनुष्य जीवन मिल भी जाये तो आर्य देश मिलना कठिन है और यदि आर्य देश मिल जाये तो उत्तम कुल मिलना कठिन है। यदि यह सब पाकर भी अपना सारा समय शरीर को सजाने मे ही बरबाद कर दिया तो फिर आत्म कल्याण कब करोगे।

जो मनुष्य आत्म चिन्तन मे अपना समय बिताते है वे ही उत्तम पुरुष है। आत्म चिन्तन और धर्म ध्यान मे हमने जो समय लगाया वही हमारा है। जिन्होने समय के मूल्य को पहचानकर आत्म कल्याण हेतु पुरुषार्थ किया है ससार से मुक्त हो गये, बाकी सब ससार मे भटक रहे है।

हमारी आत्मा मे अपार शक्ति है। इसलिये ससार मे आत्मचिन्तन ही श्रेष्ठ है। कौन जानता है कि कल क्या होने वाला है। इसलिये भव्यो ! आवश्यकता से अधिक परिग्रह सचय करने मे अपना समय नष्ट न करो और नित्य प्रात काल और सोते समय थोडी देर शास्त्र स्वाध्याय और आत्म चिन्तन अवश्य करो।

भगवान् राम से प्रेरणा लें :

रघुबरपुरा (गाधीनगर)। भगवान् राम, लक्ष्मण और विदुषी सीता के आदर्श और त्यागमय जीवन पर प्रकाश डालते हुए कहा कि भगवान् राम के सम्पूर्ण जीवन मे लोक कल्याण की भावना निहित थी। दडकारण्य का वर्णन करते हुए कहा कि भगवान् राम को ससार का वैभव आकर्षित नही कर सका। उन्होने पिता के कहने पर झट वनवास की आज्ञा मान ली। उनके पास वन मे किसी प्रकार का परिग्रह न था। राम का जीवन अहिसा और करुणा से कूट कूट कर भरा था। आज उनके जीवन से प्रेरणा ग्रहण कर अपना जीवन सुखी बना सकते है। राम और लक्ष्मण का जीवन आज के युग मे वात्सल्य और करुणा का सचार करता है।

विदुषी सीता का जीवन नारियो को महान् बनाता है। आपसी द्वेष, मायाचार और हिसा पर विजय की प्रेरणा उनके जीवन से मिलती है।

धर्म कभी धर्म का विरोधी नहीं रहा :

कैलाश नगर। धर्म कभी भी धर्म का विरोधी नही रहा। जब जब धर्म मे अधर्म का समावेश होता गया, घृणा, द्वेष और अन्य कुरीतिया फैलती गई, तब तब हिसा प्रवृत्ति बढती गई। धर्म सार्वभौम सत्य है। धर्म एक चिन्तामणि रत्न है जिससे सब चिन्ताए समाप्त हो जाती है। राग, घृणा और द्वेष का त्याग करने पर कल्याण की भावना से हम अहिसा का परिपालन करते है, वह धर्म है। राग-द्वेष को छोड कर जो आत्म अनुसधान करता है वही वीतरागी है, वही परमात्मपद को प्राप्त कर सकता है।

विकलांगों की सेवा वास्तविक अहिसा धर्म है :

विकलागो की मदद के लिए किए गए रचनात्मक कार्यों की सराहना करते हुए एलाचार्य मुनिश्री विद्यानन्दजी ने कहा कि देश मे रामराज्य की स्थापना केवल तभी हो सकती है जब मानवमात्र मे दुखी जीवो की मदद और सेवा की भावना पैदा हो जाए। जिन व्यक्तियो के अग कट जाते है उनके जीवन मे निराशा पैदा हो जाती है। उन्हे पुन अग प्राप्त होने से नया जीवन मिल जाता है। भगवान् महावीर का यही सदेश है कि दु खी प्राणियो की नि स्वार्थ भाव से मदद की जाए। दुखियो का कष्ट दूर करना ही वास्तविक अहिसा धर्म है। इस पर चलकर हम राष्ट्र की सेवा कर सकते है। मुनिश्री ने दहेज के अभिशाप की भी चर्चा की और महिलाओ से कहा कि वे बहू और बेटी मे किसी प्रकार का अन्तर न करे।

महावीर जयन्ती और रामनवमी के संदर्भ मे आज यहा एक समारोह मे १०१ विकलागो के लिए कृत्रिम अग प्रदान किए गए। इस अवसर पर ६६ विकलाग स्वय उपस्थित थे और उन्होने कृत्रिम पैरो के साथ चल फिर कर दिखाया। विकलागो मे स्त्री पुरुष सभी थे तथा ये महावीर विकलांग समिति, जयपुर के सचालक श्री डी आर मेहता के नेतृत्व मे यहा आए थे।

इस अवसर पर लोक सभा अध्यक्ष श्री बलराम जाखड ने कहा कि विकलांग व्यक्तियो की मदद का काम अत्यन्त अनुकरणीय है। इससे अपग व्यक्ति आश्रय पा जाता है। यह खुशी की बात है कि यह इतना बडा काम बिना किसी जाति या धर्म के भेदभाव के हो रहा है और इससे देश के सभी भागो के विकलाग लाभान्वित होते है। यही सच्चा धर्म है। धर्मपरायण व्यक्ति मनुष्यो मे कभी फर्क नही करता। श्री जाखड ने परिषद् द्वारा किए जा रहे इस कार्य को आगे बढाने मे पूरा सहयोग देने का आश्वासन दिया।

महावीर का धर्म पुरुषार्थवादी है :

परेड ग्राउण्ड (सुभाष मैदान)। इस विशाल भारत देश मे अनादिकाल से अनेक महापुरुष होते रहे है। वे महापुरुष आगे आने वाली सन्तति के लिये अपने सिद्धान्त के रूप मे सपत्ति छोड कर गये है। हमे उनसे सम्पत्ति रूप मे अहिसा, सत्य, सर्वोदय, अनेकान्त आदि सिद्धान्त प्राप्त हुये हैं।

भगवान् महावीर ने 'पुरुषार्थ' को महत्वपूर्ण बताया। सब प्राणी पुरुषार्थ करके ही अपने जीवन का कल्याण कर सकते है। अठारह सौ वर्ष पूर्व सर्व प्रथम आचार्य समन्तभद्र ने सर्वोदय का सिद्धान्त दिया। सबका कल्याण हो, सबका अभ्युदय हो इसी भावना से उन्होने सर्वोदय सिद्धान्त का प्रतिपादन किया।

बौद्ध ग्रन्थ ललित विस्तार में भगवान् महावीर की जन्म स्थली वैशाली नगरी का अत्यन्त सुन्दर वर्णन है। उसके अनुसार वैशाली मे तत्समय ७७०७ ससद् सदस्य थे। चेटक महाराजा वहा के अध्यक्ष थे। वैशाली मे ७००० मकानो मे स्वर्ण कलश लगे हुए थे, १४००० मकान रजत कलश युक्त थे और २१००० मकान ताम्र कलश युक्त थे। इस प्रकार ४२००० मकानो मे एक लाख अडसठ हजार नागरिक रहते थे। नगर सौन्दर्य अद्भुत था। वैशाली सबसे प्राचीन गणतन्त्र था। महापुराण के सोलहवे अध्याय मे उल्लिखित है कि जनतन्त्र के शुभारम्भ व विकसित रूप का आधार जैन शास्त्र है।

धर्म तनाव व जीवन की घुटन दूर करता है :

पहाडी धीरज। आज के भौतिक युग मे हमारा जीवन पहले जैसा सीधा और सरल नही रहा है। धर्म और मोक्ष को भौतिकवाद ने भुला दिया है। कदम कदम पर संघर्षों एव समस्याओ का सामना करना पडता है। ऐसे समय मे धर्म के समान कोई दूसरा सहायक नही है। धर्म उपार्जन से हम दैनिक समस्याओ का समाधान शान्ति तथा सरलता से कर सकते है।

धर्म, तनाव और जीवन की घुटन को दूर करता है। भगवान् महावीर के पाच आदर्श–अहिसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह हमारे जीवन को पवित्र और सुखी बना सकते है। सुख और शान्ति धन दौलत से नही मिल सकती वह तो मात्र अहिंसा मार्ग पर चलने से मिलती है। प्रत्येक प्राणी को अपना जीवन आदर्शमय बनाना चाहिए। दूसरो की सेवा और किसी को दु ख न देने की भावना मे ही शान्ति और सुख विद्यमान है।

साधु और समाज :

माडर्न स्कूल। समाज की व्यवस्था सबसे पहले मनुओ ने की थी। जब जब मानव पर सकट आये तो मनुओ ने ही उसका मार्ग दर्शन किया। समाज एक व्यक्ति से नही बनता। समाज अनेक सभ्य व्यक्तियो का समूह है। समाज मे जो व्यक्ति विशेष आचार को लेकर मोक्ष मार्ग पर चलते है, जिन्हे परिग्रह से मूर्छा प्रतीत होती है और जिनका सासारिक मोह कम होता जाता है वे साधु कहलाते है।

साधु और समाज मे बडा घनिष्ठ सम्बन्ध है। साधु दर्पण के समान है जिसके द्वारा वह अपनी कमियो की झलक देख सकता है। साधु सामाजिक बुराइयो को दूर करने का उपदेश देते है। साधु की रक्षा समाज करता है और समाज की रक्षा साधु करते है। बिना समाज के साधु और बिना साधु के समाज टिक नही सकता। जिस समाज मे साधु आदर्श होता है वह समाज भी आदर्श समाज होता है।

समाज को शासन मे रखने के लिये एक ओर सरकार है तो दूसरी ओर साधु है। सरकार कानून द्वारा समाज को ठीक रखने का प्रयास करती है और साधु अपने उपदेशो द्वारा समाज को बोधता है। साधु के बताए मार्ग पर चल कर समाज राष्ट्र को मजबूत बना सकता है।

आचार्य श्री धर्मसागरजी को श्रद्धांजलि :

डिप्टी गज। शीर्षस्थ जैनाचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज के देहावसान से समस्त जैन जगत् स्तब्ध रह गया। आचार्य मुनिश्री विद्यानन्दजी ने श्रद्धाजलि अर्पित करते हुए कहा – धर्मात्मा पुरुष या साधु अपनी मृत्यु को सन्निकट जान सल्लेखना व्रत धारण कर लेता है। आचार्य श्री धर्मसागरजी बाल ब्रह्मचारी थे, वे करणानुयोग के विशेषज्ञ थे। चारित्रचक्रवर्ती आचार्य शान्तिसागरजी के वे तृतीय पट्ट शिष्य थे।

प्रधानमत्री श्री राजीव गाधी ने आचार्यश्री के निधन पर गहन सवेदना व्यक्त करते हुए उनकी शिक्षाओ पर चलने का अनुरोध किया है। श्री बलराम जाखड ने कहा कि जैन धर्म के प्रमुख आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज के आकस्मिक निधन से मुझे गहरा शोक हुआ है। उन्होने सारे भारत मे जन कल्याण के लिए जीवन भर अहिसा, प्रेम और सद्भाव के सिद्धान्तो के प्रचार का अथक प्रयास किया। उनके निधन से धार्मिक क्षेत्र मे जो स्थान रिक्त हुआ है उसकी पूर्ति निकट भविष्य मे सभव नही है।

एलाचार्य मुनिश्री विद्यानन्द को श्रद्धा सुमन

परम पूज्य एलाचार्य मुनिश्री विद्यानन्दजी को आज उनकी ६३ वी जन्म जयन्ती पर एक विशाल समारोह मे भावभीनी विनयाजलि अर्पित की गई।

एलाचार्य मुनिश्री विद्यानन्दजी ने सभा को सम्बोधित करते हुए कहा कि धर्म का ध्येय तभी पूरा होगा जब मनुष्य त्याग और निवृत्ति का मार्ग अपनाएगा। इसी से दु खों से छुटकारा मिलेगा और शांति मिलेगी। उन्होने कहा कि श्रावक और मुनि दोनो सबद्ध रहेगे तो धर्म सुरक्षित होगा। सन्त लोग सभी को समान भाव से उपदेश देते है। समाज को आत्म कल्याण की भावना के साथ सगठित होकर इस सिद्धान्त का पालन करना चाहिए। श्रमण सस्कृति निवृत्तिमूलक ह और वही सुख का मार्ग है।

सफलता के तीन सूत्र – श्रद्धा, ज्ञान, चारित्र

माडल बस्ती। सम्यक्दर्शन विश्वास है, जिसके साथ ज्ञान और आचरण भी आवश्यक ह। बिना क्रिया के किसी भी ज्ञान का महत्व नही है। श्रद्धा व ज्ञान के साथ आचरण की भी आवश्यकता है।

ससार मे समस्त वस्तुए अनगढ होती है, कच्चा माल कहलाती है, चाहे वह खान मे निकले, चाहे पहाड से। उसे फैक्ट्री मे डालकर शुद्ध किया जाता है, उसके साथ जिन अन्य तत्वो का सयोग रहता है, उन्हे दूर किया जाता है। जिस प्रकार खान से निकाले गए सोने को शुद्ध किया जाता है। उसी प्रकार एकेन्द्रिय से लेकर पचेन्द्रिय तक के प्राणी कच्चा माल है, वे सब श्रद्धा, ज्ञान, चारित्र से अपनी आत्मा को शुद्ध करके परमात्म पद प्राप्त कर सकते है।

विपरीत श्रद्धा, मिथ्या श्रद्धा, अन्ध श्रद्धा सस्ती व सहज है पर सम्यक्त्व प्राप्त करना कठिन है। सत्य को जानने के लिये मिथ्यात्व का स्वरूप, उसका परिणाम आदि भी जानना होता है, जैसे प्रकाश के ज्ञान व उपादेयता के लिये अन्धकार का ज्ञान भी आवश्यक है। हमे भी मुक्त होने के लिए सम्यक्दर्शन और सम्यक्ज्ञान पूर्वक चारित्र करना होगा।

चन्दन से भी शीतल साधु संगति :

जैन हैप्पी स्कूल। ससार मे जितने प्राणी है उनमे कपडे पहनने वालो की सख्या बहुत कम है। कोई भी प्राणी ससार मे कपडे पहनकर नही जन्मा और न ही मरते समय अपने साथ कपडे लेकर गया। जैसे जैसे मन मे विकार उत्पन्न होते है वह जीव कपडे धारण करता जाता है, जो विकार रहित होते है उन्हे कपडो की आवश्यकता नही है।

प्राचीन सस्कृति मे नग्नत्व आरम्भ से ही चलता आया है। हर धर्म मे दिगम्बर मुनियों का वर्णन है। दिगम्बरत्व को जगत् के सारे धर्म अच्छा मानते है। नागा साधु हरिद्वार और प्रयाग मे कुम्भ मेले पर जनता को दर्शन देते है। परम हस साधु भी नग्न अवस्था मे ही रहते है। यह सब साबित करता है कि यह अवस्था प्राचीन काल से चली आ रही है।

नग्नत्व अवस्था ही ससार मे उत्तम मार्ग है। कपडे पहनना मध्यम मार्ग है। नग्नत्व मार्ग बहुत कठिन है। संसार मे लगोटी का त्याग तो चरम सीमा का त्याग है। जो स्वाभाविक जीवन बिताना चाहते है उन्हे कपडो की कोई आवश्यकता नही है। यह परिग्रह तो अनेक परेशानियो का कारण है। परिग्रह छोडने पर ही सुख और शान्ति सभव है। ससार मे चन्द्रमा शीतल है, चन्द्रमा से भी शीतल चन्दन है, पर इससे भी शीतल यदि कोई चीज है तो वह है साधु सगति। साधु भी वही है जो सब परिग्रह से रहित हो। आत्म साधना के लिये सर्वोत्कृष्ट मार्ग दिगम्बरत्व अवस्था मे ही है।

ज्ञान के साथ चारित्र का होना मोक्ष मार्ग है :

डाक्टर लेन। मोक्ष केवल ज्ञान मात्र से उपलब्ध नहीं होता। सम्यक् दर्शन और ज्ञान के साथ चारित्र होना भी मोक्ष के लिए अनिवार्य है। वास्तविक धर्म तो सम्यक्चारित्र में है। चारित्र का पालन वीतराग तपस्या के बिना नही हो सकता। विशुद्ध आत्मा मे ध्यानस्थ होकर जो बैठते है और जहा ध्यान, ध्याता और ध्येय का किंचित्मात्र भी अन्तर नही रह जाता, वे ही मोक्ष को प्राप्त करते है। मोहनीय कर्म का क्षय कर मनुष्य को अन्तिम पुरुषार्थ 'मोक्ष' की सिद्धि के लिए करना ही उपादेय है।

सब कर्मो का नाश करके जन्म-मरण के दुखों से सदैव के लिये मुक्ति पाना ही मोक्ष कहलाता है। यह जीवअपने आपको स्वय ही बन्धनो मे डालता है और स्वय ही मुक्त होता है। यही मुक्ति का रहस्य है। जो अपनी शुद्ध आत्मा मे 'राग, द्वेष और मोह' मे रहित शुद्ध उपयोग धारण करता है वही मोक्ष को प्राप्त करता है। इसमे केवल मोह ही बाधास्वरूप है। अत पहले इस मोह को हटाना होगा।

मोह और मोक्ष पर विचार करते हुए सदैव यह याद रखना चाहिये कि यह ससार अनादि है। इसमे इस जीव ने अनेक बार जन्म लिया और अनेक बार काल का शिकार हुआ। जो ज्ञानवान् है वे अपनी मृत्यु निश्चित जानकर अमर होने के आध्यात्मिक प्रयास मे लग जाते है। यदि ज्ञान के साथ मोह नही और चारित्र है तो वह जीव मुक्ति अवश्य पायेगा।

भारतीय इतिहास मे जैन संस्कृति की प्रमुख भूमिका

फिक्की सभा गृह, नई दिल्ली। एलाचार्य मुनिश्री विद्यानन्द ने 'अहिसा इन्टरनेशनल जैन स्मृति पुरस्कार' समारोह के आयोजन के अवसर पर कहा कि तत्वविज्ञान विशाल है, इसका अत नही। पूर्ण सत्य भी अखड है। कोई भी वाक्य आशिक सत्य के लिए हो सकता है, पर पूर्ण सत्य नहीं। इसी प्रकार, इतिहास की मान्यताए बदलती रहती है और बदलती रहेगी। ज्यो ज्यो नयी नयी खोजे होती रहेगी त्यो त्यो इतिहास बदलता रहेगा। इतिहास की मान्यता बदलने मे कई सारे योगदान होते है। इतिहासकार की पैनी दृष्टि और उसकी साधना ऐसा योगदान है जिसके बिना वर्षा मे चले आ रहे इतिहास की मान्यताओ का बदलना एक उच्चकोटि के विद्वान् के लिए सभव है।

मुनिश्री ने आगे कहा – मनुष्य जो भी कार्य करता है वह केवल ज्ञान का करता है। शब्दो को एक जगह मे हटा कर दूसरी जगह रख देना ज्ञान का कार्य है, शब्द तो पहले से है ही, केवल उनको एक जगह से दूसरी जगह रख कर अपने विचारो को उनके माध्यम मे प्रगट करना है। भगवान् महावीर ने स्याद्वाद कह कर यह सिद्ध कर दिया कि यह समझना कि जितना हमने प्राप्त कर लिया है ज्ञान उतना ही है, यह सर्वथा अज्ञान है। ज्ञान अनन्त है उसको सीमा मे नही बाधा जा सकता है। जितना आपने प्राप्त कर लिया दूसरा उससे भी अधिक प्राप्त कर सकता है।

आचार्यपद प्रतिष्ठापना समारोह

दिल्ली, २८ जून, १९८७। ऐतिहासिक लालकिले के सामने सुभाष मैदान मे राष्ट्रीय स्तर पर आयोजित एक भव्य विशाल समारोह मे आज जैन समाज के चतुर्विध सघ ने एलाचार्य मुनिश्री विद्यानन्दजी महाराज को हजारों नर-नारियो द्वारा तुमुल जयघोष के बीच विधिवत् आचार्य पद पर प्रतिष्ठित किया गया। चारित्रचक्रवर्ती आचार्य शांतिसागरजी की परम्परा मे वे पाचवे आचार्य है।

ज्ञातव्य है कि परम पूज्य आचार्यरत्न श्री देशभूषणजी महाराज ने पूज्य मुनिश्री विद्यानन्दजी महाराज की तपोमय साधना, ज्ञान, वक्तव्य कला, लेखन एव सम्पादन शैली से प्रभावित होकर भगवान् महावीर के २५०० वें परिनिर्वाण वर्ष मे उन्हे उपाध्याय पद पर प्रतिष्ठित किया था।

यह वही स्थान है जहा तीन दशक पूर्व क्षुल्लक पार्श्वकीर्ति ने आचार्यरत्न देशभूषणजी से मुनि दीक्षा ग्रहण की थी और उनका नाम मुनि विद्यानन्द पडा था। बाद मे इसी स्थान पर श्रमण परम्परा मे बहुत दिनो से विलुप्त उपाध्याय और एलाचार्य पद मुनि विद्यानन्दजी को प्रदान किए गए जो उनके आध्यात्मिक गुणो के प्रतीक थे।

पिछले कुछ दिनो से परम पूज्य आचार्यरत्न श्रीदेशभूषणजी महाराज का स्वास्थ्य अच्छा नही चल रहा है। उन्होने कोथली क्षेत्र के सभी ट्रस्टियो और सघ की उपस्थिति मे सार्वजनिक रूप से यह भावना व्यक्त की है कि आचार्यपद, पद की गरिमा के अनुरूप ही, मुनिश्री विद्यानन्द को ही देने का निर्णय करता हू। आचार्यश्री की इस भावना को सभी ट्रस्टियो, सघ के त्यागीवृन्द एव व्यवस्थापको ने हृदय से स्वीकार किया।

परम पूज्य आचार्यरत्न श्री देशभूषणजी महाराज का यह आज्ञा सन्देश वहा के सभी ट्रस्टियो ने पूज्य एलाचार्य मुनिश्री विद्यानन्दजी महाराज को मराठी एव कन्नड भाषा मे लिखित रूप से भेजा।

आचार्य श्रृंखला मे एक 'दिव्य रत्न आया' की सगीतमयी वाणी के बीच मुनिश्री विद्यानन्दजी को आचार्य पद सौपते हुए धर्म-प्रभावना मे निरन्तर सलग्न रहने और सपूर्ण समाज को एक सूत्र मे बाधे रखने का विश्वास व्यक्त किया गया था। साथ ही इस अनुष्ठान मे आचार्यश्री विद्यानन्दजी को नया कमण्डलु और पिच्छी भेट किए गए।

आचार्य के रूप म अपना प्रथम उद्बोधन करते हुए आचार्यश्री विद्यानन्दजी ने कहा – साधु किसी काल, देश या जाति का नही होना, वह तो समग्र मानव समाज का होता है। उसकी दृष्टि मानवतावादी होती हे तथा वह जाति-भेद से ऊपर उठकर पशु-पक्षी तक क कल्याण की कामना करता हे। उन्होने बताया कि श्रमण सस्कृति हमेशा शांति की प्रतीक रही है। मंदिर मे पूजा के बाद भी यही कामना की जाती हे कि समाज, राष्ट्र और विश्व शांति के साथ रहे। हमे जीना है तो ससार के सभी लोगो को साथ लेकर जीना है। साधु समाज से अलग नही है। दोनो उसी तरह एक-दूसरे के पूरक है जिस तरह सिन्धु और बिन्दु। एक के बिना दूसरे का अस्तित्व नष्ट हो जाता है। इसलिए समाज को सगठित होकर शाति के लिए राष्ट्र की सेवा में समर्पित होना चाहिए।

केन्द्रीय मत्री श्री बी शकरानन्द ने अत्यन्त भावपूर्ण शब्दो मे कहा कि आचार्य विद्यानन्दजी की उपस्थिति से आज दिल्ली एक पावन तीर्थ बन गया ह। दिल्ली वालो का यह सौभाग्य है कि इस महान् अवसर मे शामिल होने का उन्हे मौका मिला है। विद्यानन्दजी महाराज स्वय मे इतने प्रबुद्ध और गुणों से युक्त है कि आचार्य पद ही उनसे गरिमायुक्त हो गया है। उन्होने घोषणा की कि विश्व शांति के लिए आज आचार्य विद्यानन्द जी जसे महामानवो की नितान्त आवश्यकता ह। अहिसा का सदेश ही समूचे विश्व का कल्याण कर सकता ह।

धर्मस्थल (कर्नाटक) के श्री वीरेन्द्र हेगडे ने आचार्यश्री के चरणो मे अपनी विनयाजलि अर्पित करते हुए उन्हे सपूर्ण भारत मे धर्म प्रभावना का प्रसार करने वाला बताया। सभा अध्यक्ष साहू श्रेयास प्रसाद जैन ने कहा कि आचार्य विद्यानन्दजी का व्यक्तित्व महान् है। उन्होने ही अहिसा को विश्व धर्म के रूप मे प्रतिष्ठित किया है। हमे आशा है कि समाज उनके निर्देशन मे निरन्तर आध्यात्मिक पथ पर अग्रसर रहेगा।

प्रतिष्ठापना समारोह समिति के अध्यक्ष साहू अशोक कुमार जैन ने कहा कि मुनिश्री विद्यानन्दजी आचार्य पद की कसौटी पर खरे उतरते है। उनमे वे सभी गुण है जिनसे से सपूर्ण मानव समाज को अपने साथ लेकर चल सकते है। वे किसी एक मत के प्रति आग्रह नही रखते, बल्कि मत-मतान्तरो से ऊपर उठकर अनेकान्त दृष्टि से प्रत्येक दर्शन की ऐसी व्याख्या करते है जो शाति स्थापित करती है। इसी प्रकार, उनकी चर्चा भी बहुजन हिताय की उक्ति पर खरी उतरती है। उनका सपूर्ण आचरण जीवन ही लोक कल्याण के लिए है। यह महान् अवसर है जब हमे उनके रूप मे एक अनुपम आचार्य प्राप्त हुआ है।

पूर्व सासद श्री जे के जैन ने इस अवसर पर घोषणा की कि उत्तर और दक्षिण के बीच सेतु रूप मे कार्य करने वाले आचार्य विद्यानन्दजी ज्ञान के प्रसार के लिए महान् कार्य कर रहे है। उनके द्वारा स्थापित कुन्दकुन्द भारती सस्थान का प्रधानमत्री श्री राजीव गाधी ९ जुलाई को उद्घाटन करेगे। यह स्थान ज्ञान का केन्द्र होगा जहा विभिन्न भाषाओ – विशेषकर प्राकृत और पाली पर शोध कार्य होगा।

आकाशवाणी के श्री अशोक वाजपेयी ने आचार्य विद्यानन्दजी की साधना एव कर्म की विरुदावलि प्रस्तुत की, जिसमे बताया गया कि सारे समाज को एक ध्वज और प्रतीक प्रदान करने की परिकल्पना उन्ही की थी।

हजारो-हजारो गण्यमान्य व्यक्तियो, सस्थाओ के पदाधिकारियो, भारत के विभिन्न प्रान्तो से पधारे और दिल्ली नगर के असख्यात श्रद्धालुओ के आकाश तक को गुजायमान कर देने वाले जय-घोष के साथ मुनिश्री विद्यानन्द को आचार्य पद पर प्रतिष्ठित किया गया।

श्री कुन्दकुन्द भारती प्राकृत भाषा भवन का उद्घाटन

नई दिल्ली ९ जुलाई, १९८७। आचार्यश्री विद्यानन्दजी ने कहा कि प्राकृत भाषा देश की सबसे प्राचीन भाषा है। सरकार सारी भाषाओ के विकास के लिए बजट मे धन का प्रावधान करती है। इसलिए उसे प्राकृत भाषा के विकास के लिए भी अनुदान की व्यवस्था करनी चाहिए। श्री कुन्दकुन्द भारती द्वारा सचालित प्राकृत भाषा भवन के उद्घाटन के अवसर पर आचार्यश्री, एक विशाल सभा को सम्बोधित कर रहे थे। उन्होने प्रधान मत्री को यह भी सलाह दी कि वे धार्मिक समारोहो मे जाए। प्राचीन काल से ही शासक ऐसे समारोहो मे जाते रहे है।

आचार्य श्री ने आगे कहा – तपस्वी और शासन करने वाले शासक दोनो की स्थिति एक जैसी ही होती है। थोडे से भी प्रमाद के कारण तपस्वी की तपस्या समाप्त हो सकती है और राजनीति के कर्णधारो मे थोडा-सा भी प्रमाद आ जाए तो शासक वर्ग सकट मे पड सकता है। दोनो को ही पूर्ण रूप से सावधान रहना चाहिए।

प्रधान मत्री ने सभा मण्डप मे आने से पूर्व आचार्यश्री विद्यानन्दजी के साथ उनकी कुटिया मे अलग से विचार-विमर्श किया।

श्री कुन्दकुन्द भारती प्राकृत भाषा भवन का उद्घाटन करते हुए प्रधान मत्री श्री राजीव गाधी ने कहा कि आतकवाद और साम्प्रदायिकता को समाप्त करके ही शान्ति लाई जा सकती है। इस अवसर पर उन्होंने आचार्यरत्न देशभूषण पुस्तकालय का शिलान्यास भी किया। प्राकृत भाषा भवन का उद्घाटन कर्मवीर भाऊराव पाटिल शताब्दि वर्ष के निमित्त किया गया।

प्रधान मत्री ने कहा कि कुछ लोगो ने राजनीति मे शीर्ष पर पहुचने के लिए धर्म को एक औजार बना लिया है। हमे यह भावना खत्म करनी है नही तो देश कमजोर होगा।

उन्होने कहा कि किसी धर्म ने हिसा करना, लोगो को मारना और आग लगाना नहीं सिखाया। सिर्फ अहिसक समाज ही प्रगति कर सकता है।

प्रधान मत्री ने लोगो से कहा कि कोई भी ऐसी चीज देश मे नही खडी होने दे जिससे किसी तरह की कमजोरी आए। उन्होने कहा कि हममे इतना आत्म-विश्वास हो कि हम दूसरे के विचारों से डरे नही। आज जरूरत है आत्म-विश्वास बढाने की, तभी हम दूसरे के विचारा को सुन सकते है और समझ सकते है।

आज विज्ञान तेजी से आगे निकल रहा है और ज्ञान पिछड रहा है। उन्होने कहा कि आज जरूरत है कि ज्ञान आगे आए तभी मानव का कल्याण संभव है।

उन्होने जैन धर्म के इस सिद्धात को सामयिक बताया कि सबको जीवन दो। उन्होने कहा कि आज विश्व मे इसी भावना की जरूरत है। अगर हम विश्व मे अन्य प्राणियों को जीवन नही दे सकते तो मानव भी जिन्दा नही रह सकता। पर्यावरण की रक्षा के लिए भी यह जरूरी है, नही तो प्रकृति सबको खत्म कर डालेगी।

श्री गाधी ने इस बात पर चिन्ता प्रकट की कि अनुपयुक्त शिक्षा नीति, राजनीतिक भावना और आर्थिक दौड पुराने मूल्य खत्म कर रही है। उन्होने कहा कि आध्यात्मिकता ही आज देश को मजबूत रख सकती है। यह हमे किसी धर्म मे बाध कर नही रखती। उन्होने कहा कि प्राचीन भावनाओ और परम्पराओ के खोने से ही समस्याए बढी है। हमे इन्हे वापस भी लाना है और देश के बाहर भी ले जाना है।

सभा अध्यक्ष पूर्व सासद श्री जे के जैन ने जन मगल कलश की प्रतिकृति भेट करते हुए कहा – भगवान् बाहुबली के महामस्तकाभिषेक के अवसर पर सुख, शान्ति और सवृद्धि के प्रतीक रूप मे तत्कालीन प्रधान मत्री श्रीमती इन्दिरा गाधी ने जन मगल कलश का प्रवर्तन किया था, यह उसी की प्रतिकृति है।

सयोजक श्री रमेश चन्द्र जैन (पी एस जे) ने प्रधान मत्री का स्वागत किया और उनको आचार्यरत्न श्री देशभूषण महाराज के अभिनन्दन ग्रन्थ की प्रथम प्रति भेट की।

श्री कुन्दकुन्द भारती द्वारा सम्पादित एव प्रकाशित ग्रन्थ 'नियमसार' श्रीमती सरयू दफ्तरी ने प्रधान मत्री को विमोचन के लिए भेट किया।

वाचन से पाचन महान् है :

श्री कुन्दकुन्द भारती एलाचार्य मुनिश्री विद्यानन्द ने शास्त्र परम्परा के इतिहास पर प्रकाश डालते हुए बताया कि वर्तमान मे जहा अकलेश्वर है वहा सर्वप्रथम श्रुत पचमी की पूजा हुई थी। उस समय स्नान ध्यान के उपरान्त ही शास्त्रो का स्पर्श किया जाता था। प्रारम्भ मे दिगम्बर मुनि वनो मे वृक्षो के नीचे रहते थे। कालातर मे चैत्यवासी होने पर इन्होने स्वय ग्रथ रचना प्रारम्भ किया। आज अनेक शास्त्र उपलब्ध है और स्वाध्याय की परिपाटी मे भी वृद्धि हुई है। आशाधर सूरि और आचार्य कुन्दकुन्द ने लिखा है कि जैन धर्म जगत् का बन्धु, जगजीवन का हितकारक है। अमृतचन्द्र आचार्य ने 'अमृत कुम्भ' मे जैन धर्म का सार देते हुए लिखा है कि सम्यक् दर्शन, ज्ञान, चारित्र से आत्मा का प्रक्षालन कर मुक्ति प्राप्त की जा सकती है।

मुनिश्री ने आगे कहा 'श्रुत का भण्डार है द्वादशाग वाणी और श्रुत का अर्थ है सुना हुआ। सारा श्रुत कभी लिखा नही गया। मुनि परम्परा मे सनुकर ही श्रुत का अवधारण तीव्र स्मृति के कारण किया जाता रहा है। भगवान् महावीर के उपरान्त आचार्य धरसेन ने प्रतीत किया कि 'श्रुत' आगे नही चलेगा क्योकि अवधारण बुद्धि मद होती जा रही है। 'श्रुत' से शास्त्र रूप मे अवतरण ज्येष्ठ शुक्ल पचमी को हुआ और इसी युगातरकारी घटना की स्मृति मे श्रुत पचमी पर्व मनाया जाता है।

'श्रुत' पचमी के अवसर पर आयोजित एक विशाल सभा को सम्बोधित करते हुए मुनिश्री ने कहा – 'वाचन से पाचन महान् है'। जीवन मे शास्त्रो को उतारना ही ध्येय है। आगम का श्रवण मनुष्यमात्र कर सकता है। सच्चे देव ओर गुरु को जानने के लिए शास्त्र ही सर्वोपरि साधन है। हम व्रत ले कि रोज स्वाध्याय करेगे।

इस अवसर पर उपस्थित समुदाय ने पूज्य मुनिश्री को १९८७ का वर्षायोग दिल्ली मे करने के लिए प्रार्थना की ओर पूज्य मुनिश्रीजी ने स्वीकृति प्रदान की।

पर्युषण पर्व आत्म शोधन का पर्व है :

जैन धर्मावलम्बी अनेक पर्व मनाते है। जैन सस्कृति मे जितने भी पर्व है उन सब के पीछे आत्मा के विकास की दृष्टि रही है। पर्युषण पर्व आत्म शोधन का पर्व है। अपनी आत्मा के विकास के लिए चिन्तन-मनन करना पर्युषण पर्व की उपयोगिता है।

इस वर्ष यह पर्व आध्यात्मिक राष्ट्सत परम पूज्य आचार्यश्री विद्यानन्द मुनिराज के पावन सान्निध्य मे श्री कुन्दकुन्द भारती प्रागण, नयी दिल्ली मे २८ अगस्त १९८७ से ८ सितम्बर १९८७ तक मनाया गया। ७ सितम्बर को पूज्य आचार्यश्री का ध्यान पर विशेष प्रवचन हुआ और ८ सितम्बर १९८७ को क्षमावाणी पर्व के साथ पिछले १२ दिन से चले आ रहे समारोह का विसर्जन हुआ।

क्षमा आत्मा का अद्वितीय गुण है :

जीवन के प्रत्येक क्षेत्र मे क्षमा को धारण कर हम कठिनाइयो को हल कर सकते है तथा समाज और राष्ट्रीय स्तर पर ही नही, अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी मधुर सम्बन्ध स्थापित कर सकते है। जीवन मे हम प्रतिदिन अनुभव करते है कि अपने छोटे अथवा बडे अपराध के लिये यदि हम हृदय से क्षमा करते है तो तीव्र रोष का वातावरण भी स्नेहपूर्ण बन जाता है। यदि हम आध्यात्मिक दृष्टि से देखे तो अनन्त वैभवशाली आत्मा का क्षमा अद्वितीय और अक्षय गुण है।

भारत मे सभी सम्प्रदायो के लोग आपस मे मिल-जुलकर रहते है। हमारी सरकार भी धर्म-निरपेक्ष राज्य की घोषणा कर चुकी है। धर्म-निरपेक्ष राज्य से यह तात्पर्य नही है कि धर्मशून्य राज्य। धर्म-निरपेक्ष राज्य से तात्पर्य है कि यह एक ऐसा धर्मराज्य है जहा सभी धर्मों का समान आदर होता है और कोई एक धर्म वाला दूसरे धर्म वाले को बाधा नही पहुचाता।

ज्ञान से मृदुता बढ़ती है :

हृदय की कोमलता और नम्रता ही ससार मे श्रेष्ठ है। नम्रता रहने वाली चीज है। जिस पेड मे फल लगते है और जितने ज्यादा फल लगते हैं, उतना ही वह पेड झुकता जाता है। इसी प्रकार, मनुष्य मे जितना ज्ञान बढता है उसमे उतनी ही मृदुता बढती जाती है। हमारा हृदय जितना अन्तरंग और बहिरंग मे मृदुता को ग्रहण करता जायेगा उतना ही हमारे अन्दर से कषाय भावो का अभाव होता जायेगा। कषाय भावों का अभाव मोक्ष मार्ग है।

नम्रता से व्यक्ति विश्व मे आदर पाता है और अमर हो जाता है। मान कषाय ससार में सभी जीवो के लिए अहितकर है। नदी की बाढ घमण्ड से खडे वृक्षो को गिराती चली जाती है, परन्तु नदी के किनारे कोमल घास नम्रता मे झुक जाती है और बाढ उतरने पर सीधी खडी हो जाती है।

मायाचार से संसार बढ़ता है :

आर्जव का अर्थ परिणामो की सरलता है। जितना सरल हम अपने जीवन मे बन जायेगे उतना ही हम ईश्वरत्व के समीप होते जाएंगे। कोई भी व्यक्ति परमात्मा का भक्त तब तक नही हो सकता जब तक उसमे मायाचार है। जो लोग पर-पदार्थो मे

रुचि रखते हैं वे ससार मे भटकते रहते है और जिन्होने स्वय अपने पर और परमात्मा पर विश्वास किया, वे इस ससार मे मुक्त हो जाते हैं।

आज चारो ओर मायाचार भरा पडा है। भाई भाई से, पिता पुत्र से, मित्र मित्र से मायाचार करने मे नही हिचकिचाता। दैनिक जीवन मे जो पीडा है वह सब मायाचार के कारण ही है। मायाचार छोडकर ही मनुष्य जीवन मे सुख और शान्ति प्राप्त कर सकता है।

सत्य हर आत्मा में मौजूद है :

सत्य पर सारे तप निर्भर करते हैं। सत्य का पालन करने वाले इस ससार सागर से मुक्त हो जाते हे। सत्य श्रेष्ठ है और सदैव सत्य की ही विजय होती है। सत्य का पालन करने वालो को सुख की प्राप्ति होती है। सत्य भी वही उत्तम है जिससे शान्ति की स्थापना हो और सुख प्राप्त हो। यदि सत्य बोलने से कलह और अशान्ति को जन्म मिलता है तो ऐसे मे मौन रहना ही उचित है।

सत्य तो हर आत्मा मे मौजूद है, वह शाश्वत है। लेकिन सत्य की परिपूर्णता तो केवल परमात्मा मे ही है। हमे सत्यनिष्ठ बनने के लिए शास्त्रो का गहन अध्ययन करना होगा। तभी हम सत्य को समझ सकेगे और उसको जीवन मे उतार सकेगे। यदि हम सत्य का पालन करना चाहते है तो हमे अन्तरग से क्रोध, मान, माया और लोभ को हटाना होगा। तभी पूर्ण सत्य प्रगट होगा।

सत्यनिष्ठ व्यक्ति कभी किसी का तिरस्कार नही करता। धर्म के नाम पर लडने के बजाय सत्य शान्ति और मैत्री की स्थापना करता है।

चर्म धोने से कर्म नहीं धुलते :

शास्त्रो मे लोभ का सर्वोपरि पाप के रूप मे वर्णन किया गया है। हम अन्य कषायो को यत्किंचित् कम भी कर लेते है पर लोभ कषाय पर विजय पाना अत्यन्त कठिन है। वीतराग भगवान् के मन्दिर मे जाकर भी हम लोभ, लालच की बात करते है। उससे भी हम धन, सम्पत्ति, पुत्र और पौत्र की वाछा करते हैं। हीरे की दुकान पर कांच की तलाश हास्यास्पद लगती है।

शारीरिक स्वच्छता मे हम अपनी सारी उम्र गवा देते हैं। हमारा यह सारा प्रयत्न ठीक उसी तरह है जिस प्रकार स्नान के पश्चात् सिर पर धूल उछाल लेना। उत्तम शौच धर्म ही हमको अन्तरग पवित्र बनाने की प्रेरणा देता है। हमे ऊपरी स्वच्छता और श्रृगार को छोडकर इस अनमोल मनुष्य भव मे अन्तरग शोधन का व्रत लेना चाहिए। हमारा जप, तप, सयम सभी तब सार्थक होगे जब हमारी विषयासक्ति मन्द होकर हमको शुद्धोपयोग की प्राप्ति होगी।

दूसरो को सुधारने वाले डूब जाते है और अपने को सुधारने वाले अमर होते है। अत पर से दृष्टि हटाकर स्व पर दृष्टि लगाना ही श्रेष्ठ हे। चर्म धोने मे कर्म नही धुलते।

संयम से आत्म-कल्याण का मार्ग प्रशस्त होता है :

श्री कुन्दकुन्द भारती द्वारा दशलक्षण पर्व के अवसर पर आयोजित एक विशाल सभा को सम्बोधित करते हुए आचार्यश्री विद्यानन्द ने कहा – सयम इन्द्रियजन्य इच्छाओ पर अकुश के समान है। वह हमे हिसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह से बचाता है। भोजन मे सयम स्वास्थ्य रक्षा मे सहायक है। अभक्ष्य का त्याग और सीमित भोजन काया निरोगी रखता है। हमे प्रत्येक कार्य मे सयम का प्रयोग करना चाहिए। जिस प्रकार पानी छान कर पीते है उसी प्रकार हमे वचन भी छानकर बोलने चाहिए। यदि हमारे वचनो मे सयम नही होगा तो अनेक समस्याए खडी हो जायेगी। 'अन्धे के बच्चे अन्धे होते है' द्रौपदी के इन शब्दो ने महाभारत के युद्ध को जन्म दिया और १८ अक्षौहिणी सेना का ध्वस हो गया।

जिस प्रकार गन्ने को दबाने पर रस मिलता है, दूध को बिलौने पर मक्खन की प्राप्ति होती है, उसी प्रकार आत्मा की शुद्ध अवस्था तपस्या द्वारा प्राप्त की जाती है। सयम धारण करने से ही आत्म कल्याण का मार्ग प्रशस्त होता है।

तप ही मोक्ष मार्ग है :

इन्द्रियो का दमन करना और इच्छाओ का निरोध करना तप है। ससार मे इच्छाओ का कोई अन्त नही है। तप इन इच्छाओ पर नियन्त्रण करने मे सहायक है। बिना नियन्त्रण के यह जीवन ऐसा ही है जैसे बिना ब्रेक के मोटर गाडी। तप हमारी सस्कृति है। तप का अभिप्राय अपने को शुद्ध करना है। तप ही मोक्ष मार्ग है।

जैसे स्वर्ण को तपाने से उसका शुद्ध रूप निकल आता है, उसी प्रकार यह आत्मा अन्तरग और बहिरग तप द्वारा कर्मरूपी मैल का क्षय करके शुद्ध अवस्था को प्राप्त करता है। यह तप ही कल्याणकारी है और हर प्रकार के प्रमाद को नष्ट करने वाला है।

भगवान् की स्तुति, भजन आदि सुनना अथवा करना, शुद्ध और आवश्यक भोज्य पदार्थों को ही ग्रहण करना एव मादक पदार्थो का त्याग करना, किसी सुगन्ध पदार्थ की इच्छा न रखते हुये सुगन्ध और दुर्गन्ध दोनो मे समता भाव रखना और निराकुल भाव से थोडी बहुत देर मन, वचन और काय को निष्क्रिय करके आत्मचिन्तन करना, गृहस्थो के लिये सर्वोत्तम तप है।

परिग्रह दुःख का कारण है :

त्याग और दान ये दोनो अमृत तत्व को प्राप्त कराने मे सहायक हैं। जैनाचार्यों ने दान और त्याग को बहुत श्रेष्ठ कहा है। दान चार प्रकार का होता है औषध दान, शास्त्र दान, अभय दान और आहार दान। आचार्यश्री ने आहारदान और शास्त्र दान की सारगर्भित विवेचना करते हुए आचार्यरत्नश्री देशभूषण महाराज पुस्तकालय भवन को उदारतापूर्वक सहयोग और दान देकर एक आदर्श पुस्तकालय के रूप मे उसका निर्माण कराने की प्रेरणा दी। उन्होने कहा यह पुस्तकालय वैज्ञानिक और आधुनिक ढग से सुसज्जित, जैन वाङ्मय का एक ऐसा ग्रन्थालय हो जहा देश और विदेश के शोधकर्ता आकर शोध कार्य करे।

धन सचय कब तक करते रहेगे। यह तो इसी प्रकार है जैसे कोई नाव मे पत्थर डालता चला जाये तो वह नाव एक दिन डूब ही जायेगी। यदि दान नही किया तो ऐसे धन सचय का कोई लाभ नही। हमेशा कुए से जल निकालते रहने से कुए मे जल साफ रहता है और यदि जल निकालना बन्द कर दिया जाये तो पानी सडने लग जाता है और उसमे बदबू आने लगती है।

आकिचन्य धर्म मुक्ति का मार्ग है .

एक आत्मा के अतिरिक्त और कोई पदार्थ मेरा नही है। मै एक परमात्म स्वरूप वाला हू, ऐसा समझकर आत्मा मे लीन होना यही आकिचन्य धर्म है और मुक्ति का मार्ग है। मनुष्य जब आकिचन्य धर्म को समझ लेता है तो वह सब कुछ त्याग देता है।

जहा शरीर ही मेरा नही तो यह मकान, कपडे आदि मेरे कैसे हो सकते है। आत्मा के अतिरिक्त, आत्मध्यान के अतिरिक्त मेरा कुछ भी नहीं। मै तो अकेला आया था, जो शरीर लेकर आया था वह भी यही छोडकर जाना होगा। फिर शरीर के प्रति इतनी आसक्ति क्यो। दुनिया मे सभी कुछ सुलभ है, एक आकिंचन्य ही दुर्लभ है।

आकिचन्य धर्म की विवेचना करते हुए कहा – पर-पदार्थों से स्नेह आत्मा को डुबाने वाला है। जो व्यक्ति धर्म को न समझकर पर-पदार्थों से आसक्ति रखता है, वह मूर्छित व्यक्ति के समान है। पुण्य सोने की बेडी है और पाप लोहे की बेडी। परमात्मा की प्राप्ति इन दोनो को हटाने से ही सम्भव है।

क्रोध विष है, क्षमा अमृत :

क्षमा वही कर सकता है जो शक्तिमान् है। क्रोध वृत्ति को शान्त करने के पश्चात् ही क्षमा धारण की जा सकती है, क्योकि क्रोध, धैर्यरहित और विवेकशून्य होता है। मनुष्य विश्व के सभी प्राणियो मे सबसे अधिक विवेकी कहा गया है। अत क्षमा मनुष्य का सर्वोच्च धर्म है, क्षमा आत्मा का स्वाभाविक गुण है।

क्रोधाग्नि को क्षमा रूपी जल से ही शीतल किया जा सकता है। क्षमा जल का स्रोत है। क्रोध जहा स्वय को तथा दूसरे को जलाता है वहा क्षमा स्वय को और दूसरो को शीतलता प्रदान करती है। क्रोध विष है और क्षमा अमृत है। क्षमा धारण करने वाले का मन और मस्तिष्क दोनो शीतल रहते है।

श्रमण सस्कृति मे भगवान् महावीर ने कहा है कि अपनी आत्मा पर ही क्षमा करो। क्षमा एक महान् तत्वज्ञान है। दूसरे जीवो पर क्षमा करना सामान्य व्यावहारिक रूप है, पर सर्वोत्कृष्ट क्षमा तो अपनी आत्मा पर है। आज इस महापर्व पर यदि क्षमा भाव धारण करने का निश्चय करते है तो हमारा मनुष्य जीवन सफल हो जायेगा।

धर्म और समाज-कल्याण के कार्य एक दूसरे के पर्यायवाची है :

श्री कुन्दकुन्द भारती पूज्य आचार्य श्री विद्यानन्दजी ने कर्मवीर भाऊराव पाटिल जन्म शताब्दी वर्ष के अन्तर्गत आयोजित एक विशाल सभा को सम्बोधित करते हुए कहा कि देश की आजादी के लिए हजारो नही अपितु लाखो लोगो ने अपने-अपने क्षेत्र मे कार्य किया। लाखो ने बलिदान भी दिए। देश की बहुमुखी प्रतिभा की प्रगति के लिए अपने-अपने क्षेत्रो मे कार्य मे जुट गए। जनता को सुशिक्षित करने के लिए बहुत लोगो ने शिक्षा के क्षेत्र मे काम किया। वे जानते थे कि जब हमे आजादी मिलेगी उस समय सुशिक्षित व्यक्तियो की आवश्यकता होगी, उसके लिए अभी से कार्य करना होगा।

आचार्यश्री ने आगे कहा कि धर्म और समाज कल्याण के कार्य एक दूसरे के पर्यायवाची है। प मदन मोहन मालवीय जैसे महापुरुष ने अपने जीवन मे एक विशाल सस्था बनाई और वहा पर जब विश्वविद्यालय की स्थापना हुई तो १९१९ मे स्व श्री मोती लाल नेहरू ने वहा जैन धर्म के ग्रन्थो को भी पढाना चाहिए, यह स्वीकार कराया और आज भी वहा पर जैन ग्रन्थ पढाए जाते है।

स्व भाऊराव पाटिल ने भी इसी प्रकार महाराष्ट्र मे शिक्षा के क्षेत्र मे क्रान्तिकारी कार्य किया। वह शिक्षा शास्त्री थे। उन्होने ३० रुपये के वार्षिक बजट से कार्य आरम्भ किया और आज उनकी शैक्षणिक सस्थाओ का ३० करोड से अधिक का वार्षिक बजट है।

इस अवसर पर स्व कर्मवीर भाऊराव पाटिल के चित्र का अनावरण करते हुए केन्द्रीय ऊर्जा मन्त्री श्री वसन्त साठे ने कहा कि गरीबी हटाने के लिए आवश्यक है कि बेरोजगारी खत्म कर के लोगो को रोजगार दिलवाए जाए। उन्होने कहा कि भाऊराव पाटिल ने गरीबो के उत्थान के लिए उनको शिक्षित करने का बीडा उठाया था, क्योकि निरक्षरता समाज के लिए अभिशाप है।

नब्बे प्रतिशत दु ख गरीबी के कारण होते है। आज नौजवानो की नाराजगी का कारण बेरोजगारी है। ससाधन के अभाव के कारण उनमे आक्रोश व्याप्त है। देश मे सक्रिय चद मौकापरस्त तत्व इन नौजवानो को गुमराह करने का प्रयास करते है। अत इन नौजवानो को उचित कार्य दिलाना बहुत जरूरी है।

श्री साठे ने कहा कि यह दुर्भाग्य की बात है कि देश के अनेक महापुरुषो के महत्वपूर्ण कार्यों को हमने जानने का प्रयास ही नही किया। यही कारण है कि आज भी अनेक महापुरुषो के बारे मे हमें सही जानकारी नहीं है। उन्होंने आगे कहा कि यदि विज्ञान और अध्यात्म मे तारतम्य नही होगा तो जीवन ठीक से नही चल पाएगा। आज की दुनिया मे विज्ञान के साथ-साथ अध्यात्म का होना भी जरूरी है।

भाऊराव पाटिल जन्म शताब्दी समारोह समिति के संयोजक पूर्व सांसद श्री जे के जैन ने कहा कि भाऊराव पाटिल एक ऐसे महापुरुष थे जिन्होंने गरीब, असहाय बच्चों को शिक्षा देकर उनको आत्मनिर्भर बनाने का कार्य आरम्भ किया। उनके स्कूल, कालेज और छात्रावास मे बिना किसी भेदभाव के हर संप्रदाय के बच्चे एक साथ रहते थे, एक साथ भोजन करते थे।

अहिसा प्राणिमात्र का आत्म-धर्म है :

राजपुर रोड आचार्यश्री विद्यानन्दजी ने कहा – आज चातुर्मास समाप्त हो रहा है। इसे वर्षायोग भी कहते हैं, बरसात के दिनो मे एक ही स्थान पर रहकर धर्म-ध्यान करने से इसका नाम वर्षायोग पडा है। यह साधु और समाज दोनों के लिए ही धर्म-ध्यान का सुअवसर होता है।

मानव जन्म लेता है, जन्म के पश्चात् वह अपने संस्कारो के अनुसार, परिवार, वातावरण, परिस्थिति, देश, राष्ट्र आदि मे से अच्छाइयो व बुराइयों को अपनी दृष्टि से देख समझ कर सहज ही ग्रहण कर लेता है। आप किसको सर्वथा अच्छा अथवा किसको सर्वथा बुरा कहेगे यह कोई आसान नहीं है। तीर्थंकरो ने किसी भी वस्तु तत्व को सर्वथा एकान्तरूप से अच्छा या बुरा नहीं माना है।

अहिंसा भगवान् महावीर की दिव्यध्वनि है, चौबीस तीर्थंकरो द्वारा उपदिष्ट सम्यक् धर्म है और स्याद्वाद सिद्धान्त को मानने वाले कोटि-कोटि जैनों का धर्म है, किन्तु यह नहीं भूलना चाहिये कि अहिंसा प्राणिमात्र का आत्मधर्म भी है। यह वस्तु स्वरूप होने से सभी को प्रिय है। तीर्थंकरों और उनके अनुयायियो ने अहिसा को चारित्र रूप देकर मानव जाति का महान् उपकार किया है। अहिंसामूलक आचार से जैनाचार्यों और मुनियो ने मानव को हिसक पशुवृत्ति से ऊपर उठा कर मानवता की दयामयी मणिशिला पर प्रतिष्ठित किया है। अहिसा, माता की गोद के समान, समस्त प्राणियो को अभय प्रदान करने वाली है।

आज दीपावली है और भगवान् महावीर निर्वाण दिवस। दीपावली का यह महान् पर्व भगवान् महावीर के निर्वाण प्राप्त होने के उपलक्ष्य मे ही मनाया जाता है। यह पर्व किसी विशेष सम्प्रदाय का पर्व नहीं, यह तो समस्त विश्व का पर्व है। इस दिन हम लोग दीपक जलाते है और अपने घरो मे प्रकाश करते है। दीपावली पर्व यह बताता है कि अपने हृदय मे सत्य का प्रकाश करो और ज्ञान का दीपक जलाओ। साम्प्रदायिक सकीर्णता से दूर रहो। आज ही के दिन भगवान् महावीर ने अपनी आत्मा के सभी विभावो पर विजय प्राप्त करके आत्मा के वास्तविक शुद्ध स्वरूप को प्राप्त किया था।

ससार मे सारे पाप अधेरे मे होते है। इसलिये अधेरे को दूर करने के लिए तथा ससार मे प्रकाश करने के लिये दीपक जलाये जाते है। पर सच्चा दीपक वही जलाता है जो अपने अन्दर से क्रोध, मान, माया और लोभ को निकाल कर ज्ञान रूपी दीपक का प्रकाश करता है।

आज भगवान् महावीर के निर्वाण दिवस पर यदि हम अपनी बुराई को हटाकर अच्छी बातो को अपनाने की प्रतिज्ञा करे ता हमने सही अर्थों मे दीवाली मनाई है।

इस अवसर पर वर्षायोग समिति के मन्त्री श्री सतीश जैन ने कहा कि हम इस शताब्दी के लोग सौभाग्यशाली है कि हमको पूज्य आचार्यश्री विद्यानन्दजी जैसा गुरु मिला है, जो समय समय पर हमारा मार्ग दर्शन करते है। आचार्यश्री के बताए मार्ग पर चल कर ही हम सुख, शान्ति और सवृद्धि प्राप्त कर सकते है। इस चातुर्मास मे पूज्य आचार्यश्री के उपनगरो मे मगल विहार के समय तथा सभाओ मे लगभग पाच लाख से भी अधिक श्रोता पूज्य आचार्यश्री की अमृतवाणी सुनकर लाभान्वित हुए।

कार्याध्यक्ष श्री रमेश चन्द्र जैन ने आभार प्रगट करते हुए कहा कि हम हर साल दीवाली मनाते है, अपने अपने घरो मे दीपक जलाकर प्रकाश करते है पर जब तक हम अपने मन से मायाचार रूपी अधकार नष्ट नही करते तब तक बाहरी दीपक जलाने से कुछ लाभ नही होगा। हमें सामाजिक सगठन करके एक आदर्श समाज का निर्माण करना है। तभी हमारा दीपावली जैसा पवित्र पर्व मनाना सार्थक होगा।

ACHARYA SHRI VIDYANANDJI

The spiritual evolution of Acharya Shri Vidyanandaji can be said to have unfolded itself in clear stages of advance step-by-step. From the initial phase of a celibate set on the path of self-realisation he developed himself progressively to a position of a saint of total self abnegation. His initiation was inspired by the guidance of exemplary preceptors. The environment of his birth itself was auspicious - in a social milieu that produced the foremost Digambar Sadhus in contemporary society.

Born as Surendra on 22 April, 1925 in the Belgaum region of Karnataka, his first preceptor was his father, himself a temple priest. The boy's mother, in turn intoned to him devotional hymns from the time he could remember. The boy was precocious.

The versatile Surendra was fascinated by Mahatma Gandhi's non-violent struggle for national liberation and the elder citizens had to rescue him on many occasions from the hands of the police carrying out the orders of the British rulers. It is this streak of his yearning for liberation - liberation in the widest sense that had come to dominate the life of this great saint.

EARLY ASCETICISM

Freedom fighter Surendra who had come under the influence of saint Mahavir Kirti in 1944 subsequently took the oath of celibacy (Brahmacharya) from him. Joining the order of saints with the name Parshwa Kirti, the youthful saint began a study of Jain scriptures and practised long hours of penance.

Parshwa Kirti attracted the attention of Acharya Shanthi Sagarji Maharaj perhaps the greatest saint of the century. Asked to look after the Shanti Sagar Ashram, he turned it into a model institution.

The confines of Karnataka could hardly contain Parshwa Kirti's unbounded enthusiasm of spiritual quest nor his thirst for learning. He travelled to Bombay and from there to Delhi. It was here that he was ordained as a Digamber ascetic by Acharya Deshbhushan Maharaj. This signified Parshwa Kirti's ascent to the summit of the saintly order. His spiritual glow acquired ever expanding dimension as Muni Vidyananda undertook walking tours to vast tracts of Rajasthan and Uttar Pradesh as a Digambar saint is enjoined to travel only on foot.

People in thousands flocked to listen to the sermons of this apostle of "Universal Religion". The Congregation comprised followers of all faiths. In Meerut where communal disorder had been spreading, Muni Vidyananda's message brought the healing touch. Harmony and sanity were restored in the area that remains grateful to him for the alchemy of brotherhood which he fostered through his discourse.

In contemporary tradition, Muni Vidyananda became the first Digambar saint to set foot on the snow bound Himalayan terrain. At Badrinath, he gave the clarion call of Universal Religion.

Among the manifold events which helped to arouse the moral consciousness in the land through Muni Vidyananda's efforts was the 2500th anniversary of Mahavir Nirvan celebrated throughout India in 1974. The itinerary of the Dharma Chakra all over India was a brain-child of the saint who had conceived it as a symbol representing Universal Religion.

ELACHARYA TO ONE AND ALL

In the Jaina heirarchy of ascetics "Elacharya" is a distinction conferred on a pre-eminent spiritual leader. The erstwhile Upadhyaya Muni Vidyananda attained this position graduating over years of spiritual evolution. It was a recognition of learning and exemplary attainments.

RASHTRA SANTH

The distinguished saint-philosopher who has made a deep study of comparative religion is looked upon as the apostle of Universal Religion. The Universality of Religion preached by him won for him the following of an increasing number of devotees of all faiths. He came to be recognised throughout the country as Rashtra Santh.

Universal brotherhood, social amity and a spirit of understanding and friendliness amongst all without distinctions of caste and creed are the main themes of his gospel that transcends the narrow barriers of controversy or rigid dogmas. His accent is on progress in self-realisation in which every individual should be helped on the path of progress. The series of social welfare programmes which have taken shape at centres sanctified by his message bear testimony to the impact of his reiteration on the need to make life worthwhile for the distressed and the destitute in society.

MILE STONES

The widely acclaimed epochal event of the millennial Maha Mastakabhishek of Lord Bahubali—Gommateshwara at the famed pilgrim centre of Shravanabelagola (Karnataka) in 1981 was a notable milestone of spiritual endeavour that took shape under the guidance of the pre-eminent saint. It was to take part in the commemorative worship of Bahubali — the first to attain liberation from the tangle of life and death in the present time cycle that the Elacharya had trudged back southwards over a distance of more than two thousand miles. It was in the course of his walking tour spanning three years accross some half a dozen states that the saint radiated his message of love and tolerance to the lakhs of people who came to listen to his discourses.

The Maha Mastakabhishek marked the one thousandth year of the installation of the world's tallest monolith statue of Lord Bahubali — the prince who had given up his kingdom in favour of the path of renunciation in the quest of supreme peace. The Elacharya turned the occasion of this grand worship to inspire the launching of several schemes of social welfare. This was in implementation of his teaching that the true message of religion is the alleviation of misery and unhappiness.

His journey across Karnataka was also an occasion of installation of a 39-foot Gommateshwara statue at Dharmasthala — the renowned confluence of all religions. The saint in his discourses had been commending the example of this spiritual centre that cuts across differences of castes and communities dispensing charities to all in various spheres.

In the course of his return to the north, Elacharya Muni Vidyanandji guided the installation of the elegantly carved 21 foot Gommateshwara statue in marble on a hill top on the outskirts of Indore city. Gommatagiri as the sacred spot is now known, has come to be a symbol of integration between the South and North. The celebration itself was an occasion of the coming together of followers of diverse faiths. The launching of literacy and welfare schemes marked the ceremonies at the turn of the year 1986. Gommatagiri, initially spotted by the Elacharya himself on his journey southwards, is being developed as a centre of spiritual pursuits and studies.

KUND KUND BHARATI

On his return to the capital, the scholarly saint turned his attention to the completion of his Kund Kund Bharati project, founded in the hallowed memory of Acharya Kunda Kunda — a foremost preceptor of the early years of the present era. This institution is being designed primarily as a centre of research and study of the classics, Prakrit as well as other manuscripts and ancient treatises.

ACCLAIM

The Rashtra Sangh's precepts and the practice of Universal religion have won him the esteem and devotion of scholars and statesmen, educationists and administrators and generally of the

leaders of society The late Prime Minister, Smt Indira Gandhi who had sought the saint's blessings remained deeply impressed by his spiritual insight and pragmatic outlook She had on more than one occasion expressed her high appreciation of his service to the cause of national integration

Eloquent tributes were paid to this apostle by the President Shri R Venkataraman (then Vice-President) at the 1986 Chaturmas (Monsoon Retreat) consecration in his honour held in New Delhi These were his words —

'Muni Sri as he is widely and respectfully addressed has traversed the length and breadth of India on foot and has acquired a special place for himself in the hearts and minds of the Devout He has travelled from Badrinath to Shravanabelagola and has therefore seen the rich diversity of our people and their traditions But, he has also seen in his journeys, something of the inner lives of our people, their innate kindness to all beings and devotion to God His tours have served to revive those finer instincts of our people Muni Sri represents the tradition of our ancient Acharyas, Tirthankaras, Sharmanas and sages who by means of their yathras have preserved and strengthened the faith of our people in spiritual values in right conduct and in Ahinsa Paying a tribute to Muni Sriwho has kept this tradition alive is therefore a good fortune that I value

STUDY & RESEARCH

By the turn of the year 1987 Rashtra Santh Muni Vidyanandji had covered about seventy five thousand kilometres across the country on foot He had written more than 30 books besides editing and translating into Hindi of Acharya Kunda Kunda's celebrated treatise the Samayasar Several other books have been written and published under his guidance The Muni Maharaj has so far made a study of eighteen thousand treatises and books He is engaged continuously in study and research of scriptures and religious as well as philosophical treatises

SUPREME STATUS — ACHARYA

The eminent ascetic was elevated to the supreme status of Acharya of the MULA SANGH at an impressive ceremony held in the capital on June 28 1987 He ascended the spiritual seat Acharya Ratna Deshbhushan Maharaj who had nominated the Elacharya as his successor before entering sallekhana

The ascension ofthe eminent saint-philosopher to the lofty position sanctified in this century by the great sage Acharya Shanti Sagar Muni Maharaj was witnessed by a galaxy of ascetics and sadhvis of all denominations and a congregation of laity numbering over twenty thousand representing all parts of the country It was a unique function taking place in Delhi for the first time in the century

PRAKRAT BHASHA BHAVAN NEW DELHI

The opening of the Prakrat Bhasha Bhavan by Prime Minister Shri Rajiv Gandhi on July 9, 1987 in the presence of Acharya Shri Vidyanandji heralded the expansion of scholastic pursuits at the Shri Kund Kund Bharati The Prime Minister also laid the foundation ofthe Acharya Ratna Deshbhushan Library on the occassion

Shri Rajiv Gandhi sought the blessings of the Muni Maharaj at the exclusive audience he had with His Holiness

The Prime Minister commended the work being taken up by the Prakrat Bhasha Bhavan under the inspiring aegis of Acharya Shri Vidyanandji

ACHARYA SHRI VIDYANANDJI

Birth	April 22, 1925
Birth Place	Village Shedwal, Distt Belgam (Karnataka)
Father	Shri Kalappa Upadhayaya
Mother	Smt Saraswati Bai
Childhoot Name	Surendra Kumar
Education	Jain Gurukul Shedwal (Belgam) Study of Jain and other Literature and manuscripts in different parts of the country and deep study and analysis of different religions at Calcutta
Muni Diksha	From Acharyashri Deshbhushanji in Delhi on July 25 1963
Eilacharya	In Delhi on November 17 1978
Acharya	In Delhi June 28th, 1987 visited all over India on foot about 75 000 miles uptill now

About the publication
Artistically printed on Art Paper size 9" × 11
250 pages photographs 300 and full cloth binding

It has been considered that it would be eminently desirable to bring out a Pictorial to acuaint the people at large about the saga of the endeavours of Acharya Shri Vidyanandji who all through had been guided by the objective of social welfare in a meaningful way Acharya Shri Vidyanandi Varshayog Samiti", Delhi, therefore decided to undertake this work for the benefit of one and all The idea was to highlight the main aspects of the eminent saint's career from childhood to the present and also to incorporate in it the details of his annual monsoon retreats

This has been by no means an easy task since the entire our country has been the stage of his endeavours He had been constantly on the move in the course of his trek onfoot Collections of photographs depicting his country-wide sojourn has been an ardous task But thanks to the willing cooperation of all concerned this publication has been happily fulfilled

Exerpts of the Acharya Shri's discourses have been published now and then But there has been no systematic and organised compilation like the one now completed Select photographs of the Acharya Shri From childhood to the present are contained in this compilation The milestones of the eminent saint's dedicated and painstaking efforts are suitably depicted in its pages Each and every detail here serve to underscore the earnestness of his renunciation with its focus on universal good Besides an album of photographs, the compendium includes a list of places visited by the Acharya Shri as well as the compilation of his discourses Going through its pages the reader is bound to be delighted with the feeling of one who sought gold but happened to strike gold of surpassing lustre It is indeed an offer of a bouquet of flowers of varied hue with its fragrance spreading far and wide, enlightening one and all and illumining for them the path of a virtuous life Its pages recreate for the reader the image of a majestic Ganga nourishing all around with the life-giving water of spiritual sustenance

Acharya Shri has endowed his audience everywhere with a gospel transcending the narrow barriers of caste and dogma, preaching sermons of solace to our entire society In bringing out this publication we do not in the least redeem the debt of gratitude that we owe him, for, what we owe him is so vast that it is bound to remain for ever unredeemable We only seek to offer at his feet a humble token of our gratitude for his continuing benediction We trust that one and all will imbibe the wholesome inspiration provided by this volume so that our humble efforts are rendered worthwhile

पूज्य आचार्यश्री विद्यानन्दजी वर्षायोग समिति, दिल्ली
कार्यकारिणी एवं सहयोगी

अध्यक्ष

साहू श्री अशोक कुमार जैन

कार्याध्यक्ष

श्री रमेश चन्द्र जैन, पी एम जे

उपाध्यक्ष

श्री नानगराम जैन, ज्वैलर्स

श्री प्रकाशचन्द्र जैन, ज्वैलर्स

श्री कश्मीर चन्द्र गोधा, ज्वैलर्स

श्री राजेन्द्र प्रसाद जैन, कम्बोजी

मन्त्री

श्री सतीश जैन, आकाशवाणी

कोषाध्यक्ष

श्री नरेन्द्रकुमार जैन, ज्वैलर्स

विशिष्ठ सदस्य

श्री विनोद कुमार जैन, फ्रेन्डस कालोनी
साहू श्री श्रेयास प्रसाद जैन, बम्बई
श्रीमती सरयू दफ्तरी, बम्बई
श्री सुरेश चन्द्र जैन, एक्सपोर्ड हाऊस
श्री सुरेन्द्र कुमार जैन, जौहरी
श्री ओम प्रकाश जैन, कागजी
श्री प्रेम चन्द्र मादीपुरिया
श्री सतीश चन्द्र जैन, बसन्त विहार
श्री रवि मोहन, लक्ष्मी मोटर कम्पनी
श्री हेम चन्द्र जैन, शक्ति नगर
श्री सुरेन्द्र कुमार जैन, न्यू फ्रेन्ड्स कालोनी
श्री कैलाश चन्द्र जैन, जयको
श्री महेश चन्द्र जैन, अशोक विहार
श्री महेन्द्र कुमर जैन, निगम पार्षद
श्री रमेश चन्द्र जैन, न्यू रोहतक रोड
श्री सतीश चन्द्र जैन, ज्वालापुर
श्री पद्म प्रसाद जैन, सुप्रीम होजरी
श्री विनोद कुमार सेठी, नया बाजार
श्री ब्रिज किशोर जैन, पहाडीधीरज
श्री एम के धर्मराजा, पश्चिम विहार
श्री नेमी चन्द्र जैन लाजपत नगर
श्री चक्रेश कुमार जैन दरियागज
श्री कैलाश चन्द्र जैन, कागजी
श्री देवेन्द्र कुमार जैन, ज्वैलर्स
श्री सुरेश चन्द्र जैन, डिप्टी गज
श्री सागर चन्द्र जैन कागजी
श्री देव कुमार जैन, ग्रेटर कैलाश कालोनी

1987

PUBLISHED : PRANIMATRA KO SANMARG KE PRERAK ACHARYA SHRI VIDYANAND JI KE TAPASWI JIWAN KI CHITRAMAY JHANKI" BY ACHARYA SHRI VIDYANAND JI VARSHAYOG SAMITI, 7A, RAJPUR ROAD, DELHI 110054,
PRINTED AT CRESCENT PRINTING WORKS PRIVATE LIMITED, NEW DELHI 110001